श्रीमद्भगवद्गीता हिंदी भक्ति काव्य

(हिंदी भावार्थ सहित)

हिंदी काव्यान्तरण

डॉ यतेंद्र शर्मा

श्री राम कथा संस्थान, ऑस्ट्रेलिया, ६०२५

श्री राम कथा संस्थान उद्देश्य

- श्री राम कथा संस्थान भगवान् स्वामी श्री रामानंद जी महाराज (१४वीं शताब्दी) की शिक्षाओं पर आधारित एक सनातन वैष्णव धार्मिक संस्था है।
- श्री संस्थान का सिद्धांत धर्म, जाति, लिंग एवं नैतिक पृष्ठभूमि के आधार पर भेदभाव रहित है। 'हरि को भजे सो हरि को होई' संस्थान का मूल मन्त्र है।
- श्री संस्थान का मानना है कि शुद्ध हृदय एवं निःस्वार्थ भाव भक्ति ईश्वर को अति प्रिय है। सभी प्रभु-भक्त एक दूसरे के भाई बहन हैं।
- ब्रह्म मनोभाव: भगवान् श्री राम, माता सीता एवं उनके विविध अवतार ही सर्वोच्च ब्रह्म हैं। वह सर्व-व्याप्त एवं विश्व के सरंक्षक हैं।
- आत्मा मनोभाव: आत्मा का अस्तित्व सर्वोच्च ब्रह्म के परमानंद पर निर्भर है। आत्मा को सर्वोच्च ब्रह्म ही निर्देशित एवं प्रबुद्ध करते हैं। श्री राम, माता सीता एवं उनके अवतार ही जीवन का अंतिम उद्देश्य मोक्ष दिलाने में समर्थ हैं।
- माया मनोभाव: माया प्रकृति के तीन गुण - सत, रज और तमस, के प्रभाव से प्राकट्य होती है। माया को सर्वोच्च ब्रह्म ही नियंत्रित करने में समर्थ हैं। सर्वोच्च ब्रह्म पर ध्यान केंद्र करने से माया का विनाश होता है, और जन्म-मृत्यु के चक्र से छुटकारा मिल मोक्ष की प्राप्ति होती है।
- श्री संस्थान इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु निरंतर सनातन धार्मिक पत्रिकाएं, पुस्तकें, पुस्तिकाएं, काव्य ग्रन्थ आदि की रचनाएं एवं प्रकाशन करता है। साथ ही, समय समय पर श्री राम एवं अन्य धार्मिक कथाओं के संयोजन का भी प्रयास करता रहता है।

श्री राम कथा संस्थान
३५, मायना स्ट्रीट, हिलरीज़, ऑस्ट्रेलिया – ६०२५
Web https://shriramkatha.org

श्रीमद्भगवद्गीता हिंदी भक्ति काव्य

(हिंदी भावार्थ सहित)

हिंदी काव्यान्तरण

डॉ यतेंद्र शर्मा

प्रकाशक

श्री राम कथा संस्थान पर्थ

३५ मायना स्ट्रिीट, हिलरीज़, ऑस्ट्रेलिया, ६०२५

Website: https://shriramkatha.org

Email: srkperth@outlook.com

सारणी

अस्वीकरण 5
प्रार्थना 7
गुरु चरण वंदन 9
गणपति वंदन 11
माँ सरस्वती वंदन 13
श्री कृष्ण वंदन 15
श्रीमद्भगवद्गीता माहात्म्यम् 19
श्रीमद्भगवद्गीता महात्म्य अनुसंधान 25
श्रीमद्भगवदगीता हिंदी भक्ति काव्य 35
ॐ नमो भगवते वासुदेवः 35
अध्याय १ : अर्जुनविषादयोग: 35
अध्याय २: साङ्ख्ययोगः 47
अध्याय ३: कर्मयोग: 65
अध्याय ४: ज्ञानकर्मसन्यासयोग: 75
अध्याय ५: सन्यासयोग: 85
अध्याय ६: ध्यानयोगः 93
अध्याय ७ : ज्ञानविज्ञानयोग: 103
अध्याय ८: अक्षरब्रह्मयोग: 111
अध्याय ९: राजविद्याराजगुह्ययोग: 117
अध्याय १०: विभूतियोग: 125
अध्याय ११: विश्वरूपदर्शनयोग: 135
अध्याय १२: भक्तियोग: 147
अध्याय १३: क्षेत्र-क्षेत्रज्ञविभागयोग: 151
अध्याय १४: गुणत्रयविभागयोग: 159
अध्याय १५: पुरुषोत्तमयोग: 165
अध्याय १६: दैवासुरसम्पद्विभागयोग: 171
अध्याय १७: श्रद्धात्रयविभागयोग: 177
अध्याय १८: मोक्षसंन्यासयोग: 183
आरती श्रीमद्भवद्गीता 201
कवि: डॉ यतेंद्र शर्मा 202

अस्वीकरण

इस काव्य पुस्तक की सामग्री जनहित एवं सामान्य ज्ञान के लिए प्रदान की गई है| हमारा तद्भाव पाठक को कोई परामर्श देने का नहीं है| इस काव्य पुस्तक की सामग्री किसी भी तरह से विशिष्ट परामर्श का विकल्प नहीं है| आपको इस ज्ञान के आधार पर कोई भी निर्णय लेने से पहले प्रासंगिक निपुण या विशेषज्ञ का परामर्श प्राप्त कर लेना चाहिए|

इस काव्य पुस्तक के रचयिता, प्रकाशक और उनका कोई प्रतिनिधि किसी भी विषय में इस काव्य पुस्तक से सम्बंधित कोई प्रत्याभूति नहीं लेते| इस काव्य पुस्तक का पठन-पाठन-गायन-श्रवण पाठक स्वयं के संज्ञान से दायित्व ले कर ही करें|

यद्यपि हमने इस काव्य पुस्तक में सटीक ज्ञान देने का पूर्ण प्रयास किया है लेकिन किसी भी प्रकार कोई त्रुटि अथवा अकृता रह गई हो तो उसके लिए रचयिता एवं प्रकाशक क्षमा प्रार्थी हैं और इसके परिणाम स्वरूप किसी विधि, सामाजिक, धार्मिक, इत्यादि का दायित्व नहीं लेते|

प्रार्थना

भगवान् श्री कृष्ण ने श्रीमद्भगवद्गीता में स्वयं कहा है कि जो मनुष्य श्रद्धा-युक्त और दोष-दृष्टि से रहित होकर श्रीमद्भगवद्गीता का पठन-श्रवण करेगा वह सब पापों से मुक्त होकर उत्तम कर्म करने वाले श्रेष्ठ पुरुषों के समान शुभ लोकों को प्राप्त होगा| (१८-७१)| प्रभु यह भी कहते हैं कि जो मनुष्य मेरा यह कार्य करेगा (श्रीमद्भगवद्गीता के पठन-श्रवण का कार्य) उसके समान मुझे कोई प्रिय नहीं है और उससे बढ़कर मेरा प्रिय दूसरा कोई भविष्य में भी नहीं होगा |(१८-६९)| इसका तात्पर्य है कि प्रभु ने अपने मुखारविंद से यह स्पष्ट कर दिया है कि कलियुग में भव-सागर से तरने का सब से सहज उपाय प्रभु का स्मरण करते हुए श्रीमद्भगवद्गीता का पठन-पाठन-गायन-श्रवण करना है| भगवान् श्री कृष्ण और महाभक्त श्री अर्जुन के मध्य हुए संवाद को इस श्रीमद्भगवद्गीता के रूप में महर्षि वेद व्यास जी ने बड़े ही सुन्दर ढंग से संस्कृत काव्य में रचा है| जन साधारण को संस्कृत ज्ञान की अनभिज्ञता एवं उसके पढ़ने में कठिनाई होने के कारण ब्रह्म स्वरूप गुरुदेव की ऐसी इच्छा थी कि इस अति पावन ग्रन्थ को हिंदी काव्य में अनुवादित किया जाए ताकि जन साधारण के लिए इसका पठन-पाठन-गायन-श्रवण और इसका भावार्थ सरलता से समझ में आ जाए| मेरा सौभाग्य है कि उन्होंने मुझे इस कार्य हेतु समर्थ पाया और मुझे ऐसा करने का आदेश दिया|

मैं कोई प्राकृतिक कवि तो नहीं हूँ लेकिन भगवद-भक्ति में प्रभु की काव्य द्वारा महिमा का गुण-गान करने का प्रयास अवश्य करता रहता हूँ| श्रीमद्भगवद्गीता को हिंदी काव्य में रचने के लिए मैंने अपना पूर्ण हृदय और आत्मा समर्पित कर दी है| मैं आशा करता हूँ कि मेरा यह प्रयास पाठकों को अवश्य रुचिकर लगेगा| श्रीमद्भगवद्गीता को मैंने हिंदी काव्य सिद्धांत का अनुसरण करते हुए मूल संस्कृत ग्रन्थ श्रीमद्भगवद्गीता के श्लोकों का यथार्थ भावार्थ रखते हुए उन्हें छंद रुप में प्रस्तुत करने का अथक प्रयास किया है| यहां यह शंका हो सकती है कि श्रीमद्भगवद्गीता का तो अनेक अति उच्च कोटि के महापुरुषों ने हिंदी एवं विश्व की कई भाषाओं में अनुवाद ही नहीं उस पर विस्तृत टीकाएँ की हैं, फिर इस महाकाव्य को हिंदी छंद में रचने की क्या आवश्यकता हो गई?

गुरुदेव की प्रेरणा से इसका समाधान सहज है| मूल संस्कृत में रचित श्रीमद्भगवद्गीता एक काव्य ग्रन्थ है जो महर्षि वेद व्यास जी ने संस्कृत भाषा में लिपिबद्ध किया है| प्रभु के समीप पहुँचने के लिए हृदय की पुकार आवश्यक है और हृदय की पुकार भक्ति

काव्य पठन-पाठन-गायन-श्रवण से ही होती है| तभी सनातन धर्म के ही नहीं अपितु सभी धर्मों के धर्म ग्रन्थ काव्य में ही रचित हैं| काव्य रूप में भक्ति ग्रन्थ के पठन-पाठन-गायन-श्रवण से हृदय में अति आनंद की अनुभूति होती है तथा वातावरण में विशेष तरंगें पैदा होती हैं जिससे मनुष्य की आत्मा की पुकार प्रभु के समीप तुरंत पहुँच जाती हैं| प्रभु प्रसन्न होते हैं तथा भक्त को अपने हृदय में वास देते हैं| इस लक्ष्य को मध्य रखते हुए इस महान मूल संस्कृत काव्य ग्रन्थ श्रीमद्भगवद्गीता का हिंदी काव्य छंद में अनुवाद किया गया है| हिंदी काव्य सिद्धांत के अनुसार छंद एक ऐसा काव्य रूप है जिसे किसी भी शास्त्रीय संगीत के राग में गाया जा सकता है| अतः मैंने इस महान ग्रन्थ को हिंदी काव्य के सिद्धांत के अनुसार छंद में रचने का प्रयास किया है|

इस हिंदी छंद काव्य का रचयिता, मैं, एक साधारण गृहस्थ प्राणी हूँ, कोई सनातन धर्म का गहन ज्ञानी नहीं| मुझ में इतनी सामर्थ्य नहीं कि मैं प्रभु के मुखारविंद से निकले हुए सर्वगुह्यतम वचनों पर कोई टीका टिप्पणी कर सकूं| हाँ, मेरा यह अत्यंत सौभाग्य अवश्य रहा है कि मैंने श्रीमद्भगवद्गीता का ज्ञान गुरुदेव की आज्ञा से परम पावन ब्रह्म स्वरूप स्वामी श्री रामसुखदास जी महाराज के प्रवचनों एवं उनकी पुस्तकों से प्राप्त किया है| संतों के मुख से सुना है कि स्वयं भगवान् श्री कृष्ण ने परम पावन ब्रह्म स्वरूप स्वामी श्री रामसुखदास जी महाराज के समक्ष प्रकट होकर श्रीमद्भगवद्गीता का ज्ञान उन्हें समझाया था जिसके फल स्वरुप उन्होंने इस महाकाव्य पर टीका की थी| अतः यहां टीका के रूप में मैंने परम पावन ब्रह्म स्वरूप स्वामी श्री रामसुखदास जी महाराज के शब्दों को ही दुहराया है| मेरा ऐसा मानना है कि यह हिंदी काव्य ग्रन्थ सभी के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगा| इसके पठन-पाठन-गायन-श्रवण से प्रभु को प्रसन्न कर भक्त परमात्म-तत्व को प्राप्त करेंगे| इस हिंदी काव्य में भी मूल संस्कृत काव्य के अनुसार ७०० छंद हैं| अगर एक छंद का भी प्रति दिन गायन किया जाए तो अवश्य ही प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त होगा|

ॐ शांतिः शांतिः शांतिः|

डॉ यतेंद्र शर्मा,

श्री राम कथा संस्थान,

११ दिसम्बर २०२४ गीता जयंती

गुरु चरण वंदन

हैं आधार जीवन गुरु चरन |
करें उन्हें हम शत शत नमन ||
वही समर्थ सम हरि भव-तारन |
कृपा से जिन की हों दर्श भगवन ||
धर हृदय मम गुरुदेव चरन |
करूं प्रयास यह काव्य लेखन ||
खोलो गुरुवर मेरे बंद नयन |
हो सके दैव्य पूर्ण मेरा मन ||
हो न सके गुरु बिन अवबोधन |
बिन उन कृपा है निष्फल जीवन ||
करें वह सफल मेरा यह मन्मन् |
करूं मैं करबद्ध उनसे निवेदन ||

भावार्थ: *जीवन के आधार गुरुदेव के चरणों को हम शत शत नमन करते हैं| वही प्रभु के समान भव-सागर के तारणहार हैं| उन्हीं की कृपा से प्रभु के दर्शन होते हैं| गुरुदेव के चरणों को अपने हृदय में धारण कर मैं इस काव्य रचना का प्रयास कर रहा हूँ| वह मेरे बंद नेत्रों को खोलें (अज्ञानता दूर करें) जिससे मेरा हृदय दिव्यता पूर्ण हो सके| गुरु के बिना जीवन में ज्ञान नहीं मिलता| उनकी कृपा के बिना जीवन निष्फल है| वह मेरा मनोरथ पूर्ण करें, यह मेरा उनसे करबद्ध निवेदन है|*

गणपति वंदन

जय जय जय श्री पार्वती नंदन |
करूँ मैं करबद्ध आपका वंदन ||
करो दूर प्रभु तम जो मेरे मन |
हो सके प्रकाश मेरे जीवन ||
हो तुम प्रथम पूज्य श्री भगवन |
मिले शुभ फल जब करें सुमरन ||
बहती सुख धारा भक्तों के मन |
करें वह जब आपका पूजन ||
करूं मैं ईश गणनायक वंदन |
दो आशीष मुझे हे दिव्य भगवन ||
कृपा से आपकी हो सफल मन्मन् |
हो सफल प्रयास यह काव्य रचन ||

भावार्थ: *श्री पार्वती पुत्र, आपकी जय हो, जय हो, जय हो| मैं करबद्ध आपकी वन्दना करता हूँ | मेरे हृदय के अन्धकार को दूर करो ताकि मेरे जीवन मैं प्रकाश हो सके | आप ही प्रथम पूज्य भगवान् हो| आपका स्मरण शुभ फलदायी है| जब आपका पूजन*

होता है तब भक्तों के हृदय में सुख की धारा बहती है। हे प्रभु गणपति, मैं आपका वन्दन करता हूँ। हे दिव्य देवता, मुझे आशीष दीजिए। आपकी कृपा से मेरे विचार सफल हों। मेरा यह काव्य रचना का प्रयास सफल हो।

माँ सरस्वती वंदन

करूं मैं माँ विद्या देवी वंदन |
दो माँ मुझे तुम ज्ञान पावन ||
हे माँ पद्माक्षी चन्द्रवदन |
तुम्हीं जननी धर्म सनातन ||
कीं तुम्हीं वेद पुराण रचन |
पड़े हैं त्रिभुवन कमल सम चरन ||
होतीं सहायक तुम चतुरानन |
करते वह जब यह सृष्टि सृजन ||
खोया हूँ भव मीर आवर्तन |
दो बुद्धि माँ हो धन्य मम जीवन ||
हों सदा मम कर्म तन मन पावन |
लिख सकूं मैं काव्य यह महन ||

भावार्थ: *हे विद्या की देवी, मैं आपका वंदन करता हूँ| माता, मुझे पवित्र ज्ञान दीजिए| हे कमल के आसन पर सुशोभित गौर वर्ण माँ, आप ही सनातन धर्म की जननी हैं|*

आपने ही वेद पुराणों की रचना की है| तीनों लोक आपके कमल सम चरणों में पड़े हैं| जब ब्रह्मदेव सृष्टि का सृजन करते हैं, तब आप उनकी सहायता करती हैं| मैं भव-सागर की भंवर में खोया हुआ हूँ, माँ मुझे बुद्धि दो, जिससे मेरा जीवन धन्य हो| मेरे कर्म, तन, मन सदा शुद्ध हों | मैं इस महान काव्य की रचना कर सकूं|

श्री कृष्ण वंदन

हे वासी नंदगांव नन्द नंदन |
हे श्री राधा स्वामिन वृंदावन ||
रहें सदैव आपके पग मेरे मन |
करूँ समर्पण मैं तन मन धन ||
हे कृष्ण गोविन्द हरि नारायन |
अच्युत वासुदेव श्री भगवन ||
हे रक्षक हरि सुता हव्यवाहन |
करो कृपा तुम हम दीन निर्धन ||
किए तुम वध अनेक असुर दुष्ट जन |
सम कंस रजक सृगल कालयवन ||
की भू मुक्त तुम अधर्म आचरन |
हो हेतु विश्व आनंद वर्धन ||

है सुन्दर भाल चंद्र मुख भगवन |
देते आप ही भूजन निर्मोचन ||
परमानन्दकन्द श्री नन्दनंदन |
करते रहें सदैव आपके भजन ||
हो इष्ट तुम मीरा रसखान मन |
हो तुम्हीं भक्त सूरदास नयन ||
किए तुम कालिया सर्प मर्दन |
बने सारथी अर्जुन तुम भगवन ||
किए तुम्हीं श्री गीता वादन |
दिए तुम ज्ञान भ्रमित अर्जुन ||
किए तुम नष्ट दम्भ दुर्योधन |
किए भू स्थापित तुम धर्म शासन ||
हो तुम्हीं प्रेम सब ही गोपिन |
हो तुम्हीं मित्रता उदाहरन ||
हो तुम तारक सुदामा निर्धन |
है शोभित हस्त चक्र सुदर्शन ||
जय जय रक्षक धर्म सत सनातन |
जय जय नाथ बिहारी त्रिभुवन ||
जय कृष्ण मुरारी नन्द नंदन |
बसो मनहर हरि हमारे तन मन ||

दोहा

वर्ण श्याम मोर मुकुट भाल असुर मर्दन |
माखन चोर नटखट गोपाल हैं मन भावन || (१)
सर्वव्यापी जगदीश्वर हैं आधार भूजन |
करो स्वीकार नमन योगेश्वर राधारमन || (२)

भावार्थ: *नन्द सुत, नंदगाव वासी (कृष्ण) एवं वृंदावन स्वामिन श्री राधे के चरणों में सदैव हृदय रहे| मैं तन, मन, धन आपको समर्पित करता हूँ| हे भगवान् कृष्ण, गोविन्द, नारायण, अच्युत, वासुदेव, अग्नि-पुत्री (द्रौपदी) के रक्षक, हम दीन निर्धनों पर (भी) कृपा करो| आपने कंस, रजक, सृगल, कालयवन जैसे अनेक दुष्ट प्राणियों का वध किया| पृथ्वी को अधर्म आचरण से मुक्त कर, आपने विश्व के आनंद को बढ़ाया |*

सुन्दर मस्तिष्क एवं चंद्र मुख वाले भगवान्, आप ही प्राणियों को मोक्ष देते हैं| हे परमानंद देने वाले श्री कृष्ण, हम सदा आपका भजन करें| श्याम वर्ण, मष्तिष्क पर मोर मुकुट धारित, असुरों का विनाश करने वाले, माखन चोर गोपाल, मन को भाने वाले हैं| मीरा के इष्ट, रसखान का हृदय, सूरदास के नेत्र आप ही हैं| कालिया सर्प का मर्दन करने वाले भगवान् अर्जुन के सारथी हैं| आपने ही गीता वादन कर भ्रमित अर्जुन को ज्ञान दिया| आपने दुर्योधन के अहंकार को नष्ट कर धर्म का शासन स्थापित किया| आप ही गोपियों के प्रेम हैं, मित्रता के उदाहरण हैं, निर्धन सुदामा के तारक हैं| आपके हाथों में सुदर्शन चक्र शोभित है| सत्य सनातन के रक्षक आपकी जय हो, जय हो| तीनों लोकों के स्वामी आपकी जय हो| नन्द सुत, कृष्ण, मुरारी आपकी जय हो| हे मनोहर हरि, हमारे हृदय में वास करो| पृथ्वी वासियों के आधार, सर्व-व्यापक जगत के ईश्वर, राधा-रमण, योगेश्वर हमारा नमन स्वीकार करो|

श्रीमद्भगवद्गीता माहात्म्यम्

धरोवाच
भोगते हुए प्रारब्ध कर्म नर इस भू श्री नारायन |
करें कैसे प्राप्त भक्ति एकनिष्ठ पूछीं माँ भुवन ||१||

भावार्थ: *माँ पृथ्वी ने पूछा, 'हे श्री विष्णु, इस पृथ्वी पर प्रारब्ध-कर्म को भोगते हुए मनुष्य को एकनिष्ठ भक्ति कैसे प्राप्त हो सकती है?'*

श्री विष्णुरुवाच
भोगता प्रारब्ध जो रहे आसक्त अभ्यास गीता जन |
हो वह मुक्त-लोक सुखी अकर्मी बोले विष्णु भगवन ||२||

भावार्थ: *विष्णु भगवान बोले, 'प्रारब्ध को भोगता हुआ जो मनुष्य गीता के अभ्यास में आसक्त रहता है वह (भू) लोक में मुक्त और सुखी होता हुआ अकर्मी होता है (अर्थात कर्म में लेपायमान नहीं होता)|'*

नहीं करता स्पर्श जल जैसे पर्ण कमल सम भूजन |
नहीं करते स्पर्श अघ जो करे सदा गीता अध्ययन ||३||

भावार्थ: *कमल के पत्ते को जैसे जल स्पर्श नहीं करता उसी प्रकार जो मनुष्य गीता का सदैव अध्ययन करता है, उसे पाप कभी स्पर्श नहीं करते|*

है गीता जिस गृह स्थित और करते श्रवण-पठन |
समझो हैं स्थित वहीं प्रयाग आदि तीर्थ पावन ||४||

भावार्थ: जिस गृह में गीता पुस्तक स्थित है, उनका श्रवण और पठन होता है, वहां समझो कि प्रयागादि पवित्र तीर्थ निवास करते हैं|

करते वास महापुरुष जहां होता गीता अनुसरन |
सर्व देव ऋषि मुनि नाग बालगोपाल श्री कृष्न ||
नारद ध्रुव आदि सभी पार्षद हों सहायक तत्क्षन ||५||

भावार्थ: *जहां गीता प्रवर्तमान है वहां सभी महापुरुष वास करते हैं| देव, ऋषि, मुनि, नाग, बाल गोपाल, श्री कृष्ण, नारद, ध्रुव आदि सभी पार्षद तुरंत सहायक होते हैं|*

हो जिस गृह गीता विमर्श पठन पाठन और श्रवन |
समझो मेरा स्थाई निवास अवश्य उस गृह हे भुवन ||६||

भावार्थ: *हे पृथ्वी, जिस गृह में गीता का विचार, पठन, पाठन तथा श्रवण होता है उस गृह में मेरा अवश्य ही स्थाई निवास समझो|*

समझो जहां गीता वहीं मेरा आश्रय गृह पावन |
ले आश्रय ज्ञान गीता करता मैं त्रिलोक पालन ||७||

भावार्थ: *जहां गीता है वहीं मेरा आश्रय पावन गृह है| गीता के ज्ञान का आश्रय लेकर मैं तीनों लोकों का पालन करता हूँ |*

है गीता अवर्णनीय छंद अर्धमात्राक्षर सनातन |
नित्य ब्रह्मरूपी परम श्रेष्ठ मेरी विद्या असंशयन ||८||

भावार्थ: *गीता अवर्णनीय छंद, अविनाशी, अर्धमात्राक्षर, सनातन, नित्य, ब्रह्मरूपिणी, मेरी परम श्रेष्ठ विद्या है, इसमें सन्देह नहीं है|*

पावन गीता है कथित स्व-मुख चिदानंद श्री कृष्न |
युक्त ज्ञान वेद तत्व रूप पदार्थ अति आनंददायन ||९||

भावार्थ: *पवित्र गीता चिदानन्द श्रीकृष्ण के स्व-मुख से कथित है| यह वेदों एवं पदार्थों के तत्व रूप ज्ञान से युक्त है तथा आनंददायिनी है|*

हो स्थिर मन करे जो नित्य गीता वर्ग अष्टदश पठन |
पा ज्ञानस्थ सिद्धि करे प्राप्त परम मेरी गति वह जन ||१०||

भावार्थः *जो मनुष्य स्थिर मन से नित्य गीता के १८ अध्यायों का पठन करता है वह ज्ञानी सिद्धि को प्राप्त कर मेरे परम पद को पा जाता है|*

यदि असमर्थ पठन सम्पूर्ण गीता करे अर्ध पठन |
निःसंदेह पाए पुण्य समान दान माँ गौ वह भूजन ||११||

भावार्थः *संपूर्ण गीता पठन में यदि असमर्थ हो तो आधा पाठ करे| उस मनुष्य को गौ माता के दान से होने वाले पुण्य की प्राप्त होती है, इसमें सन्देह नहीं|*

पाए फल गंगा स्नान करे यदि पाठ तृतीय अवयविन |
भोगे फल शुभ सोमयाग करे वह यदि खंड षट् पठन ||१२||

भावार्थः *तीसरे भाग का पाठ करने से गंगा-स्नान का फल प्राप्त करता है| छठवें भाग का यदि पाठ करे तो शुभ सोमयाग का फल पाता है|*

पाए रूद्रलोक करे एक अध्याय नित्य श्रद्धा पठन |
करे निवास चिरकाल कैलाश वह बन शिव शंकर गन ||१३||

भावार्थः *जो श्रद्धा से नित्य एक अध्याय का पाठ करता है वह रुद्रलोक को प्राप्त होता है| शिवजी का गण बनकर चिरकाल तक वह कैलाश में निवास करता है|*

करे प्राप्त मनुष्य योनि मन्वन्तर वह भूजन भुवन |
जो करे पठन नित्य एक श्लोक अथवा श्लोक चरन ||१४||

भावार्थः *हे पृथ्वी, जो मनुष्य प्रति दिन एक श्लोक अथवा श्लोक के एक चरण का पाठ करता है वह मन्वंतर तक मनुष्य योनि को प्राप्त करता है|*

दस सात पाँच चार तीन दो एक या अर्ध श्लोक पठन |
करे वास चंद्रलोक दस सहस्त्र वर्ष निःसंशय वह जन ||१५||

भावार्थः *जो मनुष्य (गीता के) दस, सात, पाँच, चार, तीन, दो, एक या आधे श्लोक का पाठ करता है वह निःसंदेह दस हजार वर्ष तक चन्द्रलोक में वास करता है|*

करते श्रवण पठन गीता हो जाए यदि मरण भक्तजन |
ले जन्म वह नर योनि नहीं जाए अधम योनि कदाचन ||१६||

भावार्थः *गीता के पठन-श्रवण करते हुए यदि भक्त की मृत्यु हो जाती है तो वह अधम योनियों (पशु आदि) में न जाकर मनुष्य योनि में जन्म लेता है|*

ले पुनर्जन्म जब योनि नई नर रहे स्मरण गीता पठन |
कर अभ्यास गायन गीता मरण पाए वह सद्गति पावन ||१७||

भावार्थः *जब वह नर नई योनि में पुनर्जन्म लेता है तो उसे (पूर्व जन्म का) गीता पठन स्मरण रहता है| वह गीता का गायन अभ्यास कर मरण पर पवित्र सद्गति (मोक्ष) की प्राप्ति करता है|*

कर श्रवण गीता अनुसरण करे तत्व उसका जो जन |
हो भूरि पापी पर पा साकेत मरण रहे संग भगवन ||१८||

भावार्थः *गीता का तत्व सुन कर जो प्राणी उसका अनुसरण करता है वह महापापी हो फिर भी मरण पर वैकुण्ठ को प्राप्त कर भगवान् के साथ रहता है|*

करे अनेक कर्म पर रहे सलंग्न विचार गीता तत्व जन |
समझो उसे जीवन मुक्त पाए परमगति पश्चात मरन ||१९||

भावार्थः *जो प्राणी अनेक कर्म करते हुए गीता के तत्व के विचार में सलंग्न रहता है उसे जीवन-मुक्त समझो| मृत्यु के बाद वह परम पद को पाता है|*

हुए अघहीन ले आश्रय गीता सम जनक आदि राजन |
हो यशस्वी भूलोक पाए वह परम गति पश्चात मरन ||२०||

भावार्थ: *गीता का आश्रय ले कर जनक आदि राजा पाप रहित होकर भूलोक में यशस्वी बने हैं और मरण पश्चात परम पद को प्राप्त हुए हैं|*

नहीं करे पठन जो महात्म्य तत्पश्चात गीता पठन |
समझो उसे श्रम रूप निष्फल समझने में तत्व पावन ||२१||

भावार्थ: *गीता का पाठ करके जो महात्म्य का पाठ नहीं करता वह पावन तत्व समझने में निष्फल रहता है| इसे श्रम रूप ही समझो|*

करे अभ्यास पठन गीता सहित महात्म्य जो भूजन |
भोग फल शुभ इहलोक पाए दुर्लभ गति पश्चात मरन ||२२||

भावार्थ: *जो प्राणी महात्म्य सहित गीता का अभ्यास करता है वह इस लोक में शुभ फल भोगते हुए मरण पश्चात दुर्लभ गति (मोक्ष) पाता है|*

सूत उवाच

कहा मैंने महात्म्य गीता बोले संत सूत महात्मन |
पाए उपरि फल निश्चित करे जो पाठ गीता निगमन ||२३||

भावार्थ: *महात्मा सूत बोले, गीता का यह महात्म्य मैंने कहा है| गीता पाठ के अन्त में जो इसका पाठ करेगा उसे उपर्युक्त फल की अवश्य प्राप्ति होगी|*

वाराहपुराण में श्रीमद्भगवद्गीता महात्म्य संपूर्ण हुआ |

श्रीमद्भगवद्गीता महात्म्य अनुसंधान

शौनक उवाच
दो ज्ञान मुझे महात्म्य गीता हे संत सूत महात्मन |
वर्णित श्रुति रचित महर्षि वेद व्यास कवि महन ||
हूँ रोमांचित बोले ऋषि शौनक कर गीता स्मरन ||१||

भावार्थ: *ऋषि शौनक बोले, 'हे महात्मा संत सूत, श्रुति में वर्णित महान कवि महर्षि वेद व्यास द्वारा रचित गीता के महात्म्य का मुझे ज्ञान दीजिए| गीता का स्मरण कर मैं रोमांचित हूँ|'*

सूत उवाच
है अत्यंत गुह्य महात्म्य गीता बोले सूत महात्मन |
नहीं समर्थ कोई कह सके महात्म्य उत्तम सनातन ||२||

भावार्थ: *महात्मा सूत बोले, 'गीता का महात्म्य अत्यंत गोपनीय है| इस उत्तम एवं सनातन महात्म्य को कोई कह सके, ऐसा समर्थ कोई नहीं है|'*

जानें भली भांति महात्म्य गीता श्री कृष्ण भगवन |
किंचित व्यास शुक याज्ञवल्क्य जनक और कुछ अर्जुन ||३||

भावार्थ: *गीता महात्म्य को भगवान् श्री कृष्ण भली भांति जानते हैं| अर्जुन कुछ और (महर्षि) व्यास, (महर्षि) शुकदेव, (महर्षि) याज्ञवल्क्य, जनक थोड़ा जानते हैं|*

सुन कर्णोपकर्ण करें सब मनुष्य भूलोक वर्णन |
सुनो आज जो सुना मैंने स्वयं व्यास मुख पावन ||४||

भावार्थ: *सब लोग कर्णोपकर्ण सुनकर भूलोक में वर्णन करते हैं| स्वयं (महर्षि) व्यास के पवित्र मुख से जो मैंने सुना, वह आज सुनो|*

करो कंठस्थ गीता कही जो विष्णु रूप कृष्ण भगवन |
नहीं लाभ अन्य ग्रन्थ जब वाणी लब्ध मुख पद्म पावन ||५||

भावार्थ: *विष्णु रूप भगवान कृष्ण ने जो गीता कही उसे कण्ठस्थ करो| जब (भगवान् के) कमल रुपी मुख से निकली वाणी उपलब्ध है तब अन्य ग्रंथों का कोई लाभ नहीं (अर्थात अन्य ग्रंथों को कंठस्थ करने का कोई लाभ नहीं)|*

है गीता धर्ममय प्रयोजक सर्व ज्ञान हे महात्मन |
है सर्व शास्त्रमय समझो श्रेष्ठ मध्य सभी ग्रंथन ||६||

भावार्थ: *हे (सूत) महात्मन, गीता धर्ममय, सर्व ज्ञान की प्रयोजक तथा सर्व शास्त्रमय है| इसे सभी ग्रंथों में श्रेष्ठ समझो|*

चाहे करना पार भव विकट अवरोधक सागर जो जन |
चढ़े वह नौका रूप गीता तर भव पाए निर्मोचन ||७||

भावार्थ: *जो मनुष्य घोर अवरोधक संसार सागर को पार करना चाहता है वह गीता रूपी नौका पर चढ़ जाए और मोक्ष की प्राप्ति करे|*

करे पठन सुहृदय श्रद्धा ग्रन्थ श्री गीता पावन |
हो रहित भय शोक आदि पाए परम गति विष्णु भगवन ||८||

भावार्थ: *जो पवित्र श्री गीता ग्रन्थ का मन एवं श्रद्धा से पठन करता है, वह भय, शोक आदि से रहित होकर विष्णु भगवान् के परम पद को प्राप्त होता है|*

नहीं सुना अभ्यास योग से ज्ञान गीता जो भूजन |
चाहे मोक्ष है वह मूढ़ बुद्धि-बाल विदूषक मत्त जन ||९||

भावार्थ: *जिस प्राणी ने अभ्यास योग से गीता का ज्ञान नहीं सुना और मोक्ष की इच्छा रखता है वह मूढ़, बालक-बुद्धि, मत्त एवं विदूषक है|*

रात दिन करें जो सदा श्री गीता ग्रन्थ श्रवण पठन |
समझो उन्हें निःसंशय देव नहीं वह सामान्य जन ||१०||

भावार्थ: *जो रात दिन सदा श्री गीता ग्रन्थ पढ़ते और सुनते हैं उन्हें साधारण मनुष्य नहीं निःसंदेह देवता समझो|*

हो मैल दूर तन करें स्नान जल नित्य दिन भूजन |
किया स्नान गीता एकद हो दूर मैल भव असूयन ||११||

भावार्थ: *प्रति दिन जल से स्नान प्राणी के शरीर का मैल दूर करता है, गीता में एक बार किया स्नान संसार कष्ट रूपी मैल को दूर करता है|*

नहीं करता पठन पाठन श्रवण गीता स्वयं जो जन |
नहीं ज्ञान भाव श्रद्धा प्रति इस   महान ग्रन्थ पावन ||१२||
समझो है वह नर सम सूकर भटक रहा जो इस भुवन |
है नहीं नीच सम उस नर जो नहीं जानता गीता पावन ||१३||

भावार्थ: *जो मनुष्य स्वयं गीता का पठन, पाठन एवं श्रवण नहीं करता, इस महान पवित्र ग्रन्थ का जिसे ज्ञान नहीं है, श्रद्धा भाव नहीं है, उस प्राणी को भूलोक में भटकते हुए शूकर जैसा समझो| जो पवित्र गीता को नहीं जानता, उस प्राणी के समान नीच कोई नहीं है|*

है धिक्कार ज्ञान व्रत आचार चेष्टा तप यश उस जन |
है नहीं अधम उस सम अन्य जो करे नहीं गीता पठन ||१४||

भावार्थ: *उस प्राणी के ज्ञान, आचार, व्रत, चेष्टा, तप और यश को धिक्कार है, उस के समान अधम और कोई नहीं है जो गीता का पठन नहीं करता|*

है निन्दित ज्ञान वेद में जो नहीं दिया गीता भगवन |
समझो उसे निष्फल रहित धर्म आसुरी अकर्मन ||१५||

भावार्थ: *जो ज्ञान भगवान् ने गीता में नहीं दिया वह वेद में निन्दित है| उस (प्रभु के द्वारा अकथित ज्ञान) को निष्फल, अधर्मी, आसुरी एवं अकर्मी समझो|*

हर स्थिति दिन-रात सुप्त-जाग्रत चल-अचल जल्पन |
पाए मोक्ष करे जो गीता सहित अर्थ सतत अध्ययन ||१६||

भावार्थ: *जो रात-दिन, सोते-जागते, चलते-बैठते, बोलते, हर स्थिति में गीता का यथार्थतः सतत अध्ययन करता है वह मोक्ष को प्राप्त होता है|*

करे पठन गीता समक्ष योगी संत सिद्ध पुरुष महन |
यज्ञस्थली भक्त भगवद पाए वह अवश्य निर्मोचन ||१७||

भावार्थ: *जो गीता का पठन योगी, संत, सिद्ध, श्रेष्ठ पुरुष, यज्ञ स्थान, भगवद भक्त के समक्ष करता है उसे मोक्ष की प्राप्ति अवश्य होती है|*

करे प्रति दिन पठन श्रवण गीता जो भक्तगण पावन |
पाए फल सम किए अश्वमेध यज्ञ सहित दान वह जन ||१८||

भावार्थ: *जो पवित्र भक्तगण गीता का पठन और श्रवण प्रति दिन करता है उसे दान के साथ अश्वमेध यज्ञ करने के समान फल मिलता है|*

जो करे एकाग्र मन से सहित भाव भक्ति गीता अध्ययन |
है पाया ज्ञान सर्व वेद शास्त्र पुराण आदि उस जन ||१९||

भावार्थ: *जो भक्ति भाव से एकाग्र चित्त होकर गीता का अध्ययन करता है वह प्राणी सर्व वेद, शास्त्र तथा पुराण का ज्ञान पाता है|*

हेतु पर उपकार करे स्वयं सहित अर्थ गीता गायन |
पाए परम पद साकेत धाम निःसंशय यह सत्य वचन ||२०||

भावार्थ: *परोपकार हेतु जो स्वयं अर्थ सहित गीता का गायन करता है उसे निःसंदेह परम पद साकेत धाम की प्राप्ति होती है, यह सत्य वचन है|*

करते उत्पन्न त्रिताप सम दुःख कष्ट भय मध्य भूजन |
हों न व्याप्त यह अवगुण हो जिस गृह गीता पूजन ||२१||

भावार्थ: *त्रिताप (आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक) प्राणियों में दुःख, पीड़ा, भय उत्पन्न करते हैं| जिनके गृह में गीता का पूजन होता है वहां यह अवगुण नहीं रहते|*

नहीं लगे अघ श्राप और हो न कभी दुर्गति उस जन |
नहीं दें दुःख छह रिपु तन करे जो श्री गीता पूजन ||२२||

भावार्थ: *जो श्री गीता का पूजन करते हैं उन्हें शाप, पाप (आदि) नहीं लगता और उनकी दुर्गति कभी नहीं होती| छह शत्रु (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर) उनकी देह को दुःख नहीं देते|*

होती उत्पन्न हृदय भक्ति एकनिष्ठ परमेश्वर भगवन |
जो करें नित्य निरंतर श्रीमद्भगवद्गीता अभिनन्दन ||२३||

भावार्थ: *जो नित्य-निरन्तर श्रीमद्भगवद्गीता का अभिनंदन करते हैं उनके हृदय में भगवान परमेश्वर की एकनिष्ठ भक्ति उत्पन्न होती है|*

किया स्नान या नहीं हो पवित्र या अपवित्र भूजन |
है सदा पवित्र करे जो हरि विभूति विश्वरूप स्मरन ||२४||

भावार्थ: *स्नान किया हो या न किया हो, पवित्र हो या अपवित्र हो, जो परमात्म-विभूति और विश्वरूप का स्मरण करता है, वह सदा पवित्र है|*

करे भोजन सर्वत्र और देता दान सर्व प्रकार जन |
नहीं होता लेपायमान कभी करे यदि गीता पठन ||२५||

भावार्थ: *प्राणी सब जगह भोजन करे और सर्व प्रकार का दान दे, यदि गीता का पाठ करता है तो वह कभी लेपायमान नहीं होता|*

रहे सदा श्रीमद्भगवद्गीता में जिसका चित्त रमन |
है वह सम्पूर्ण अग्निहोत्री तपी क्रियावान धिषन ||२६||

भावार्थ: *जिसका चित्त सदा गीता में ही रमण करता है वह संपूर्ण अग्निहोत्री, सदा जप करने वाला, क्रियावान तथा पण्डित है|*

है वह दर्शनीय धनवान योगी ज्ञानी ध्यानी जन |
समझे वह सर्व वेद सहित अर्थ है अति प्राज्ञगन ||२७||

भावार्थ: *वह व्यक्ति दर्शनीय, धनवान, योगी, ज्ञानी, ध्यानी तथा सर्व वेद के अर्थ को जानने वाला अत्यंत बुद्धिमान है|*

हो जिस स्थान श्रीमद्भगवद्गीता ग्रन्थ नित्य पठन |
करें निवास सर्व तीर्थ सम प्रयागादि उस आंगन ||२८||

भावार्थ: *जिस स्थान पर श्रीमद्भगवद्गीता ग्रन्थ का नित्य पाठ होता है उस स्थान पर प्रयागादि सर्व तीर्थ निवास करते हैं|*

करते निवास देव ऋषि योगी सर्प सदैव उस आंगन |
होता जहां नित्य निरंतर गीता पठन पाठन श्रवन ||२९||

भावार्थ: *जहां नित्य निरंतर गीता पठन, पाठन एवं श्रवण होता है उस स्थान पर देव, ऋषि, योगी, सर्प सदैव निवास करते हैं|*

गीता गंगा गायत्री सीता सत्या सरस्वती पावन |
ब्रह्मविद्या ब्रह्मवल्ली त्रिसंध्या और मुक्तगेहिन ||३०||
अर्धमात्रा चिदानंदा भवघ्नी और भयनाशिन |
वेदत्रयी परा अनन्ता और तत्त्वार्थज्ञानमंजरिन ||३१||
करे स्मरण स्थिर मन जो अष्टादश नाम गीता पावन |
पा तुरंत ज्ञान सिद्धि पाए परम पद मरण वह भक्तगन ||३२||

भावार्थ: *पवित्र गीता, गंगा, गायत्री, सीता, सत्या, सरस्वती, ब्रह्मविद्या, ब्रह्मवल्ली, त्रिसंध्या, मुक्तगेहिनी, अर्धमात्रा, चिदानन्दा, भवघ्नी, भयनाशिनी, वेदत्रयी, परा, अनन्ता और तत्त्वार्थज्ञानमंजरी (तत्वरूपी अर्थ के ज्ञान का भंडार), इस प्रकार गीता के अठारह नामों का स्थिर मन से जो नित्य स्मरण करता है वह भक्त शीघ्र ज्ञान सिद्धि को पाकर मरण पश्चात परम पद को प्राप्त होता है|*

करते हुए कर्तव्य कर्म जो जन करता गीता पठन |
कर पूर्ण सर्व कर्म पाता वह निःसंदेह फल पावन ||३३||

भावार्थ: *जो मनुष्य कर्तव्य कर्म करते हुए गीता पठन करता है वह निःसंदेह सब कर्म पूर्ण करते हुए उनका पवित्र (शुभ) फल प्राप्त करता है|*

कर लक्ष्य पितर जो जन करे श्राद्ध काल गीता पठन |
हो संतुष्ट पितर पाते सद्गति हों मुक्त नर्क कदर्थन ||३४||

भावार्थ: *जो मनुष्य श्राद्ध काल में पितरों को लक्ष्य करके गीता का पाठ करता है उसके पितृ सन्तुष्ट हो सद्गति पाते हैं तथा नर्क पीड़ा से मुक्ति पाते हैं|*

हो तृप्त श्राद्ध प्रसन्न पाठ जाते पितर पितृ-भुवन |
तत्पर निकलते तब उनके मुख शुभ आशीर्वचन ||३५||

भावार्थ: *(गीता) पाठ से प्रसन्न तथा श्राद्ध से तृप्त हुए पितृगण पितृलोक में जाते हैं| तत्पर उनके मुख से उन (पुत्रों) के लिए शुभ आशीर्वचन निकलते हैं|*

करे जो लिखित गीता हस्त कंठ या मस्तक पर धारन |
हो जाते नष्ट सर्व विघ्न शोक अघ दुःख आदि उस जन ||३६||

भावार्थ: *जो मनुष्य लिखित गीता को गले में, हाथ में या मस्तक पर धारण करता है उसके सर्व विघ्न, शोक, पाप, दुःख आदि नष्ट हो जाते हैं|*

पा नर देह मध्य चार वर्ण इस भरत खंड जो भूजन |
नहीं करता सोम स्वरूप श्री गीता का श्रवण पठन ||३७||
समझो पिए कटुक विष छोड़ सोम वह अभागा जन |
पाए मोक्ष हो सुखी करे जो जन गीता श्रवण पठन ||३८||

भावार्थ: *इस भरत खण्ड (भारतवर्ष) में चार वर्णों में जो मनुष्य देह प्राप्त करके भी अमृत स्वरूप गीता का श्रवण या पठन नहीं करता है वह अभागा अमृत छोड़कर कड़ुवे विष को पीता है, ऐसा समझो| जो मनुष्य गीता सुनता और पढ़ता है वह मोक्ष प्राप्त कर सुखी होता है|*

पीड़ित लौकिक दुःख सुने ज्ञान गीता जो भूजन |
पी सोम पाए मोक्ष जाए मरण निःसंदेह लोक भगवन ||३९||

भावार्थ: *संसार के दुःखों से पीड़ित जिन मनुष्यों ने गीता का ज्ञान सुना है उन्होंने अमृत पी लिया है| वह मोक्ष पाकर निःसंदेह मरण पश्चात श्री हरि के धाम को जाते हैं|*

हुए रहित पाप बहु राजन सम जनक आदि इस भुवन |
पाए परम हरि पद लिए आश्रय जब श्री गीता पावन ||४०||

भावार्थ: *इस लोक में जनकादि के समान कई राजा गीता का आश्रय लेकर पाप-रहित होकर भगवान् के परम पद को प्राप्त हुए हैं|*

है नहीं भेद विषयक ऊंच नीच श्री गीता पावन |
समझो इसे ब्रह्म स्वरुप ज्ञान समान प्रत्येक जन ||४१||

भावार्थ: *पवित्र गीता में उच्च और नीच विषयक भेद नहीं हैं| इसे ब्रह्म स्वरूप समझो| इसका ज्ञान सब प्राणियों के लिए समान है|*

सुन परम आदर अर्थ गीता हो न आनंदित जो जन |
पाता नहीं फल कर्म करता व्यर्थ ही श्रम इस भुवन ||४२||

भावार्थः *गीता के अर्थ को परम आदर से सुनकर जो आनंदित नहीं होता, वह मनुष्य इस लोक में कर्म फल नहीं प्राप्त करता| वह व्यर्थ में श्रम करता है|*

करे पाठ गीता पर न करे जो गीता महात्म्य पठन |
रहे पाठ श्रम रूप केवल न पा सके वह फल पावन ||४३||

भावार्थः *जो गीता का पाठ करे पर गीता महात्म्य का पठन नहीं करे, उसके पाठ का शुभ फल प्राप्त नहीं होता| पाठ केवल श्रम रूप ही रहता है|*

करे जो भूजन पाठ महात्म्य संग श्री गीता पठन |
सुने भाव समर्पित हरि पाए निःसंदेह गति कठिन ||४४||

भावार्थः *जो प्राणी गीता पाठ के साथ महात्म्य का पाठ करता है तथा जो प्रभु के प्रति श्रद्धा से (गीता पाठ) सुनता है उसे निःसंदेह दुर्लभ गति प्राप्त होती है|*

कहा मैंने महात्म्य सनातन पढ़े जो अंत गीता पठन |
पाए फल उपर्युक्त बोले महर्षि सूत परम पावन ||४५||

भावार्थः *परम पावन महर्षि सूत जी बोले, 'मैंने गीता का सनातन महात्म्य कहा है| गीता पाठ के अन्त में जो इसका पाठ करता है वह उपर्युक्त फल को प्राप्त होता है|'*

वाराहपुराण में श्रीमद्भगवद्गीता महात्म्य अनुसंधान संपूर्ण हुआ |

श्रीमद्भगवदगीता हिंदी भक्ति काव्य
ॐ नमो भगवते वासुदेवः

अध्याय १ : अर्जुनविषादयोग:

धृतराष्ट्र उवाच

हुए एकत्रित कुरुक्षेत्र में लिए इच्छा रण युद्धवन |
कर रहे संजय क्या पुत्र मेरे और पाण्डु स्थल पावन ||१-१ ||

भावार्थ: *धृतराष्ट्र बोले, 'हे संजय, युद्ध की इच्छा लिए कुरुक्षेत्र में एकत्रित मेरे एवं पाण्डु के पुत्र इस पवित्र स्थल में क्या कर रहे हैं?*

संजय उवाच

बोले संजय देख वज्रव्यूह सेना पांडव स्थल रन |
पहुंच समीप गुरु बोले वचन तब दुर्योधन राजन ||१-२।।

भावार्थ: *संजय बोले, 'रण स्थल पर पांडव सेना के वज्रव्यूह (रचना) को देखकर राजा दुर्योधन गुरु (द्रोणाचार्य) के समीप पहुंच कर बोले|'*

हे आचार्य कर रहे द्रुपद पुत्र सैन्य पांडव संचालन |
हैं वह प्राज्ञ आपके शिष्य की है कठिन व्यूह रचन ||
समक्ष महत पांडव सेना करें कृपया अवलोकन ||१-३।।

भावार्थ: *हे आचार्य, द्रुपद पुत्र (धृष्टद्युम्न) पांडवों की सेना का नेतृत्व कर रहे हैं| यह आपके बुद्धिमान शिष्य हैं| इन्होंने कठिन व्यूह रचना की है| अपने समक्ष इस वृहद पांडव सेना को कृपया देखिए|*

हे आचार्य हैं शूरवीर मध्य विरोधी सैन्य संगठन |
धारक वृहद धनुष जो कर सकें सहज लक्ष्य भेदन ||

हैं यह सब योद्धा वीर समान बली भीम और अर्जुन |
युयुधान विराट द्रुपद समान महारथी युद्ध निपुन ||१-४।।
धृष्टकेतु चेकितान काशीराज हैं महान युद्धिवन |
भ्राता पुरुजित कुन्तिभोज व् शैब्य हैं श्रेष्ठ जन ||१-५।।
युधामन्यु उत्तमौजा अभिमन्यु हैं अत्यंत धीर-रन |
महारथी सभी सम द्रौपदी पञ्च-पुत्र इतिथ कथन ||१-६।।

भावार्थ: *(दुर्योधन द्रोणाचार्य से कह रहे हैं) हे आचार्य, विरोधी सेना के संगठन में शूरवीर वृहद धनुष धारण किए हैं| यह सरलता से लक्ष्य भेद कर सकते हैं| यह सब योद्धा बल में भीम एवं अर्जुन के समान हैं| (इस सेना में) युयुधान (सात्यकि), विराट एवं द्रुपद समान महारथी हैं जो युद्ध (कला) में निपुण हैं| धृष्टकेतु, चेकितान एवं काशीराज जैसे महान योद्धा हैं| पुरुजित, (उनके) भाई कुन्तिभोज एवं शैब्य मनुष्यों में श्रेष्ठ हैं | युधामन्यु, उत्तमौजा एवं अभिमन्यु अत्यंत शूरवीर हैं| मैं कहता हूँ कि सभी द्रौपदी के पांच पुत्र समान महारथी हैं|*

हे ब्राह्मण श्रेष्ठ सुनो तुम अब पक्ष हमारे मुख्यगन |
हैं जो नायक सैन्य हमारे कर रहे हमारा समर्थन ||१-७||

भावार्थ: *हे श्रेष्ठ ब्राह्मण, अब आप हमारे पक्ष के मुख्य गणों को सुनिए| यह सेना नायक हमारा समर्थन कर रहे हैं|*

हैं एक आप स्वयं साथ में भीष्म पितामह अजित रन |
साथ गुरु कृपाचार्य भी न सम जिन कोई आयुधिन ||
हैं कर्ण विकर्ण पुत्र सोमदत्त जैसे अनगिनत युद्धिवन ||१-८||

भावार्थ: *एक तो आप स्वयं ही हैं| साथ में रण में न जीत सकने वाले भीष्म पितामह हैं| गुरु कृपाचार्य भी साथ में हैं जिनके समान कोई योद्धा नहीं है| कर्ण, विकर्ण, सोमदत्त पुत्र (भूरिश्रवा) इत्यादि अनगिनत योद्धा हैं|*

अतिरिक्त इनके शूरवीर अनेक जो खड़े पक्ष मेरे रन |
हैं सभी यह अभ्यस्त युद्ध कला व् अस्त्र-शस्त्र निपुन ||
मेरे लिए किए त्याग यह सब इच्छा राज्य और जीवन ||१-९||

भावार्थ: *इनके अतिरिक्त और भी अनेक शूरवीर हैं जो मेरे पक्ष में युद्ध में खड़े हैं| यह सभी युद्धकला एवं अस्त्र-शस्त्र में निपुण हैं| मेरे लिए इन्होंने राज्य (राज्य करने की)और अपने जीने की इच्छा त्याग दी है (अर्थात मरण भावना को भूल मेरे लिए युद्ध लड़ने को तत्पर हैं)|*

होता प्रतीत है असमर्थ मेरा यह सैन्य संगठन |
कर रहे उभयपक्षपाती भीष्म सैन्य संरक्षन ||
हैं उधर भीम सम नायक सैन्य पा सकें विजय रन ||१-१०||

भावार्थ: *ऐसा प्रतीत होता है कि मेरा सैन्य संगठन (विजय दिलाने में) असमर्थ है| उभयपक्षपाती भीष्म सैन्य संरक्षण कर रहे हैं| उधर (पांडव सेना में) भीम जैसे सेना नायक हैं जो विजय दिलाने में समर्थ हैं|*

कर सम्बोधित महारथी प्रत्यक्ष रूप बोले दुर्योधन |
सम्हाल मोर्चा अपने स्थल करो पितामह समर्थन ||
लक्ष्य हमारा करें चंहु ओर प्रमुख सेनापति रक्षन ||१-११||

भावार्थ: *प्रत्यक्ष रूप में अपने महारथियों को सम्बोधित करते हुए दुर्योधन बोले, 'आप सब अपनी जगह मोर्चा सम्हालते हुए पितामह (भीष्म) का समर्थन कीजिए| चारों ओर से प्रमुख सेनापति की रक्षा हो, ऐसा हमारा लक्ष्य है|'*

संजय उवाच

कुरु वृद्ध पितामह सुन शब्द प्रशंसा मुख दुर्योधन |
गरजे सम सिंह बजाया शंख हों दुर्योधन प्रसन्न ||१-१२||

भावार्थ: *दुर्योधन के मुख से प्रशंसा के शब्द सुनकर कौरवों के वृद्ध पितामह सिंह के समान गरजे एवं शंख बजाया ताकि (राजकुमार) दुर्योधन प्रसन्न हो|*

जब सुने शंख ध्वनि सैन्य प्रमुख बढ़ा उत्साह संगठन |
लगे बजाने शंख ढोल मृदंग सब हो तब शोर डरावन ||१-१३||

भावार्थ: *जब सैन्य प्रमुख (भीष्म पितामह) की शंख ध्वनि सेना ने सुनी, तब उनका उत्साह बढ़ गया| सभी शंख, ढोल, मृदंग बजाने लगे जिसका शोर भयावह था|*

आसीन भव्य रथ श्वेत अश्व अर्जुन और कृष्ण भगवन |
हुई ध्वनि वृहद बजाए जब दैव्य शंख द्वि-महस्विन् ||१-१४||

भावार्थ: *अर्जुन एवं भगवान् श्री कृष्ण भव्य श्वेत घोड़ों के रथ पर आसीन थे| इन दोनों महापुरुषों ने भी तब दैवीय शंख बजाए जिससे घोर ध्वनि उत्पन्न हुई|*

पाञ्चजन्य नामक शंख किए वद्यित श्री कृष्ण भगवन |
बजाए देवदत्त नामक शंख शूर पाण्डुपुत्र अर्जुन ||
वृकोदर भीम ने पौंड्र नामक शंख से तब की गर्जन ||१-१५||

भावार्थ: *भगवान् श्री कृष्ण ने पाञ्चजन्य नामक शंख बजाया| शूरवीर पाण्डुपुत्र अर्जुन ने देवदत्त नामक शंख बजाया| वृकोदर भीम ने पौंड्र नामक शंख से गर्जना की|*

कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर बजाए शंख अनंत-विजय नामन |
बजाया सुघोष नकुल मणि-पुष्पक सहदेव भ्रातृन ||१-१६||

भावार्थ: *धर्मराज युधिष्ठिर ने अनंत-विजय, भ्राता नकुल एवं सहदेव ने (क्रमशः) सुघोष एवं मणि-पुष्पक नाम के शंख बजाए|*

परम धनुर्धर काशिराज महारथी शिखंडी राजन |
राजा विराट अजेय सात्यकि सैन्य प्रमुख धृष्टद्युम्न ||१-१७||
राजा द्रुपद पञ्च-पुत्र द्रौपदी एवं हस्त बर्हन |
सुभद्रा पुत्र अभिमन्यु बजाए समग्र शंख स्वगतन ||१-१८||

भावार्थ: *हे राजन (संजय सम्राट धृतराष्ट्र को सम्बोधित कर रहे हैं), श्रेष्ठ धनुर्धर काशिराज, महारथी शिखंडी, सम्राट विराट, अजेय सात्यकि, सेना के प्रमुख धृष्टद्युम्न, सम्राट द्रुपद, द्रौपदी के पांचो पुत्र एवं बलिष्ठ हाथों वाले सुभद्रा पुत्र अभिमन्यु, सभी ने अपने अपने शंख बजाए/*

भयंकर ध्वनि शंख भट पांडव गूंजी सर्वश नभ भुवन |
हुए हृदय विदीर्ण असत सैन्य महारथी दुर्योधन ||१-१९||

भावार्थ: *पांडव वीरों के शंख की भयंकर ध्वनि पृथ्वी और आकाश में गूंजी/ इससे अन्यायी दुर्योधन के महारथियों के हृदय विदीर्ण हो गए/*

हे भूपति धृतराष्ट्र हैं तत्पर योद्धा क्षेत्र रन |
करें आरम्भ वह युद्ध एवं अस्त्र शस्त्र अभ्यासन ||
समक्ष देख तब सुनियोजित सैन्य संगठन नृशंसन |
हुए तत्पर युद्ध ले हस्त गांडीव कपिध्वज अर्जुन ||१-२०||
हुए कर बद्ध खड़े वह समक्ष सारथी कृष्ण भगवन |
अर्जुन उवाच
बोले तब वह मधुर वचन हे प्रिय मेरे मधूसूदन ||
करें रथ खड़ा कृपया मध्य सेना मेरे और दुर्योधन ||१-२१||

भावार्थ: *(संजय धृतराष्ट्र से बोले) हे सम्राट धृतराष्ट्र, युद्ध क्षेत्र में सभी योद्धा युद्ध आरम्भ करने के लिए एवं अपने अस्त्र, शस्त्रों का अभ्यास करने के लिए (अर्थात अस्त्र, शस्त्र चलाने के लिए) तत्पर हैं/ अपने समक्ष अन्यायियों का सुनियोजित सैन्य संगठन देख कर अर्जुन ने भी गांडीव धनुष हाथ में ले लिया और युद्ध के लिए तत्पर हुए/ वह कर बद्ध अपने सारथी भगवान् श्री कृष्ण के समक्ष खड़े होकर अति प्रिय वचन बोले, 'हे प्रिय मधुसूदन, कृपया रथ को हमारी एवं दुर्योधन की सेना के मध्य में खड़ा कीजिए/'*

देख सकूं मैं योद्धा एकत्रित लुब्ध युद्ध स्व-नयन |
हो बोध योग्य प्रतिद्वंदी लड़ूं जिनके साथ रन ||१-२२||

भावार्थ: *(अर्जुन श्री कृष्ण से कह रहे हैं) युद्ध की इच्छा रखने वाले योद्धाओं को मैं अपने नेत्रों से देख सकूं| मुझे जिनके साथ रण लड़ना है, उन योग्य प्रतिद्वंदीयों को समझ सकूं|*

करने प्रसन्न जो दे रहे साथ दुर्बुद्धि दुर्योधन |
देख सकूं मैं उन उतावले हेतु युद्ध सभी राजन ||१-२३||

भावार्थ: *जो दुष्ट बुद्धि दुर्योधन को प्रसन्न करने के लिए युद्ध हेतु उतावले हो रहे हैं उन सभी राजाओं को मैं देख सकूं|*

संजय उवाच

बोले संजय सुनो वृतांत अब हे भरतवंशी राजन |
सुन शूरवीर धनुर्धर गुडाकेश अर्जुन का कथन ||
करे स्थापित रथ मध्य स्थल रण तब ऋषिकेश भगवन ||१-२४||
समक्ष पितामह भीष्म आचार्य द्रोण सहित अन्य राजन |
बोले कृष्ण देखो सब कुरुवंशी जो एकत्रित अर्जुन ||१-२५||

भावार्थ: *संजय बोले, 'हे भरतवंशी राजन (धृतराष्ट्र), अब आगे का वृतांत सुनो| शूरवीर, निंद्रा को भी जीतने वाले धनुर्धर अर्जुन का यह कथन सुन तब ऋषिकेश भगवान् (श्री कृष्ण) ने रथ को रणक्षेत्र के मध्य में स्थापित कर दिया| उनके समक्ष पितामह भीष्म, आचार्य द्रोण एवं (कौरवों के पक्ष में लड़ रहे) अन्य राजा थे| कृष्ण बोले, 'अर्जुन, सभी एकत्रित कुरुवंशीयों को देखो|'*

तब देखे द्वि-सेना स्थित सब वीर पृथा पुत्र अर्जुन |
प्रणम्य पिता पितामह आचार्य मामा भाई जन ||१-२६||
सम पुत्र पौत्र श्वसुर सुहृदय अति प्रिय मित्र गन |
देख रणभूमि उपस्थित समक्ष रण लुब्ध सब बंधुजन ||१-२७||
छाई हृदय कायरता हुआ विषादित उनका मन |

अर्जुन उवाच

सोच परिणाम रण बोले अर्जुन हे प्रियतम कृष्न ||१-२८||

भावार्थ: *दोनों सेनाओं (स्व एवं कौरव) में स्थित वीरों को पृथा (कुंती) पुत्र अर्जुन ने देखा| पूजनीय पिता, पितामह, आचार्य, मामा, भाई, पुत्र, पौत्र, श्वसुर समान अति प्रिय जन एवं मित्रों को देख उनके हृदय में कायरता छा गई और उनका मन विषाद से पूर्ण हो गया| युद्ध का परिणाम सोच धनुर्धर अर्जुन प्रिय कृष्ण से बोले|*

हो रहे अंग शिथिल देख समक्ष सब प्रिय कुटुंब जन |
सूख रहा मुख हो रोमांचित कांप रहा है मेरा तन ||१-२९||

भावार्थ: *सभी कुटुंब जनों को समक्ष देख मेरे अंग शिथिल हो रहे हैं| मेरा मुख सूख रहा है| रोंगटे खड़े हो रहे हैं| तन कंपकंपा रहा है|*

छूट रहा गांडीव हस्त हो रही जलन त्वचा गहन |
हूं मैं असमर्थ उपास्थित हो रहा है भ्रमित मन ||१-३०||

भावार्थ: *मेरे हाथ से गांडीव छूट रहा है| त्वचा में अत्यंत जलन हो रही है| मैं खड़े होने में भी असमर्थ हूं| मेरा मन भ्रमित हो रहा है|*

हैं विपरीत शकुन हे केशव हेतु आरम्भ धर्म रन |
नहीं देखूं कोई हित मैं कर वध युद्ध में स्व-जन ||१-३१||

भावार्थ: *हे केशव, धर्म युद्ध आरम्भ हेतु विपरीत शकुन हैं| युद्ध में अपने लोगों को मारकर मैं कोई लाभ नहीं देख रहा|*

है न हृदय चाह राज्य न सुख न विजय युद्ध हे कृष्न |
क्या लाभ भोग राज्य सुख स्व-जीवन हे मधुसूदन ||१-३२||

भावार्थ: *हे कृष्ण, हृदय में न राज्य की चाह है, न सुख की और न युद्ध में विजय की| हे गोविन्द, राज्य, भोग एवं स्वयं के जीने से भी क्या लाभ?*

है इच्छा प्राप्त विजय रण राज्य भोगें हेतु प्रियजन |
हैं खड़े इस रणक्षेत्र छोड़ आशा धन और जीवन ||१-३३||

भावार्थ: *जिन प्रियजनों के लिए हमें युद्ध में विजय, राज्य और भोगों की इच्छा है, वह तो धन और जीवन की आशा त्याग कर इस रणक्षेत्र में खड़े हैं|*

पितामह आचार्य सम पिता पुत्र श्वसुर कुल जन |
मातुल पौत्र ननान्दृपति यह सभी अति प्रियगन ||१-३४||
करें यह प्रहार मुझ पर फिर भी न करूं वध स्व-जन |
भू राज्य तो क्या मिले यदि राज्य त्रिलोक मधुसूदन ||१-३५||

भावार्थ: *आचार्य, पितामह, पिता, पुत्र, मामा, श्वसुर, पौत्र, साले समान स्व-जन सभी अति प्रिय हैं| अगर यह मुझ पर प्रहार करेंगे तो भी मैं अपने जनों का वध नहीं करूंगा| हे मधुसूदन, पृथ्वी का राज्य तो क्या अगर त्रिलोक का राज्य भी मिले (तो भी मैं इनका वध नहीं करूंगा)|*

क्या मिलेगी प्रसन्नता मारकर धृतराष्ट्र परिजन |
बनें पापिष्ठ हम कर वध अनाचारी हे जनार्दन ||१-३६||

भावार्थ: *क्या हमें धृतराष्ट्र के सम्बन्धियों को मारकर प्रसन्नता मिलेगी? हे जनार्दन, इन अत्याचारियों का वध कर तो हम पापी ही बनेंगे|*

नहीं उचित करें वध अपने बांधव धृतराष्ट्र नंदन |
कर वध उनका कैसे रह सकेंगे हम प्रसन्न हे कृष्न ||१-३७||

भावार्थ: *हे कृष्ण, अपने बंधु धृतराष्ट्र के पुत्रों का वध करना उचित नहीं है| उनका वध कर हम प्रसन्न कैसे रह सकेंगे|*

यद्यपि हुए हैं विवेक विचार लुप्त हेतु लोभ इन जन |
नहीं लगता दोष कोई करें नाश हम इन खल जन ||
पर यदि करें द्वेष मित्र क्या नहीं यह पाप कृष्न ||१-३८||
समझ दोष पुण्य पाप करें हम विचार क्यों हनन |
करें न क्यों विचार हम हों निवृत्त पाप हे जनार्दन ||१-३९||

भावार्थ: *यद्यपि लोभ के कारण इन व्यक्तियों का विवेक विचार लुप्त हो गया है और ऐसे दुष्ट जनों का नाश करने से कोई दोष नहीं लगता, परन्तु हे कृष्ण, मित्रों से द्वेष करना क्या पाप नहीं है? पाप और पुण्य के दोषों पर विचार कर हम वध करने का विचार क्यों करें? हे जनार्दन, हम इस पाप से निवृत्त होने का विचार क्यों न करें?*

हो यदि विनाश कुल तब हो नष्ट कुल धर्म सनातन |
धर्म नाश से बढ़े अधर्म करे वह नष्ट शुभ आचरन ||१-४०||

भावार्थ: *यदि कुल का विनाश होता है तो सनातन (सदैव से चला आ रहा) कुल धर्म नष्ट हो जाता है| धर्म का नाश अधर्म को प्रबल कर देता है, जिससे शुभ आचरण नष्ट हो जाते हैं|*

बढ़े जब अधर्म कुल हो जातीं दूषित नारी कृष्न |
लें पथ अधर्म मनुषी तब हों वर्णशंकर उत्पन्न ||१-४१||

भावार्थ: *हे कृष्ण, जब कुल में अधर्म बढ़ जाता है तो (कुल) नारी दूषित हो जाती हैं| जब नारियां अधर्म का पथ ले लेती हैं (अर्थात अधर्मी हो जाती हैं) तब वर्ण-शंकर पैदा होते हैं|*

होते वर्णशंकर कुलघाती दें कुल नर्क निवासन |
हो जाता पतन पितर जब मिले न उन्हें श्राद्ध तर्पन ||१-४२||

भावार्थ: *वर्णशंकर कुल-घाती होते हैं जो कुल को नर्क का वास देते हैं, अर्थात नर्कगामी बनाते हैं| श्राद्ध तर्पण न मिलने से कुल के पितरों का पतन हो जाता है|*

है वर्णशंकर जन्म दोष जो करे नाश धर्म सनातन |
हो कुलघाती करें तब लुप्त कुल जाति धर्म वह जन ||१-४३||

भावार्थ: *वर्णशंकर दोष सनातन धर्म (कुल में चली आ रही पुरातन प्रथा) का विनाश कर देता है| वह प्राणी (वर्णशंकर) कुलघाती होकर तब कुल एवं जाति धर्म को लुप्त कर देता है, अर्थात नष्ट कर देता है|*

करें वास नर्क अनंत काल कुल धर्महीन जनार्दन |
किए हम पठन श्रवण यह तथ्य श्रुति और अन्य ग्रंथन ||१-४४||

भावार्थ: *कुल धर्महीन (प्राणी) अनंत काल तक नर्क में वास करते हैं, हे जनार्दन, ऐसा तथ्य हमने श्रुति एवं अन्य ग्रंथों में पढ़ा एवं सुना है|*

हूँ अचंभित ले रहे हम निर्णय रंजित जो लड़ें रन |
क्या नहीं यह पाप कि हम प्रतिबद्ध करें वध स्व-जन ||
हेतु लोभ तुच्छ पाएं सुख राज्य जीतें यदि यह रन ||१-४५||

भावार्थ: *मैं अचंभित हूं कि हम रण में लड़ने का खेद पूर्ण निर्णय ले रहे हैं| अपने स्व-जनों के वध का संकल्प, इस कारण कि यदि हम युद्ध जीते तो राज्य सुख का तुच्छ लोभ प्राप्त होगा, क्या पाप नहीं है?*

यदि सुसज्जित अस्त्र शस्त्र ले रहे पक्ष धृतराष्ट्र जन |
करें वध मेरा शस्त्र रहित विमुख युद्ध जनार्दन ||
होगा अति हितकारी है विचार यह मेरा प्रछन्न ||१-४६||

भावार्थ: *हे जनार्दन, यदि अस्त्र, शस्त्र से सुसज्जित धृतराष्ट्र के पक्षधारी जन मुझ शस्त्र विहीन रण से विमुख का वध भी करें, तो भी मेरे लिए अत्यंत हितकारी होगा, ऐसा मेरा स्वयं का विचार है|*

संजय उवाच

बोले संजय दे यथा तर्क विरुद्ध युद्ध तब हे राजन |
त्याग धनुष बाण हो विषाद ग्रस्त धनुर्धर अर्जुन ||
झुकाए शीश बैठ गए मध्य भाग रथ तब क्षेत्र रन ||१-४७||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद अर्जुनविषादयोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण प्रथम अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थ: *संजय बोले, हे राजन (धृतराष्ट्र), इस प्रकार युद्ध के विरुद्ध तर्क देकर, धनुष बाण त्यागकर, शोकाकुल अर्जुन शीश झुकाए रणक्षेत्र में रथ के मध्य भाग में बैठ गए|*

'ओम तत सत' भगवन्नाम का उच्चारण करते हुए अति पवित्र ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय महाकाव्य ग्रन्थ श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्री कृष्णार्जुन संवाद 'अर्जुनविषादयोग'नाम का पहला अध्याय जो जन कल्याण करेगा, समाप्त हुआ|

अध्याय २: साङ्ख्ययोगः

संजय उवाच

बोले संजय देख विषाद कायरता हिय वीर अर्जुन |
नेत्र अश्रुमय हो रहा जिस हेतु अवरुद्ध अवलोकन ||
हुए तत्पर भगवन श्री मधुसूदन देने तब प्रवचन ||२-१||

भावार्थः *संजय बोले, 'विषाद से पूर्ण अर्जुन के हृदय में कायरता देख, जिनके नेत्र अश्रुमय थे जिससे दृष्टि अवरुद्ध हो रही थी, तब भगवान् श्री मधुसूदन प्रवचन देने को तत्पर हुए (अर्थात मधुर वचन में बोले)|'*

श्री भगवान् उवाच

मिली कहां से कायरता मधुर वचन बोले भगवन |
इस विषम अवसर नहीं करते वीर इस भांति चिंतन ||
है यह विचार विरुद्ध प्राप्ति स्वर्ग या यश अर्जुन ||२-२||
नहीं धरो हिय यह कायरता हे प्रिय प्रथानन्दन |
नहीं उचित हिय दुर्बलता सुनो शूरवीर मैत्रिन् ||
त्याग शीघ्र कायरता हो खड़े तुरंत तुम हेतु रन ||२-३||

भावार्थः *भगवान् मधुर वचन बोले, 'यह कायरता तुम्हें कहां से मिली? इस कठिन परिस्थिति में वीर इन विचारों का चिंतन नहीं करते| यह विचार स्वर्ग एवं यश प्राप्ति के विरुद्ध हैं| हे प्रिय अर्जुन, इस प्रकार की कायरता हृदय में धारण न करो| हे शूरवीर सखा सुनो, यह हृदय की दुर्बलता उचित नहीं है| शीघ्र कायरता त्याग कर तुम तुरंत युद्ध के लिए खड़े हो जाओ|'*

अर्जुन उवाच

बोले अर्जुन करूँ कैसे युद्ध रण क्षेत्र मधुसूदन |
कैसे कर सकूंगा प्रत्यक भीष्म द्रोण बाण-वेधन ||
हैं दोनों ही अति मानित जानो तुम यह अरिसूदन ||२-४||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'हे मधुसूदन, मैं रण क्षेत्र में भीष्म एवं द्रोण के विरुद्ध बाण कैसे चला सकता हूँ? आप जानते हैं कि यह दोनों ही अति पूज्य हैं|'*

है श्रेष्ठ बनूं भिक्षक अधि वध महानुभाव गुरुजन |
करूं यदि वध सम गुरु हो रक्त रंजित पुरञ्जन ||
हूं विजयी यदि रण संभव भोगूं फल विक्षिप्त धन ||२-५||

भावार्थ: *महानुभाव गुरुजन का वध करने की अपेक्षा अच्छा है कि मैं भिक्षुक बन जाऊं| यदि मैं गुरु समान का वध करूं तो मेरी आत्मा रक्त रंजित हो जाएगी| यदि युद्ध में विजयी हुआ तो संभवतः चलायमान धन का फल भोगूं| (अर्थात इस चलायमान धन की प्राप्ति के लिए आदरणीय गुरुजनों का वध करना उचित नहीं है)|*

नहीं जानते श्रेष्ठ लड़ें या करें परित्याग हम रन |
होंगे विजयी युद्ध हम या जीतेगा पक्ष दुर्योधन ||
नहीं चाहते करें वध हम समक्ष धृतराष्ट्र स्व-जन |
कर वध महापुरुष योग्य पूजन नहीं चाह जीवन ||२-६||

भावार्थ: *हम नहीं जानते कि युद्ध करना श्रेष्ठ है अथवा त्यागना, युद्ध में हम विजयी होंगे अथवा दुर्योधन का पक्ष| हमारे समक्ष खड़े धृतराष्ट्र के सम्बन्धियों का हम वध करना नहीं चाहते| पूजन के योग्य महापुरुषों का वध कर हमें जीने की चाह नहीं है|*

नहीं ग्रस्त दोष कायरता हूँ भ्रमित धर्म विद्वन् |
करो मार्ग निर्देश हो जो हितकर मम मधुसूदन ||
हूँ शिष्य आपका दो ज्ञान मुझे आया मैं शरन ||२-७||

भावार्थ: *कायरता के दोष से ग्रस्त नहीं हूँ| धर्म ज्ञान में भ्रमित हूँ| हे मधुसूदन, मेरा मार्ग निर्देशित करो जो मेरे लिए हितकर हो| मैं आपका शिष्य हूँ, ज्ञान दीजिए, आपकी शरण में आया हूँ|*

पाऊँ यदि मैं धन-धान्य समृद्ध राज्य जीत कर रन |
शत्रु-रहित आधिपत्य देव इन्द्रिय सुख समग्र जीवन ||
हो सकूं रहित शोक नहीं देखता ऐसा परिशोधन ||२-८||

भावार्थ: *यदि मैं युद्ध जीतकर धन-धान्य, समृद्धता, शत्रु-रहित राज्य, देवों का आधिपत्य एवं समस्त इन्द्रियों का जीवन सुख पाऊँ, फिर भी मैं शोक रहित हो जाऊं, ऐसा कोई समाधान नहीं देख पा रहा|*

संजय उवाच

बोले संजय सुनो वृतांत धृतराष्ट्र शत्रु-तापन |
नहीं लडूंगा युद्ध कहें स्पष्ट वह ऋषिकेश कृष्न ||
हो गए मौन कह यह शब्द धनुर्धर गुडाकेश अर्जुन ||२-९||

भावार्थ: *संजय बोले, 'हे शत्रुओं को ताप देने वाले धृतराष्ट्र, वृतांत सुनो| युद्ध नहीं लडूंगा, ऐसे स्पष्ट शब्द ऋषिकेश कृष्ण को कह कर धनुर्धर गुडाकेश (निद्रा को जीतने वाले) अर्जुन मौन हो गए|'*

हे भरतवंशी नृप सुने मध्य खंड सैन्य वचन अर्जुन |
देख दुःखित अर्जुन हंसकर बोले यह वचन भगवन ||२-१०||

भावार्थ: *हे भरतवंशी नृप (धृतराष्ट्र), सेना के मध्य भाग में अर्जुन के यह वचन (भगवान् कृष्ण ने) सुने| अर्जुन को दुःखित देख तब हँसते हुए भगवान् (कृष्ण) यह वचन बोले|*

श्री भगवानुवाच

कर रहे तुम शोक अर्जुन जो अशोच्य बोले भगवन |
देखता हूँ कर रहे पर बात जैसे महान प्राज्ञन ||
करते नहीं शोक पंडित हो जीवित या मृतक जन ||२-११||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'अर्जुन, तुम जिसके लिए शोक करना उचित नहीं है, उसके लिए शोक कर रहे हो और मैं देख रहा हूँ कि बातें महान विद्वान की तरह कर रहे हो| पंडित (विद्वान् प्राणी) जीवित अथवा मृतक व्यक्ति का शोक नहीं करते|*

किस काल में नहीं था मैं तुम या यह सब राजन |
सत्य हम थे हर काल और रहेंगे भविष्य में अर्जुन ||
है असत्य यह पार्थ नहीं रहेंगे हम पश्चात इस रन ||२-१२||

भावार्थ: *किस काल में मैं, तुम अथवा यह राजन नहीं थे| यह सत्य है अर्जुन कि हम हर काल में थे और भविष्य में भी रहेंगे| हे अर्जुन, यह असत्य है कि इस युद्ध के पश्चात हम नहीं रहेंगे|*

होती है अवस्था बालपन युवा वृद्ध हर जीवन |
करें अनुभव यही स्थिति जब लें जन्म वारंवारन ||
नहीं होते मोहित कभी इस विषय में धीर जन ||२-१३||

भावार्थ: *हर जीवन में बालपन, युवा एवं वृद्ध अवस्था होती है| बार बार जन्म लेने पर हम इसी स्थिति का अनुभव करते हैं| धीर प्राणी इस विषय पर मोहित नहीं होते|*

दें विषय इन्द्रिय फल दुःख सुख सम घाम हिम्यन |
समझो इन्हें आते जाते एवं अनित्य हे युद्धिवन ||
करो इन्हें सहन समझ कर्मफल भरतवंशी अर्जुन ||२-१४||

भावार्थ: *इन्द्रिय विषय शीत एवं उष्ण के समान दुःख, सुख का फल देने वाले हैं| हे युद्धिवन, यह आने जाने वाले हैं एवं अनित्य हैं| हे भरतवंशी अर्जुन, इन्हे कर्म फल समझ कर सहन करो|*

रहते सदैव सम सुख दुःख प्राज्ञ हे प्रिय अर्जुन |
नहीं करते चंचल उन्हें यह विषय इन्द्रिय अनित्यन ||
समझ सकें जो यह सत्य हो जाते वह अमर अर्जुन ||२-१५||

भावार्थ: *हे श्रेष्ठ अर्जुन, बुद्धिमान प्राणी सुख, दुःख में सदैव समान रहते हैं| वह इन अनित्य (अस्थाई) इन्द्रिय विषयों से विचलित नहीं होते| जो इस सत्य को समझ सके, हे अर्जुन, वह अमर हो जाता है|*

जिसके हिय ज्ञान सत अभाव असत वही प्राज्ञ अर्जुन |
यद्यपि करे अनुभव द्वि-तत्व विभूत सदैव स्व-जीवन ||२-१६||

भावार्थ: *जिसके हृदय में सत का ज्ञान एवं असत का अभाव है, अर्जुन, वही ज्ञानी है| यद्यपि इन दोनों तत्वों का प्राणी अपने जीवन में सदैव अनुभव करते रहता है|*

है व्याप्त जिनमें सब जग जानो उन्हें शाश्वत भगवन |
कर नहीं सके विनाश कोई अविनाशी नारायन ||२-१७||

भावार्थ: *जिनमें समस्त संसार व्याप्त है, उन्हें शाश्वत भगवान् समझो| इन अविनाशी नारायण का कोई विनाश नहीं कर सकता|*

है अप्रमेय शाश्वत आत्मा समझो इसे नित्य अर्जुन |
उत्पन्न जो तन हेतु आत्मा वह नाशवान अनित्यन ||
नहीं करो शोक जो विनाशी करो तुम धर्म पालन ||२-१८||

भावार्थ: *अर्जुन, आत्मा (शरीरी) अप्रमेय (जिसे मापा न जा सके) एवं शाश्वत है, इसे नित्य (अविनाशी) समझो| आत्मा से उत्पन्न शरीर नाशवान एवं अनित्य है| जो विनाशी है, उसका शोक नहीं करो और धर्म पालन करो|*

हैं नासमझ जो कहें आत्मा हन्ता या स्वर्गामिन |
है सत्य यही न मरे आत्मा न ही पाए स्थिति मरन ||२-१९||

भावार्थ: *जो यह कहते हैं कि आत्मा मारने वाली अथवा मृतक है, वह नासमझ हैं| सत्य यही है कि आत्मा न तो मरती है और न ही मृत्यु को प्राप्त होती है|*

है अमर सनातन आत्मा हो न कभी जन्म और मरन |
यह नित्य निरंतर शाश्वत अनादि रहित जन्म अर्जुन ||
न हो नाश कभी आत्मा पर निश्चित मरण मानुषी तन ||२-२०||

भावार्थ: *आत्मा सनातन (सदैव स्थित) एवं अमर है| इसका कभी जन्म एवं मरण नहीं होता| हे अर्जुन, यह नित्य, शाश्वत, अनादि एवं जन्म रहित है| आत्मा कभी नष्ट नहीं होती यद्यपि मनुष्य के शरीर का मरण निश्चित है|*

मानो यदि आत्मा नित्य शाश्वत अजन्मा अर्जुन |
कर सको तब वध कैसे किसका और कैसे हो मरन ||२-२१||

भावार्थ: *हे अर्जुन, यदि आत्मा को नित्य, अजन्मा एवं अविनाशी मानो तो कैसे और किसका वध कर सकते हो, और कैसे उसका मरण होगा?*

हो जाएं जब जीर्ण वस्त्र करें तब धारण नए जन |
साद्दश्य करे प्रवेश आत्मा नए तन छोड़ पुरातन ||२-२२||

भावार्थ: *जिस प्रकार पुराने वस्त्र विदीर्ण होने पर प्राणी नए वस्त्र धारण करता है, उसी प्रकार आत्मा पुराने शरीर को छोड़कर नए शरीर में प्रवेश करती है|*

न जला सके पावक न कर सकें शस्त्र आत्मा खंडन |
न कर सके जल इसे उन्न न सामर्थ्य सुखा सके पवन ||२-२३||

भावार्थ: *आत्मा को न तो अग्नि जला सकती है, न शस्त्र काट सकते हैं, न जल गीला कर एकता है और न ही वायु में इसे सुखाने का सामर्थ्य है|*

है असंभव खंडन जलन उन्नन शुष्कन आत्मा अर्जुन |
है आत्मा नित्य सर्वगत अचल स्थिर एवं सनातन ||२-२४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, आत्मा को खंडित करना, जलाना, गीला करना, सुखाना असंभव है| आत्मा अविनाशी, परिपूर्ण, अचल, स्थिर एवं सनातन है|*

है असंभव देख सको आत्मा द्वारा लौकिन नयन |
है यह विषय निर्विकार चिंतन हो न शोकमय अर्जुन ||२-२५||

भावार्थ: *आत्मा को लौकिक नेत्रों से देखना असंभव है| हे अर्जुन, यह निर्विकार एवं चिंतन का विषय है, तुम शोकमय न हो|*

अगर समझो तुम अर्जुन ले आत्मा नित्य जन्म मरन |
फिर भी नहीं कारण कोई हो जिससे तुम शोक मग्न ||२-२६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, अगर तुम यह समझो कि आत्मा नित्य जन्म-मरण वाली है, फिर भी ऐसा कोई कारण नहीं है जिससे तुम शोक मग्न हो|*

जो जन्मा वह पाएगा मृत्यु अवश्य हे कुन्तीनन्दन |
लेगा वह पुनर्जन्म अवश्य हुआ हो जिसका मरन ||
न करो शोक उसका न संभव जिसका परिशोधन ||२-२७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिसका जन्म हुआ है, वह मृत्यु को अवश्य प्राप्त होगा| जिसका मरण हुआ है, वह पुनर्जन्म (दोबारा जन्म) अवश्य लेगा| तुम शोक नहीं करो क्योंकि इसका कोई समाधान संभव नहीं है|*

था क्या कोई अस्तित्व तुम्हारा जन्म से पूर्व अर्जुन |
क्या रहेगा अस्तित्व तुम्हारा तत्पश्चात निधन ||
हुए हम प्रकट रूप शरीर केवल मध्य जन्म और मरन |
नहीं है यह विषय शोक समझो ध्यान से तुम अर्जुन ||२-२८||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जन्म से पूर्व क्या तुम्हारा कोई अस्तित्व था (क्या तुम इस शरीर रूप में थे)? क्या मरने के पश्चात तुम्हारा कोई अस्तित्व रहेगा (क्या तुम इस शरीर रूप में रहोगे)? यह शरीर जन्म एवं मृत्यु के मध्य में ही प्रकट हुआ है| हे अर्जुन, तुम ध्यान से समझो, यह विषय शोक का नहीं है|*

हों विस्मित देख दैह्य कोई करें युक्त विस्मि वर्णन |
कोई सुनें युक्त विस्मि करें प्रयास सब अवबोधन ||
पर सत्य यही अत्यंत कठिन समझ सकें यह भेद गहन ||२-२९||

भावार्थ: *आत्मा को देख कोई आश्चर्यचकित होता है, कोई आश्चर्य से वर्णन करता है, कोई आश्चर्य से सुनता है| सभी समझने का प्रयास करते हैं| लेकिन सत्य यही है कि इस गहन भेद को समझना कठिन है|*

आत्मा जो स्थित तन है वह नित्य अविनाशी अर्जुन |
है नहीं उचित करो शोक मरण रण किसी युद्धिवन ||२-३०||

भावार्थ: *हे अर्जुन, शरीर में स्थित आत्मा नित्य (सनातन) एवं अविनाशी है| किसी भी योद्धा के युद्ध में मरण के कारण शोक करना उचित नहीं है|*

न भूलो हो तुम क्षत्रिय अतः करो क्षात्र कर्म पालन |
है करना कर्म कर्तव्य तुम्हारा होना विमुख दल्भन ||
नहीं कर्म अन्य श्रेष्ठ क्षत्रिय अतिरिक्त लड़ें धर्म रन ||२-३१||

भावार्थ: *(हे अर्जुन) तुम नहीं भूलो कि तुम क्षत्रिय हो अतः क्षात्र कर्म का पालन करो| कर्म कर्तव्य (क्षात्र कर्तव्य) ही तुम्हारा धर्म है| कर्म से विमुख होना पाप है| क्षत्रिय के लिए धर्म युद्ध लड़ने से श्रेष्ठ कुछ नहीं है|*

है यह द्वार स्वर्ग जो हुआ तुम्हें प्राप्त अर्जुन |
हैं वह क्षत्रिय पुण्यवत मिला जिन्हें यह धर्म रन ||२-३२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, यह स्वर्ग द्वार है जो तुम्हें प्राप्त हुआ है| जिन क्षत्रियों को धर्म रण मिलता है (अर्थात धर्म रण लड़ने को मिलता है), वह सौभाग्यशाली हैं|*

यदि नहीं करोगे यह धर्म युद्ध तुम हे युद्धिवन |
खो यश धर्म होगे अधिकारी पाप तुम प्रियजन ||२-३३||

भावार्थ: *हे प्रिय योद्धा (अर्जुन), यदि तुम यह धर्म युद्ध नहीं करोगे तो यश एवं धर्म को खो कर पाप के अधिकारी होगे|*

करेगा गायन संसार सदैव तेरे अपयश का कथन |
है दुःखदायी यह अधिक अपेक्षा मरण मानित जन ||२-३४||

भावार्थ: *(यदि तू युद्ध नहीं लड़ेगा) संसार सदैव तेरे अपयश की गाथा गाएगा| यह एक सम्मानित व्यक्ति को मरण की अपेक्षा अधिक दुःखदायी है|*

समझेंगे महारथी तुम हटे युद्ध कारण भय अर्जुन |
हो तुम जिनके आदर्श अभी होगे लघु उनके नयन ||२-३५||

भावार्थ: *हे अर्जुन, महारथी यही समझेंगे कि तुम भय के कारण युद्ध से हट गए हो| जिनके तुम अभी आदर्श हो, उनकी दृष्टि में लघु हो जाओगे (अतः उनकी दृष्टि में गिर जाओगे)|*

कह अवाच्य करेंगे निंदा तेरे सामर्थ्य की शत्रुगन |
नहीं संभव हो अधिक दुःखदायी कोई और कारन ||२-३६||

भावार्थ: *न बोलने वाले शब्द कहकर तुम्हारे शत्रु तुम्हारी निंदा करेंगे| इससे अधिक दुःख देने वाला कोई और कारण संभव नहीं है|*

मिली यदि वीरगति युद्ध पाएगा निवास व्योमन |
हुआ यदि विजयी पाएगा राज्य भू कुन्तीनन्दन ||
पुकार रहा क्षत्रिय धर्म हो तत्पर युद्ध दृढ़ मन ||२-३७||

भावार्थ: *हे कुन्तीनन्दन, यदि युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए, तो स्वर्ग का निवास मिलेगा| अगर विजयी हुए तो पृथ्वी का राज्य भोगोगे| क्षत्रिय धर्म पुकार रहा है, युद्ध के लिए निश्चित मन से तत्पर हो जाओ|*

दुःख-सुख जय-पराजय समझें समान सदैव प्राज्ञ जन |
पालन कर्म कर्तव्य से नहीं भोगोगे पाप युद्धवन ||२-३८||

भावार्थ: *बुद्धिमान लोग दुःख-सुख, जय-पराजय को समान समझते हैं| हे योद्धा, कर्म कर्तव्य के पालन से पाप के भोगी नहीं बनोगे|*

है दैह्य भिन्न शरीर से यह ज्ञान सांख्ययोग अर्जुन |
दे यह ज्ञान सम बुद्धि करे दूर मोह ममता आवरन ||
सुनो तुम अब ज्ञान कर्मयोग करे जो मुक्त कर्म-बंधन ||२-३९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, आत्मा (शरीरी) एवं शरीर भिन्न हैं, यह ज्ञान सांख्ययोग कहलाता है| इस ज्ञान से सम बुद्धि प्राप्त होती है, एवं मोह ममता का आवरण दूर हो जाता है| अब तुम कर्मयोग ज्ञान के बारे में सुनो जिससे कर्म-बंधन का त्याग हो जाता है|*

होती जब इच्छा जानें और समझें धर्म अवबोधन |
हो विकास सम बुद्धि जो रहे अनवरत पूर्ण जीवन ||
है यह महत मंगल कृत्य जो करे रक्षा भय जन्म मरन ||२-४०||

भावार्थ: *जब धर्म ज्ञान को जानने एवं समझने की इच्छा होती है, तब सम बुद्धि (विवेक बुद्धि) का विकास होता है (विवेक बुद्धि जाग्रत होती है) जो सम्पूर्ण जीवन तक निरन्तर रहती है| यह (धर्म ज्ञान प्राप्त करने का आरम्भ) महान अनुष्ठान है जो हमें जन्म, मरण के भय से रक्षा करता है (अतः जन्म, मरण का भय नष्ट हो जाता है)|*

पा सकें लक्ष्य सहज सम बुद्धि जन हेतु दृढ़ प्रयोजन |
सम बुद्धि प्राप्त जन कर सकें केंद्रित अपने मन ||
यदि हुआ नहीं मन केंद्रित है असंभव लक्ष्य भेदन |
हैं ऐसे जन बहुशाखी बुद्धि उनकी अध्रुव अनित्यन ||२-४१||

भावार्थ: *सम बुद्धि प्राणी निश्चित प्रयोजन के लिए लक्ष्य की प्राप्ति सहजता से कर लेते हैं| सम बुद्धि से मन केंद्रित हो जाता है| यदि मन केंद्रित नहीं हैं तो लक्ष्य भेद करना असंभव है| ऐसे प्राणी (जिनका मन केंद्रित नहीं है) बहुशाखी (बहुत शाखाओं वाले) हैं जिनकी बुद्धि अनियंत्रित (दृढ़ नहीं है) है|*

अविवेकी जन जो रखें मुख मधुर आडम्बरी वचन |
है प्रेम सकाम कर्म वर्णित वेद हेतु स्वार्थी जन ||२-४२||
रहें जो सदैव तन्मय आसक्ति भाव काम हे अर्जुन |
लगे उपभोग ही श्रेष्ठ जिन्हें न हो कोई अन्य चिंतन ||
करें अनुष्ठान हेतु भोग यश तथा सादृश्य करन ||२-४३||
पुष्पित मधुर आडम्बर हर लिए जिनके अन्तः करन |
रहते आसक्त भोग ऐश्वर्य रति सदैव जिनके तन ||
नहीं हो सकते वह कभी साधक युक्त दृढ़ मनस्विन ||२-४४||

भावार्थः *हे अर्जुन, अविवेकी प्राणी जिनके मुख में मधुर दिखावटी वचन रहते हों, जिन्हें वेदों में वर्णित स्वार्थी लोगों की सकाम भावना से प्रेम हो, जो सदैव काम भावना से आसक्त हों, विलास ही जिन्हें श्रेष्ठ लगता हो, इसके अतिरिक्त जिन्हें और कोई विचार न आता हो, जो अनुष्ठान (धर्म यज्ञ इत्यादि) अथवा अन्य इस प्रकार के कार्य केवल भोग, यश, काम के किए ही करते हों, जिनके अंतःकरण को पुष्पित मधुर आडम्बरों ने हर लिया हो (अर्थात सांसारिक वस्तुओं की ओर लालायित रहते हों), जिनके शरीर केवल भोग, विलास, यश के प्रति आसक्त रहते हों, ऐसे प्राणी दृढ़ बुद्धि वाले साधक नहीं हो सकते|*

सत रजस तमस हैं त्रिगुण वर्णित वेद हे अर्जुन |
जो होता रहित राग द्वेष द्वन्द होता रहित-त्रिगुन ||
रहित-योगक्षेम हो स्थित हरि हो जाता वह आत्मवन ||२-४५||

भावार्थः *हे अर्जुन, वेदों में वर्णित त्रिगुण, सत, रजस एवं तमस हैं| जो राग, द्वेष, द्वन्द से रहित होता है वह इन त्रिगुणों से भी रहित होता है (अर्थात उसे प्रभु की माया नहीं सताती)| वह योग और क्षेम से रहित, ईश्वर में स्थित होकर (अर्थात चित्त को ईश्वर में लगाकर) आत्मवन हो जाता है (अर्थात परमात्मा प्राप्ति को ही अपना लक्ष्य बना लेता है)|*

नहीं आवश्यक जल लघु सरस् जब जल पूर्ण भाजन |
हो जाए प्राप्त ब्रह्मज्ञान तब है वेद ज्ञान अप्रयोजन ||२-४६||

भावार्थ: *जब जलाशय जल से परिपूर्ण हो तो छोटे गड्ढों से जल की आवश्यकता नहीं होती| (उसी प्रकार) जब ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो जाए तो वेद ज्ञान का कोई प्रयोजन नहीं रहता|*

है अधिकार तेरा केवल कर्तव्य कर्म पर हे अर्जुन |
है नहीं सामर्थ्य कर सके परिणाम को तू नियंत्रन ||
नहीं कर प्रयास बने हेतु कर्म प्रतिफल युद्धिवन |
कर निष्काम कर्म रहित-आसक्ति यही धर्म पावन ||२-४७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, केवल कर्म करना ही तेरा अधिकार है| उसके परिणाम के नियंत्रण में तेरी सामर्थ्य नहीं (अर्थात किए गए कर्म का फल तेरे हाथ में नहीं है)| हे योद्धा, कर्म के फल प्राप्ति का हेतु बनने का प्रयास न कर| आसक्ति-रहित निष्काम कर्म करना ही पवित्र धर्म है|*

कर त्याग आसक्ति रख सिद्धि असिद्धि में एकीभावन |
स्थित हो योग करे कर्म कहें वेद इसे समत्व अर्जुन ||२-४८||

भावार्थ: *हे अर्जुन, आसक्ति त्याग, सिद्धि एवं असिद्धि में सम भाव रखते हुए योग में स्थित होकर कर्म करने को वेद समत्व (योग) कहते हैं|*

ले आश्रय बुद्धि योग करो त्याग सकाम कर्म अर्जुन |
है सकाम कर्म निकृष्ट होते फल इसके दीन कृपन ||२-४९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, बुद्धि योग (सम बुद्धि) का आश्रय लो एवं सकाम कर्म करना त्याग दो| सकाम कर्म निकृष्ट है, इसके परिणाम क्षुद्र होते हैं|*

कर त्याग पाप पुण्य हो तू युक्त सम बुद्धि अर्जुन |
है समत्व योग कर्म कौशल करे मुक्त कर्म-बन्धन ||२-५०||

भावार्थ: *हे अर्जुन, पाप, पुण्य (की भावना) त्यागकर तू सम बुद्धि से युक्त हो जा (अर्थात सम बुद्धि को ग्रहण कर ले)| समत्व योग ही कर्म कुशलता है जो कर्म-बंधन से मुक्ति देती है|*

करें त्याग फल सांसारिक युक्त-समता साधक जन |
पाएं वह निर्विकार पद हो मुक्त जन्म-मरण बंधन ||२-५१||

भावार्थ: *समता-युक्त (सम बुद्धि) साधक सांसारिक फलों का त्याग कर जन्म-मरण के बंधन से मुक्त हो निर्विकार पद को प्राप्त करते हैं|*

जब हो पार तेरी बुद्धि मोहरूपी दलदल हे अर्जुन |
तब मिलेगा सब भोग से वैराग्य पाओगे तत्व भगवन ||२-५२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जब तुम्हारी बुद्धि मोहरूपी दलदल से पार हो जाएगी (अर्थात तुम्हारा मोह भंग हो जाएगा) तब समस्त भोग से तुम्हें वैराग्य मिल जाएगा (अर्थात भोगों को त्याग दोगे) और परमात्म-तत्व की प्राप्ति करोगे|*

है मोहवश तेरी बुद्धि विचलित इस काल पृथानंदन |
जब हो स्थिर आत्मरूप मिले नित्य संयोग भगवन ||२-५३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, इस समय तेरी बुद्धि मोहवश विचलित है| जब (बुद्धि) आत्मरूप में स्थिर हो जाएगी तो तेरा ईश्वर से नित्य संयोग हो जाएगा|*

अर्जुन उवाच

बोले अर्जुन बताओ केशव मुझे समाधिस्थ लक्षन |
कैसे बोलते बैठते चलते हैं वह स्थिर बुद्धि जन ||२-५४||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'हे केशव, मुझे अब परमात्म-तत्व प्राप्त प्राणियों के लक्षण बताओ| वह स्थिर बुद्धि वाले कैसे बोलते हैं, कैसे बैठते हैं एवं कैसे चलते हैं?'*

श्री भगवानुवाच

बोले भगवन जो कर सके जन त्याग सम्पूर्ण मन्मन् |
रहे संतुष्ट स्वयं हर काल वह स्थिर बुद्धि प्रथानन्दन ||२-५५||

भावार्थः *भगवान् बोले, 'प्रथानन्दन, जो अपनी सम्पूर्ण कामनाओं का त्याग कर सके एवं हर समय अपने आप में संतुष्ट रहे, वह प्राणी स्थिर बुद्धि है|'*

हो नहीं विचलित मन हों प्राप्त जब दुःख हे अर्जुन |
हो नहीं कामना सुख हो रहित राग भय क्रोध मन ||
यह लक्षण स्थिर बुद्धि समाधिस्थ मननशील जन ||२-५६||

भावार्थः *हे अर्जुन, दुःख प्राप्त होने पर मन विचलित नहीं हो, सुख प्राप्ति की कामना न हो, हृदय ममता, भय एवं क्रोध से रहित हो, यह लक्षण परमात्मा को प्राप्त स्थिर बुद्धि मननशील प्राणी के होते हैं|*

रहे जो सम हर काल शुभ अशुभ रहित आसक्ति जन |
न हो प्रसन्न न करे द्वेष कभी है वह स्थिर बुद्धि महन ||२-५७||

भावार्थः *जो हर समय शुभ, अशुभ में आसक्ति रहित हो, न कभी प्रसन्न और न द्वेष करने वाला हो, ऐसा ज्ञानी स्थिर बुद्धि वाला होता है|*

जैसे है सामर्थ्य कुर्म समेट सके अंग अपने तन |
समान हटा सके इन्द्रिय सुख से कर्मयोगी मन ||
हों न अल्प सम्बन्ध इन्द्रिय यह स्थिर बुद्धि लक्षन ||२-५८||

भावार्थः *जैसे कछुआ अपने शरीर में सभी अंगों को समेट लेने की सामर्थ्य रखता है, उसी समान कर्मयोगी अपने मन को इन्द्रिय सुखों से हटा लेता है| इन्द्रियों से किंचित मात्र सम्बन्ध न हो, यह स्थिर बुद्धि के लक्षण हैं|*

है संभव साधक करें प्रयास हेतु इन्द्रिय नियंत्रन |
हों निवृत विषय इन्द्रिय पर रहे अंदर रसबुद्धि मन ||

किन्तु स्थितप्राज्ञ करते हुए सदैव अनुभव भगवन ||
रखें नहीं कभी कोई रूचि किसी विषय रस मनन ||२-५९||

भावार्थ: *यह संभव है कि साधक भोग इन्द्रियों को वश में करने का प्रयास करें और इन्द्रिय विषयों से निवृत भी हो जाएं, परन्तु हृदय के अंदर रसबुद्धि फिर भी बनी रहती है| स्थितिप्राज्ञ (स्थिर बुद्धि वाले साधक) प्राणी परमात्त्व-तत्व का अनुभव करते हुए सभी विषय रसों में कोई रूचि नहीं रखते (अर्थात स्थिर बुद्धि वाले साधक वही हैं जिनके हृदय के किसी कोने में भी रसबुद्धि न हो)|*

हो यदि रस बुद्धि भाव हिय करें प्रयास इन्द्रिय दमन |
रहे स्मरण सदैव यह सनातन सत्य हे कुन्तीनन्दन ||
हर लेतीं क्लेशित इंद्रियां उसका बलपूर्वक मन ||२-६०||

भावार्थ: *हे अर्जुन, इन्द्रियों को वश में करने के प्रयास में यदि रस बुद्धि हो तो इस सनातन सत्य को सदैव स्मरण रखो कि यह दुःखदायी इंद्रियां बलपूर्वक उसके (साधक के) मन को हर लेती हैं (अर्थात मन को विचलित कर देती हैं)|*

हे साधक कर वश इंद्रियां हो समर्पित नारायन |
रस रहित जिसके वश इंद्रियां है स्थिर बुद्धि जन ||२-६१||

भावार्थ: *हे साधक, इन्द्रियों को वश में कर भगवान् को समर्पित हो| जिसके रस रहित इंद्रियां वश में हों, वही प्राणी स्थिर बुद्धि है|*

हो विषय सुख आसक्ति यदि करे मनुष्य रस चिंतन |
आसक्ति जगाए कामना हो उत्पन्न रोष अकृत मन्मन् ||२-६२||
है मूढ़ भाव प्रतिफल रोष जो करे भ्रष्ट बुद्धि जन |
भ्रष्ट बुद्धि से हो विवेक नष्ट करता वह मनुष्य पतन ||२-६३||

भावार्थ: *यदि मनुष्य रस चिंतन करता है तो सुख विषय (भोगों) में आसक्ति हो जाती है| आसक्ति कामनाओं को जाग्रत करती है| कामनाओं के अपूर्ण रहने से क्रोध उत्पन्न*

होता है| क्रोध का प्रतिफल मूढ़ भाव (सम्मोह) है, जिससे मनुष्यों की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है| बुद्धि भ्रष्ट होने से विवेक नष्ट हो जाता है, तब मनुष्य का पतन हो जाता है|

जो रहित राग द्वेष मन समझो वह कर्मयोगी जन |
कर वश इंद्रियां करे भोग विषय यथोचित सज्जन ||
है यही विधि हो जाए निर्मल साधक का अंतःकरन ||२-६४||
हों नाश तब सब दुःख हो जाए चित्त प्रसन्न पावन |
निःसंदेह हो तब तत्काल स्थिर बुद्धि प्रति भगवन ||२-६५||

भावार्थः *कर्मयोगी साधक वही है जो मन में राग, द्वेष से रहित हो| अपनी इन्द्रियों को वश में कर भद्र पुरुष के उपयुक्त विषय भोगे| इस विधि से साधक का अन्तःकरण निर्मल हो जाता है| तब सम्पूर्ण दुःख नष्ट हो जाते हैं तथा मन प्रसन्न एवं पवित्र हो जाता है| निःसंदेह तब तत्काल साधक की बुद्धि भगवान् में स्थिर हो जाती है|*

है असंभव होना बुद्धि स्थिर यदि नहीं नियंत्रित मन |
नहीं रहती निष्काम भावना सादृश्य अयुक्त भूजन ||
कारण इसके रहे अशांति हो नहीं नर सुखी जीवन ||२-६६||

भावार्थः *यदि मन संयमित नहीं हैं तो स्थिर बुद्धि होना असंभव है| इस प्रकार के अयुक्त प्राणी में निष्काम भावना नहीं होती| इस कारण अशांति रहती है और मानव का जीवन सुखी नहीं रहता|*

जिस प्रकार बहती नौका जिस ओर बहाव पवन |
वैसे ही विचरे साधक यदि युक्त विषय इन्द्रिय मन ||
होती भ्रष्ट बुद्धि सादृश्य इन्द्रिय विषय युक्त जन ||२-६७||

भावार्थः *जैसे वायु का बहाव नौका को अपनी दिशा की ओर खींच ले जाता है, उसी प्रकार साधक का मन विषय में विचरण करने वाली इन्द्रिय की ओर हो जाता है| विषय इन्द्रिय युक्त प्राणी की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है|*

हों नियंत्रित समस्त विषय भोग इंद्रियां युद्धिवन |
समझो बुद्धि उसकी स्थिर है वह समर्पित भगवन ||२-६८||

भावार्थ: *हे महायोद्धा, जो प्राणी समस्त विषय भोग इन्द्रियों को नियंत्रण कर ले, उसकी बुद्धि स्थिर समझो| वह प्रभु को समर्पण है|*

है जग सम दुःखदायी निशा जो विमुख प्रभु भूजन |
जागता है संयमी रात्रि ले इच्छा पाए परम भगवन ||
जागें जो नर हेतु भव सुख वह सम काल रात्रि संतन ||२-६९||

भावार्थ: *प्रभु से विमुख प्राणी के लिए यह संसार दुःखदायी रात्रि के समान है| संयमी (साधक) इस रात्रि में परम भगवान् की इच्छा लिए हुए जागता है (अर्थात संयमी साधक प्रभु की प्राप्ति हेतु साधना करता रहता है)| जो प्राणी सांसारिक सुखों के लिए जागते हैं, वह संतों के लिए काल रात्रि के समान है|*

जैसे समाए जल पूर्ण नदी अचल सागर अन्तःकरन |
होता नहीं विचलित महान सागर इस कृत्य तटिन ||
न कर सकें वैसे विचलित भोग इन्द्रिय महास्विन |
पाए वह साधक परम शान्ति न कि काम कामी जन ||२-७०||

भावार्थ: *जिस प्रकार जल से पूर्ण नदी अचल सागर में समा जाती है और नदी के इस कृत्य (सागर में समाने) से महान सागर विचलित नहीं होता उसी प्रकार इन्द्रिय भोग महापुरुषों को विचलित नहीं कर सकते| इस प्रकार का साधक परम शान्ति को प्राप्त करता है, न कि काम से पीड़ित कामी प्राणी|*

कर त्याग सम्पूर्ण कामना हो स्पृहा रहित जो जन |
राग द्वेष अहंकार सम दुर्गुण रहित करे आचरन ||
पाए वह परम शान्ति सुन यह वेद वचन हे अर्जुन ||२-७१||

भावार्थः *हे अर्जुन, सम्पूर्ण कामनाओं को त्यागकर जो प्राणी विषय रहित हो जाते हैं, जो राग, द्वेष, अहंकार जैसे दुर्गुणों से रहित आचरण करते हैं, उन्हें परम शान्ति मिलती है, ऐसा वेद कहते हैं|*

होते वह लीन ब्रह्म जो करें यह पालन प्रथानन्दन |
होते नहीं मोहित वह और पाएं अंतकाल धाम भगवन ||२-७२||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद सांख्य योग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण द्वितीय अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थः *हे अर्जुन, जो इस प्रकार की साधना करते हैं वह ब्रह्म में लीन हो जाते हैं| वह कभी मोहित नहीं होते एवं अंतकाल में ब्रह्म-धाम पाते हैं (अर्थात निर्वाण पा जाते हैं)|*

ओम तत सत' भगवन्नाम का उच्चारण करते हुए अति पवित्र ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय महाकाव्य ग्रन्थ श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्री कृष्णार्जुन संवाद 'सांख्य योग' नाम का द्वितीय अध्याय जो जन कल्याण करेगा, समाप्त हुआ|

अध्याय ३: कर्मयोग:

अर्जुन उवाच

है यदि बुद्धि श्रेष्ठ अपेक्षित कर्म बोले अर्जुन |
तो क्यों देते आदेश करूं मैं घोर कर्म पालन ||३-१||
हो रही बुद्धि मोहित सुन आपके भ्रमित वचन |
दें निश्चित ज्ञान करूं प्राप्त कल्याण जनार्दन ||३-२||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'हे जनार्दन, यदि कर्म से बुद्धि श्रेष्ठ है तो आप मुझे घोर कर्म करने का आदेश क्यों दे रहे हैं? आपके भ्रमित वचन सुनकर मेरी बुद्धि मोहित हो रही है| आप मुझे निश्चित ज्ञान दें, जिससे मेरा कल्याण हो|'*

श्री भगवानुवाच

सुन हे पावन अर्जुन कथन मेरा बोले श्री भगवन |
की मैंने अवश्य चर्चा द्वि-विधा योग कर्म विद्वन् ||
करें निष्ठा सांख्ययोगी ज्ञान व् कर्मयोगी कर्मन् ||३-३||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'हे पवित्र अर्जुन, मेरा कथन सुन| मैंने अवश्य ही द्वि-विधा योग ज्ञान की चर्चा की| सांख्ययोगी की निष्ठा ज्ञान पर होती है, जब कि कर्मयोगी की कर्म पर|'*

हो न अनुभव निष्कर्मता पूर्व कर्म आरम्भ अर्जुन |
न मिल सके सिद्धि कभी करें त्याग यदि कर्म नित्यन ||३-४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, कर्म आरम्भ करने से पहले निष्कर्मता का अनुभव नहीं होता| अधीष्ट कर्म का त्याग करने से कभी सिद्धि प्राप्त नहीं होती|*

नहीं रह सके क्षण मात्र किए बिना कर्म कोई जन |
हैं हम आधीन प्रकृति जो करे बाध्य करना करन ||३-५||

भावार्थ: *कोई भी प्राणी एक क्षण भी कार्य किए बिना नहीं रह सकता| हम प्रकृति के आधीन हैं जो हमें कार्य करने के लिए बाध्य करती है|*

देह रूप से करे प्रयास जो कर्मेन्द्रिय नियंत्रन |
पर करता रहे चिंतन विषय इन्द्रिय सदैव स्व-मन ||
समझो उसे तुम मूढ़मति मिथ्याचारी हे अर्जुन ||३-६||

भावार्थ: *शारीरिक रूप से जो कर्मेन्दियों (श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, रसना एवं घ्राण) को नियंत्रण करने का प्रयास करता है परन्तु मन से विषय इन्द्रियों का चिंतन करता रहता है, हे अर्जुन, वह मूढ़मति मिथ्याचारी प्राणी है|*

है श्रेष्ठ वही जो कर सके मन से इन्द्रिय नियंत्रन |
हो निष्काम रहित-आसक्ति करे कर्मेन्द्रिय सेवन ||
वही सत साधक करे जो इस रीति कर्मयोग आचरन ||३-७||

भावार्थ: *वही श्रेष्ठ है जो मन से इन्द्रियों को नियंत्रित कर निष्काम भाव से आसक्ति-रहित कर्मेन्द्रियों का सेवन करे| जो साधक इस प्रकार कर्मयोग आचरण करता है, वही पावन है|*

करो कर्तव्य कर्म जो नियत शास्त्रविधि हे अर्जुन |
है उत्कृष्ट करना कर्म अपेक्षा बनना अकर्मण्य जन ||
नहीं संभव निर्वाह जीवन न करे यदि कर्म भूजन ||३-८||

भावार्थ: *हे अर्जुन, शास्त्रविधि के अनुसार कर्तव्य कर्म का पालन करो| कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ है| यदि प्राणी कर्म नहीं करेगा तो उसका जीवन निर्वाह संभव नहीं होगा|*

करे कर्म अन्य हेतु मन्मन् तब बंधे कुटुंब बंधन |
कर कर्म रहित आसक्ति हेतु यज्ञ तू कुन्तीनन्दन ||३-९||

भावार्थ: *मनोकामना हेतु अन्य कर्म करने वाला समुदाय बंधन में पड़ जाता है| हे कुन्तीनन्दन, आसक्ति रहित यज्ञ हेतु कर्म कर|*

किए जब आदिकाल ब्रह्मा ब्रह्माण्ड सृष्टि सृजन |
की रचना विधान कर्तव्य कर्म आदेश से भगवन ||
दिए आशीष पाओ उन्नति कर यज्ञ विधि अनुसरन ||
कर यह यज्ञ संभव हों पूर्ण सभी आपके मन्मन् ||३-१०||
कर सको प्रसन्न तुम देव कर यज्ञ विधि विधान भूजन |
करेंगे देव प्रत्युत कल्याण तुम्हारा और प्रियजन ||
पाएं परम सुख शान्ति कर निःस्वार्थ सेवा सब जन ||३-११||

भावार्थ: *जब आदिकाल (सृष्टि के आरम्भ) में ब्रह्मा ने ब्रह्माण्ड सृष्टि का निर्माण किया तब प्रभु के आदेश से कर्तव्य कर्म के विधि विधान की रचना की| उन्होंने (प्रजा को) आशीर्वाद दिया कि नियमों के साथ यज्ञ कर तुम उन्नति पाओ| इस यज्ञ के करने से तुम्हारी सभी मनोकामनाएं पूर्ण हों| प्राणी विधि विधान से यज्ञ कर देवों को प्रसन्न करें| तब प्रतिफल, देव तुम्हारा और (तुम्हारे) प्रियजनों का कल्याण करें| निःस्वार्थ सेवा कर तब प्राणी परम सुख, शान्ति पाएं|*

हो संतुष्ट यज्ञ दें देव तब द्रव्य हेतु कर्तव्य पालन |
करें प्रयोग यह द्रव्य हेतु लोक कल्याण अन्य जन ||
करे उपभोग स्वयं द्रव्य स्वार्थवश है नर रिक्वन् ||३-१२||

भावार्थ: *संतुष्ट होकर देव कर्तव्य पालन करने के लिए द्रव्य प्रदान करेंगे| देवों द्वारा दिए द्रव्य का दूसरों के कल्याण के लिए उपयोग करें| जो मनुष्य स्वार्थवश इस द्रव्य का स्वयं उपभोग करे, वह चोर है|*

पालन कर्तव्य कर्म निःस्वार्थ ही है यज्ञ-शेष अर्जुन |
जो करे अनुभव योग यह समझो तुम उसे श्रेष्ठजन ||
हो जाए वह मुक्त पाप बने तब उसका जीवन अभिशुन |
करें कर्म स्वार्थवश हैं पापी भोगें पाप आजीवन ||३-१३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, निःस्वार्थ कर्तव्य कर्म पालन ही यज्ञ-शेष है| जो इस योग का अनुभव करें अर्थात निःस्वार्थ भाव से कर्तव्य कर्म का पालन करें, वह श्रेष्ठ प्राणी हैं|*

वह सभी पापों से मुक्त होकर सफल जीवन बिताते हैं| जो पापी स्वार्थवश कर्म करते हैं वह आजीवन पाप के भागी बनते हैं|

हों उत्पन्न अन्न से भूजन करे वर्षा अन्न उत्पन्न |
वर्षा होती यज्ञ से और होते यज्ञ कर्म से संपन्न ||३-१४||
कर्म ज्ञान मिले वेद से हैं वेद स्वयं अक्षर निर्गुन |
हैं इस रीति सदैव स्थित कर्तव्य कर्म में भगवन ||३-१५||

भावार्थ: *समस्त प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं| अन्न वर्षा से उत्पन्न होते हैं| वर्षा यज्ञ से होती है| यज्ञ कर्म से संपन्न होते हैं| कर्म ज्ञान वेदों द्वारा मिलता है| वेद स्वयं अक्षर निर्गुण हैं| इस प्रकार परमात्मा पवित्र कर्तव्य कर्म में सदैव स्थित हैं|*

है कर्तव्य भूजन करे सृष्टि-चक्र अनुसरण हे अर्जुन |
जो नहीं चले इस रीति रहे पर विषय इन्द्रिय रमन ||
समझो वह नर अघायु करे वह व्यर्थ अपना जीवन ||३-१६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, इस सृष्टि-चक्र का अनुसरण करना प्राणी का कर्तव्य है| जो इस रीति पर नहीं चलता एवं विषय इन्द्रियों में रमण रहता है, उसे अघायु (पापमय जीवन बिताने वाला) समझो| वह अपना जीवन व्यर्थ करता है|*

रहता जो स्व-रमण हो तृप्त एवं सदैव लीन चिंतन |
नहीं कोई कर्म कर्तव्य विधि विधान हेतु उस जन ||३-१७||

भावार्थ: *जो स्वयं में रमण, सदैव संतुष्ट रहकर साधना में लीन रहता है उसके लिए कोई भी कर्तव्य कर्म विधि विधान लागू नहीं है|*

हेतु सम सिद्ध पुरुष नहीं कर्म अकर्म प्रयोजन |
नहीं होता उनका स्वार्थ सम्बन्ध किसी भी भूजन ||३-१८||

भावार्थः *सिद्ध पुरुष का कर्म अथवा अकर्म में कोई प्रयोजन नहीं होता (अर्थात कर्म करे अथवा न करे, किसी में कोई रूचि नहीं होती)| उसका किसी भी प्राणी के साथ स्वार्थ का सम्बन्ध नहीं होता|*

आसक्ति रहित युक्त श्रद्धा करे कर्तव्य कर्म जन |
करे इन्हें समर्पण हरि होंगे तब प्राप्त भगवन ||३-१९||

भावार्थः *प्राणी आसक्ति-रहित श्रद्धा पूर्वक कर्तव्य कर्म करे| इन्हें (इन कर्मों को) प्रभु को समर्पण करे तो परमात्मा की प्राप्ति होगी|*

कर प्राप्त परम सिद्धि कर्मयोग सम जनक राजन |
करे निष्काम कर्म पाए तब श्रेणी महापुरुष जन ||३-२०||

भावार्थः *राजा जनक की भांति कर्म योग से परम सिद्धि प्राप्त कर, निष्काम कर्म करने से प्राणी महापुरुष की श्रेणी पाएगा|*

करें अनुसरण सामान्य जन आचरण महास्विन |
किए प्रमाण प्रस्तुत महापुरुष हेतु हित लोकजन ||३-२१||

भावार्थः *जो उत्कृष्ट पुरुष आचरण करते हैं, उसका साधारण मनुष्य अनुसरण करते हैं| महापुरुषों ने प्रमाण सांसारिक मनुष्यों के हित के लिए प्रस्तुत किए हैं|*

कर अवलोकन मेरा आचरण गहन हे पृथानंदन |
है नहीं कर्म कोई त्रिलोक हो जो मुझे कठिन ||
नहीं कोई वस्तु त्रिलोक जो अप्राप्य मुझे अर्जुन |
फिर भी रहूँ करता सदैव कर्तव्य कर्म मैं सङ्गिन् ||३-२२||

भावार्थः *हे पृथानंदन, गहनता से मेरे आचरण को देख| त्रिलोक में कोई कर्तव्य मेरे लिए कठिन नहीं है| हे अर्जुन, ऐसी तीनों लोकों में कोई वस्तु नहीं जिसे मैं प्राप्त न कर सकूं| फिर भी मैं सदैव कर्तव्य कर्म करने में निरन्तर लगा रहता हूँ|*

नहीं करूं यदि मैं कर्तव्य धर्म पालन पृथानंदन |
हो हानि विश्व करें सब जन मेरे अकर्तव्य अनुसरन ||३-२३||
होंगे पथ भृष्ट तब हेतु मेरे अकर्म सभी भूजन |
हों उत्पन्न वर्णशंकर करें जो नाश समस्त वासिन ||३-२४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, यदि मैं अपने कर्तव्य धर्म का पालन नहीं करूं तो विश्व की बड़ी हानि होगी| सभी प्राणी मेरे अकर्तव्य (कर्तव्य धर्म का पालन न करना) का अनुसरण करेंगे| मेरे अकर्म के कारण सभी प्राणी पथ भृष्ट हो जाएंगे जिससे वर्णशंकर उत्पन्न होंगे जो प्रजा का विनाश कर देंगे|*

करें अज्ञानी आसक्ति युक्त कर्म भरतवंशी अर्जुन |
हो एकाग्र करते पर रहित-आसक्ति कर्म बुद्धिजन ||
रहता लक्ष्य जन कल्याण सदैव इन तत्वज्ञ महास्विन ||३-२५||
यद्यपि करते सदा यथोचित कर्तव्य कर्म यह बुद्धिवन |
पर नहीं करते कभी भ्रम उत्पन्न वह कर्म अबुद्धिजन ||
करने देते वह इच्छित कर्म इन आसक्ति युक्त जन ||
देते उन्हें ही ज्ञान जो कर सकें उनका अनुसरन ||३-२६||

भावार्थ: *हे भरतवंशी अर्जुन, अज्ञानी लोग आसक्ति युक्त कर्म करते हैं| एकाग्रता के साथ बुद्धिमान लोग आसक्ति-रहित कर्म करते हैं| इन तत्वज्ञ महापुरुषों का लक्ष्य लोक कल्याण होता है| वह अज्ञानी पुरुषों के आसक्ति युक्त कर्म करने पर भ्रम उत्पन्न नहीं करते| वह उन्हें उनके इच्छित कर्म करने देते हैं| वह उन पुरुषों को ही ज्ञान देते हैं जो उनका अनुसरण कर सकें (अर्थात शास्त्र संगत कर्म कर सकें)|*

कर्ता कर्म है प्रकृति गुण होता ऐसा भाव बुद्धिजन |
समझो उसे अहंकारी रखे भाव स्व-कर्ता अर्जुन ||३-२७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, सब कर्म का कर्ता 'प्रकृति गुण' है, बुद्धिमान लोगों में ऐसा भाव होता है| जो स्वयं-कर्ता भाव रखते हैं, वह अहंकारी हैं|*

जो निपुण विभाग गुण और कर्म वह तत्वज्ञानी जन |
करते पालन गुण वह सदैव शास्त्रविधि प्रचोदन ||
नहीं संभव हो जाएं आसक्त वह मोह माया लौक्यन ||३-२८||

भावार्थ: *जो गुण एवं कर्म विभागों में निपुण हैं, वह प्राणी तत्व ज्ञानी हैं| वह सदैव शास्त्रविधि नियम से गुणों का पालन करते हैं| ऐसा संभव नहीं हैं कि वह सांसारिक मोह माया में आसक्त हो जाएं|*

रहें मोहित प्रकृतिजन्य गुण हैं वह अज्ञानी जन |
रहें आसक्त गुण और कर्म वह मूर्ख क्षुद्र-बुद्धिवन ||
नहीं होते विचलित तत्व ज्ञानी इन अज्ञानी करन ||३-२९||

भावार्थ: *अज्ञानी पुरुष प्रकृतिजन्य गुणों से मोहित रहते हैं| यह मंदबुद्धि मूर्ख लोग (सत, रजस और तमस) प्रकृति गुणों में आसक्त रहते हैं (अर्थात सकाम कर्म करते हैं)| तत्व ज्ञानी इन अज्ञानी पुरुष के कर्मों से विचलित नहीं होते (अर्थात उन्हें उनके कर्म करने की स्वतन्त्रता देते हैं)|*

कर विचार विवेक बुद्धि करो कर्तव्य कर्म अर्जुन |
कर पालन क्षात्र धर्म हो तत्पर तुरंत इस धर्म रन ||
रहित भाव काम मोह विषाद करो कर्म मुझे अर्पन ||३-३०||

भावार्थ: *हे अर्जुन, विवेक बुद्धि से अपने कर्तव्य कर्म पर विचार करो| क्षात्र धर्म का पालन करते हुए तुरंत धर्म युद्ध को तैयार हो जाओ| काम, मोह, संताप से रहित हो कर अपने कर्म को मुझे अर्पित करो|*

हो रहित दोष-द्दष्टि करे जो नर यह मत अनुसरन |
निष्ठा पूर्वक करे जो सम्पूर्ण कर्म मुझे समर्पन ||
मिले मुक्ति उस प्राज्ञ जन तुरंत सभी कर्म बंधन ||३-३१||

भावार्थ: *जो प्राणी दोष-दृष्टि से रहित होकर मेरे मत का अनुसरण करता है और निष्ठापूर्वक अपने कर्मों को मुझे समर्पित कर देता है, उस ज्ञानी पुरुष की सभी कर्म बंधनों से तुरंत मुक्ति मिल जाती है|*

कर दोषारोपण मुझ पर जो नर करें नहीं कर्म पालन |
समझो उन्हें मोहित ज्ञान अबुद्धि अविवेकी भूजन ||
भोग संग्रह ममता इच्छा से हो अवश्य उनका पतन ||३-३२||

भावार्थ: *मुझ पर दोषारोपण कर जो प्राणी अपने कर्म का पालन नहीं करते, उन्हें ज्ञान में मोहित मूढ़ एवं अविवेकी समझो| भोग, संग्रह, ममता की लिप्सा से इनका पतन निश्चित है|*

हो पराधीन निज निज स्वभाव करें सब कर्म भूजन |
प्राज्ञ करें चेष्टा हो सके यथावत धर्म कर्म पालन ||
नहीं आए काम हठ कभी सुनो हे वीर पृथानंदन ||३-३३||

भावार्थ: *अपने अपने स्वभाव से परवश हो कर प्राणी सब कर्म करते हैं| बुद्धिमान लोग प्रयत्न करते हैं कि वह यथावत धर्म कर्म का पालन करें| हे अर्जुन, इस विषय में हठ किसी के काम नहीं आता|*

रहते इन्द्रिय विषय राग द्वेष अंतर्मन सब भूजन |
नहीं होते प्राज्ञ वश इन शत्रु देते जो दुःख गहन ||३-३४||

भावार्थ: *हर प्राणी के अंतर्मन में विषय इन्द्रियों के राग, द्वेष रहते हैं (अर्थात छिपे रहते हैं)| बुद्धिमान लोग इनके वश में नहीं आते क्योंकि यह शत्रु गहन दुःख देने वाले हैं|*

समझो स्व-धर्म श्रेष्ठ अपेक्षा अन्य धर्म हे अर्जुन |
है संभव अन्य धर्म हो सकता अधिक गुण संपन्न ||
समझो अन्य धर्म हो कितना भी शुभ पर भयदायन ||
करो सदा स्व-धर्म जो है शुभ चाहे हो इसमें मरन ||३-३५||

भावार्थ: हे अर्जुन, अपने धर्म को दूसरे धर्म की अपेक्षा श्रेष्ठ समझो| यह संभव है कि दूसरा धर्म अधिक गुण संपन्न हो सकता है| दूसरा धर्म कितना भी उत्कृष्ट हो पर भय देने वाला है| सदैव स्व-धर्म ही करो जो शुभ है चाहे उसमें मरण हो|

अर्जुन उवाच

हे माधव क्यों करता प्राणी पाप पूछे यह अर्जुन |
है कौन प्रेरणा जो करे प्रेरित कृत्य इस आचरन ||३-३६||

भावार्थ: *अर्जुन ने पूछा, 'हे माधव, प्राणी पाप क्यों करता है? कौन सी ऐसी प्रेरणा है जो उसे ऐसा कृत्य एवं आचरण करने को प्रेरित करती है?*

श्री भगवानुवाच

काम भावना दे रजोगुण है कारण अघ बोले भगवन |
दे असफल काम जन्म क्रोध जो महापाप अर्जुन ||
हैं काम क्रोध अति वैरी जो बनें हेतु पाप भूजन ||३-३७||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'हे अर्जुन, काम भावना रजोगुण देती है जो पाप का कारण है| काम की असफलता क्रोध देती है जो महापाप है (अपूर्ण काम क्रोध का कारण है)| गहन शत्रु काम एवं क्रोध प्राणी को पाप कराने के हेतु हैं|*

जैसे ढके धूमक अनल जेर गर्भ और धूलि दर्पन |
सादृश्य ढके बुद्धि विवेक हों जब लौकिक मन्मन् ||३-३८||

भावार्थ: *जिस प्रकार धुंआ अग्नि को, जेर (अंडाशय झिल्ली) गर्भ को एवं धूल दर्पण को ढक लेती है, उसी प्रकार सांसारिक कामना की इच्छा विवेक बुद्धि को ढक लेती है|*

समझो समान अनल अतृप्त कामना कुन्तीनन्दन |
यह रिपु रूप ढके नित्य पावन विवेक बुद्धिजन ||३-३९||
इन्द्रिय मन बुद्धि हैं स्थान कामना हे अर्जुन |
करें यह मोहित शरीर बन आवरण ज्ञानी भूजन ||३-४०||

करके वश इंद्रियां हे श्रेष्ठ भरतवंशी अर्जुन |
कर प्रयास हो विनाश महापापी काम द्विषन् ||
है यह रिपु जो करे विनाश ज्ञान विज्ञान अंतर्मन ||३-४१||

भावार्थ: *हे अर्जुन, इन्द्रिय, मन और बुद्धि में कामना का वास है| यह आवरण बनकर बुद्धिमान प्राणियों के शरीर को मोहित कर देते हैं| हे कुन्तीनन्दन, कामना को अग्नि के समान समझो जो अतृप्त रहती है| यह शत्रु रूप बुद्धिमान पुरुषों के पावन विवेक को ढक लेती हैं| हे श्रेष्ठ भरतवंशी अर्जुन, इन्द्रियों को वश में कर महापापी शत्रु काम का विनाश करने का प्रयास कर| यही वह शत्रु है जो अंतर्मन के ज्ञान और विज्ञान का नाश करता है|*

हैं इंद्रियां सबल श्रेष्ठ व्यापक सूक्ष्म अर्जुन |
है मन श्रेष्ठ अपेक्षित इन्द्रिय और बुद्धि श्रेष्ठ मन ||३-४२||
है बुद्धि से परम काम यह समझ स्पष्ट युद्धिवन |
जान यह परम मत कर वश काम शूरवीर अर्जुन ||
कर नाश कामरूप दुर्जय रिपु इस भांति प्रियजन ||३-४३||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद कर्म योग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण तृतीय अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थ: *हे अर्जुन, इंद्रियां सबल, श्रेष्ठ, व्यापक एवं सूक्ष्म हैं| इन्द्रियों से श्रेष्ठ मन है| मन से श्रेष्ठ बुद्धि है| बुद्धि से परम काम है| यह तू स्पष्ट रूप से समझ| हे शूरवीर अर्जुन, इस परम मत को जान कर तू काम को वश में कर| हे प्रिय, इस भांति कामरूप दुर्जय शत्रु का विनाश कर|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद् भगवद् गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'कर्मयोग' नामक तृतीय अध्याय संपूर्ण हुआ |

अध्याय ४: ज्ञानकर्मसन्यासयोग:

श्री भगवानुवाच
दिए ज्ञान प्रथम हम रवि शाश्वत कर्मयोग अर्जुन |
सौपे ज्ञान तब सूर्य स्व-पुत्र वैवस्वत मनु पावन ||
वैवस्वत तब दिए यह ज्ञान इक्ष्वाकु बोले भगवन ||४-१||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'हे अर्जुन, सर्वप्रथम हमने यह अविनाशी कर्मयोग ज्ञान सूर्यदेव को दिया| सूर्यदेव ने तब यह ज्ञान अपने पावन पुत्र वैवस्वत मनु को सौंपा| वैवस्वत मनु ने तब इस ज्ञान को इक्ष्वाकु (मनु वैवस्वत के पुत्र) को दिया|*

जानें राजऋषि कर्मयोग परम्परागत हे युद्धिवन |
हो गया लुप्त यह प्रमुख ज्ञान दीर्घान्तर भुवन ||४-२||

भावार्थ: *हे योद्धा, कर्मयोग ज्ञान राजऋषियों को परम्परा से मिला (गुरु-शिष्य ज्ञान श्रुति)| लम्बे समय के अंतराल में यह महत्वपूर्ण ज्ञान पृथ्वी से लुप्त हो गया|*

हो तुम मेरे नितांत भक्त सखा दूं यह ज्ञान सनातन |
है यह कर्मयोग ज्ञान श्रेष्ठ रहस्य प्रिय पृथानंदन ||४-३||

भावार्थ: *हे प्रिय अर्जुन, तुम मेरे अत्यंत भक्त सखा हो अतः मैं यह सनातन ज्ञान तुम्हें देता हूँ| यह कर्मयोग ज्ञान एक श्रेष्ठ रहस्य है|*

अर्जुन उवाच
लिए जन्म तुम इस युग पर सूर्य सनातन बोले अर्जुन |
कैसे समझूं दिए यह ज्ञान तुम रवि आदि सृष्टि सृजन ||४-४||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'आप तो इस युग में जन्मे हैं परन्तु सूर्य तो पुरातन हैं| मैं कैसे समझूं कि आपने सृष्टि के आरम्भ में यह ज्ञान सूर्य को दिया था?'*

श्री भगवानुवाच

हो चुके जन्म मेरे तेरे अनेक इस विश्व बोले भगवन |
है बोध मुझे सब जन्म पर नहीं तुझे हे पृथानंदन ||४-५||

भावार्थः *भगवान् बोले, ' हे अर्जुन, मेरे और तेरे अनेक जन्म इस विश्व में हो चुके हैं| मुझे सब जन्मों का बोध है पर तुम्हें नहीं|'*

समझो मुझे अजन्मा अव्यय स्वामी समस्त भूजन |
कर अधीन प्रकृति होता योग से प्रकट मैं भुवन ||४-६||

भावार्थः *मुझे अजन्मा, अविनाशी, समस्त प्राणियों का स्वामी समझो| मैं अपनी प्रकृति को अधीन कर योग से पृथ्वी पर प्रकट होता हूं (अर्थात अवतार लेता हूं)|*

हों जब लुप्त धर्म बढ़ें अधर्म हे भरतवंशी अर्जुन |
हूं प्रकट साकार रूप तब हरूं कष्ट मैं भूजन ||४-७||

भावार्थः *हे भरतवंशी अर्जुन, जब धर्म लुप्त होता है और अधर्म बढ़ जाता है तब मैं प्राणियों के कष्ट हरण करने के लिए साकार रूप में प्रकट होता हूं|*

करने रक्षा साधु संत और विनाश अधर्मीजन |
लेता अवतार युग युग हेतु स्थापना धर्म अर्जुन ||४-८||

भावार्थः *हे अर्जुन, साधु संतों की रक्षा, अधर्मियों का विनाश एवं धर्म की स्थापना हेतु (मैं) युग युग में अवतरित होता हूं|*

समझ सके तत्व जो मेरे दिव्य जन्म कर्म पृथानंदन |
पाए मोक्ष त्याग तन हो वासी साकेत धाम वह जन ||४-९||

भावार्थः *हे अर्जुन, जो मेरे दिव्य जन्म कर्म का तत्व समझ सकता है वह प्राणी शरीर त्याग के पश्चात मोक्ष एवं साकेत धाम निवास पाता है|*

हो रहित राग भय क्रोध रहे तल्लीन मुझ में जो जन |
ले आश्रय मेरा करे तप पाए रूप मम वह बुद्धिवन ||४-१०||

भावार्थ: *राग (ममता), भय एवं क्रोध से रहित होकर जो मेरे में तल्लीन रहे, जो मुझ पर आश्रित हो, तप करे, वह ज्ञानी मेरे स्वरुप को पा जाता है|*

दूँ आश्रय यथा मैं लें भक्त जिस भांति मेरी शरन |
करें सब भक्तजन सब प्रकार पथ मेरा ही अनुसरन ||४-११||

भावार्थ: *जिस प्रकार भक्त मेरी शरण लेते हैं, मैं उसी प्रकार उन्हें आश्रय देता हूँ| सभी भक्तजन सब प्रकार से मेरा ही मार्ग अनुसरण करते हैं|*

यदि है इच्छा हों सफल कर्म करते वह पूजन देवगन |
है संभव मिल सके सिद्धि कर्म तुरंत इस प्रयोजन ||४-१२||

भावार्थ: *जिन प्राणियों की इच्छा कर्म फल प्राप्त करने की है, वह देवताओं की आराधना करते हैं| इस माध्यम से उन्हें तुरंत कर्म सिद्धि मिलने की संभावना है|*

आधार गुण विभाग मैंने ही किए चार वर्ण सृजन |
हूँ यद्यपि सृष्टि कर्ता फिर भी हूँ मैं अव्यय भगवन ||
समझ सदैव शाश्वत अकर्ता मुझे युद्धिवन अर्जुन ||४-१३||
नहीं चाह मुझे कर्म फल नहीं लिप्त कर्म कदाचन |
जो समझे यह तत्व नहीं बंधता कभी कर्म बंधन ||४-१४||

भावार्थ: *गुण विभाग (सत, रज, तम) के आधार पर मैंने ही चार वर्णों को रचित किया है| मैं यद्यपि सृष्टि कर्ता हूँ फिर भी अव्यय ईश्वर हूँ| हे योद्धा अर्जुन, मुझे सदैव सनातन, अकर्ता ही समझ| मुझे किसी कर्म की सिद्धि की चाह नहीं है| मैं कभी कर्म में लिप्त नहीं होता| जो मेरे इस तत्व को समझ लेता है वह कभी कर्म बंधन में नहीं बंधता|*

जान यह तथ्य करते मुमुक्ष पूर्वत्र शुद्ध आचरन |
कर तू वही कर्म जो किए पूर्वज और पा विमोचन ||४-१५||

भावार्थ: *इस तथ्य को जान कर मुमुक्षुओं (मोक्ष की इच्छा वाले) ने पूर्व काल में शुद्ध आचरण किए हैं| तू भी वही कर्म कर जो पूर्वजों ने किए और निर्वाण प्राप्त कर|*

हो जाते भ्रमित गहन कर्म अकर्म ज्ञान से बुद्धिवन |
समझ कर्म तत्व इसका हो मुक्त कर्म बंधन अर्जुन ||४-१६||

भावार्थ: *कर्म, अकर्म के गूढ़ ज्ञान से बुद्धिमान (भी) भ्रमित हो जाते हैं| हे अर्जुन, तू इसका कर्म तत्व समझ कर्म बंधन से मुक्त हो जा|*

समझो भली भांति तत्व कर्म अकर्म विकर्म हे अर्जुन |
नहीं सरल समझना गति कर्म जो है अत्यंत गहन ||४-१७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, कर्म, अकर्म एवं विकर्म का तत्व भली भांति समझो| कर्म की गति अत्यंत गूढ़ है, इसे समझना सरल नहीं है|*

समझे जो अकर्म कर्म व् कर्म अकर्म है वह बुद्धिवन |
है वह कर्ता सर्व कर्म सत साधक योगी निपुन ||४-१८||

भावार्थ: *जो अकर्म को कर्म एवं कर्म को अकर्म समझता है, वह बुद्धिमान है| सम्पूर्ण कार्यों का कर्ता वह सत साधक निपुण योगी है|*

करो कर्म रहित आदि अंत संकल्प स्पर्धा अर्जुन |
जला दो इन्हें ज्ञान रूपी अग्नि बनो तुम बुद्धिवन || ४-१९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, आदि, अंत, संकल्प एवं कामना से रहित कर्म करो| इन्हें ज्ञान रूपी अग्नि से जला दो और बुद्धिमान बनो|*

रहित आसक्ति कर्म-फल रहे तृप्त अनाश्रित जो जन |
यद्यपि वह लिप्त कर्म पर यथार्थ में कर्मयोगी जन ||४-२०||

भावार्थ: *जो प्राणी कर्म-फल में आसक्ति रहित स्वछंद एवं संतुष्ट है, यद्यपि वह कर्म में लिप्त है परन्तु यथार्थ में कर्मयोगी प्राणी है|*

कर त्याग संग्रह कर लेता जो वश तन और अंतःकरन |
रहित काम करे कर्म हो न प्राप्त अघ कभी वह जन ||४-२१||

भावार्थ: *जो संग्रह का त्याग कर (मोह ,ममता का त्याग कर) अपने शरीर और अंतःकरण को वश में कर लेता है, वह कामना रहित यदि कर्म करता है तो उस साधक को पाप प्राप्त नहीं होता|*

रहित द्वन्द्व ईर्ष्या रहे तृप्त जो दिया भगवन |
रहे सम सिद्धि असिद्धि नहीं बंधता वह कर्म बंधन ||४-२२||

भावार्थ: *द्वन्द्व एवं ईर्ष्या से रहित प्रभु जो दें उससे तृप्त रहे, सिद्धि असिद्धि (कर्म फल मिले अथवा नहीं मिले) में समान रूप से स्थित हो, वह कर्म बंधन में नहीं बंधता|*

मिटा आसक्ति सर्वथा हुआ मुक्त फल-कर्म जो जन |
रख बुद्धि स्थित ज्ञान करे जो कर्म हेतु यज्ञ संचालन ||
हो जाते नष्ट कर्म सब ऐसे महापुरुष हे अर्जुन ||४-२३||

भावार्थ: *जिस प्राणी की आसक्ति (मोह ममता के प्रति प्रेम) सर्वथा मिट गई है, जो कर्मों के फल से मुक्त है, जिसकी बुद्धि ज्ञान में स्थित है, जो यज्ञ संचालन हेतु ही कर्म करता है, हे अर्जुन, ऐसे महापुरुषों के सम्पूर्ण कर्म नष्ट हो जाते हैं|*

हैं यज्ञ में अर्पण पात्र और हव्य ब्रह्म समझ अर्जुन |
देते आहुति अग्नि यज्ञ हैं ब्रह्म में स्थित जो जन ||
हैं लीन जो कर्म समाधि समझ उन्हें ब्रह्म सलक्षन |
हैं सब कर्म-फल ब्रह्म किए जो कामना रहित महन ||४-२४||

भावार्थः *अर्जुन, यज्ञ में अर्पण करने वाले पात्र एवं हव्य ब्रह्म हैं, ऐसा समझ| जो ब्रह्म में स्थित हैं, वह यज्ञ में अग्नि से आहुति देते हैं| जो प्राणी कर्म समाधि में लीन हों उन्हें ब्रह्म का ही रूप समझ| महापुरुषों के कामना रहित सब कर्म-फल ब्रह्म हैं|*

करते योगी अनुष्ठान दैव यज्ञ इस भांति हे अर्जुन |
देते हुए आहुति ब्रह्म अग्नि करें वह पावन हवन ||४-२५||

भावार्थः *हे अर्जुन, इस प्रकार योगी दैव यज्ञ का अनुष्ठान करते हैं| वह ब्रह्म अग्नि को आहुति देते हुए पवित्र यज्ञ करते हैं|*

हो अप्रवृत्त इन्द्रियाँ कर काम विषय पर नियंत्रन |
करें योगी ब्रह्म अग्नि अर्पित अपने विषय मन्मन् ||४-२६||

भावार्थः *इन्द्रियों में अप्रवृत्त (लीन नहीं होकर) काम विषयों को नियंत्रित कर योगी अपनी इच्छाओं को ब्रह्माग्नि में अर्पण कर देते हैं|*

करें योगी तन व् इंद्रियां समर्पण पावन हवन |
करें समर्पण इन्हें यज्ञ अग्नि हव्य रुप बुद्धिवन ||४-२७||

भावार्थः *योगी अपने शरीर और इन्द्रियों को हवन (यज्ञ) में समर्पण करें| ज्ञानी इन्हें यज्ञ अग्नि और हव्य के रूप में अर्पित करें|*

जो लीन तप होते व्यस्त पृथक पृथक प्रकार हवन |
करें कुछ द्रव्ययज्ञ कुछ तपयज्ञ कुछ योगयज्ञ योगिन ||
कर स्वाध्याय रूप यज्ञ करें कुछ पञ्च यम नियंत्रन ||४-२८||

भावार्थः *हे अर्जुन, जो (साधक) तप में लीन होते हैं, वह पृथक पृथक प्रकार के यज्ञ में व्यस्त रहते हैं| कुछ योगी द्रव्ययज्ञ, कुछ तपयज्ञ, कुछ योगयज्ञ और कुछ स्वाध्याय रूप यज्ञ कर पाँचों यमों को नियंत्रित करते हैं|*

करें अपानवायु में समर्पण प्राणवायु द्वारा हवन |
दें आहुति अपान प्राण में रोक गति प्राण अपानन ||
करें प्राप्त लक्ष्य सम प्राणायाम समझो यह अर्जुन ||४-२९||

भावार्थ: *हवन द्वारा प्राणवायु को अपानवायु में समर्पण करें| तब प्राण और अपान की गति रोक कर अपान की आहुति प्राण में दें| हे अर्जुन, इस प्रकार से प्राप्त लक्ष्य को प्राणायाम के समान समझ|*

कर नियमित आहार दें आहुति प्राण यज्ञ जो जन |
हैं ज्ञाता वह तत्व यज्ञ किए नष्ट अघ उन महास्विन ||४-३०||

भावार्थ: *नियमित आहार कर जो प्राणी अपने प्राण की आहुति यज्ञ में देते हैं, वह यज्ञ के तत्व के ज्ञाता हैं| उन महापुरुषों के सब पाप नष्ट हो चुके हैं|*

भोगते जो प्रसाद यज्ञ सम सोम पाते ब्रह्म सनातन |
न मिले सुख इहलोक नर जो नहीं करते यज्ञ पावन ||
पा सकें कैसे सुख परलोक कहो कुरुवंशी अर्जुन ||४-३१||

भावार्थ: *यज्ञ के अवशिष्ट अमृत को भोगने वाले प्राणी सनातन ब्रह्म को पाते हैं| जो प्राणी पवित्र यज्ञ नहीं करते उन्हें इहलोक में सुख नहीं मिलता| हे कुरुवंशी अर्जुन, तब वह परलोक में सुख कैसे प्राप्त कर सकते हैं?*

हैं वर्णित वेद वाणी बहु प्रकार यज्ञ पृथानंदन |
होते सब यह यज्ञ उत्पन्न कर्मजन्य हेतु कल्याण जन ||
कर पावन यज्ञ इहलोक हो जाओ मुक्त कर्म बंधन ||४-३२||

भावार्थ: *वेद वाणी में इस प्रकार के अनेक यज्ञों का वर्णन किया गया है| यह सब यज्ञ जन कल्याण हेतु कर्मजन्य से उत्पन्न होते हैं| इहलोक में पावन यज्ञ कर कर्म बंधन से मुक्त हो जाओ|*

है श्रेष्ठ ज्ञानयज्ञ अपेक्षा द्रव्ययज्ञ हे योद्धा अर्जुन |
होते विलीन सब कर्म पदार्थ तत्व ज्ञान में परिपूरन ||४-३३||

भावार्थ: *हे योद्धा अर्जुन, द्रव्यज्ञान की अपेक्षा ज्ञानयज्ञ श्रेष्ठ है| सभी कर्म एवं पदार्थ पूर्णतः तत्व ज्ञान में विलीन हो जाते हैं|*

करो प्राप्त यह तत्व ज्ञान जा कर शरण गुरु पावन |
कर प्रणिपात और सेवा करो दूर कुतुक महन ||
देंगें तुम्हें उपदेश ज्ञान गुरु तब तत्व ज्ञान गहन ||४-३४||

भावार्थ: *पावन गुरु की शरण में जाकर इस तत्व ज्ञान को प्राप्त करो| साष्टांग प्रणाम कर एवं उनकी सेवा कर हे महापुरुष, अपनी जिज्ञासा दूर करो| तब गुरु गूढ़ तत्व ज्ञान का तुम्हें उपदेश देंगे अर्थात तुम्हारी जिज्ञासा दूर करेंगे|*

कर अनुभव तत्व ज्ञान नहीं होगे तुम मोहित अर्जुन |
देखोगे सब नर और मुझ में तब सच्चिदानंद भगवन ||४-३५||

भावार्थ: *इस तत्व ज्ञान का अनुभव कर हे अर्जुन, तुम मोहित नहीं होगे | सभी प्राणियों और मुझ में तब सच्चिदानंद ईश्वर को देखोगे|*

हो यदि घोर पापी मध्य पापक इस जग पृथानंदन |
तरे भवसागर ले सहारा ज्ञान रूपी नैया वह जन ||४-३६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो पापीयों से भी अधिक पापी है, वह प्राणी भी इस ज्ञान रूपी नैया का सहारा ले कर भव सागर से पार हो जाता है|*

जैसे करती जलती अग्नि भस्म सब सामग्री ईंधन |
करे ज्ञान रूपी अग्नि भस्म तैसे सब अघ हे अर्जुन ||४-३७||

भावार्थ: *जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि में सब ईंधन को भस्म करने की सामर्थ्य है उसी प्रकार हे अर्जुन, ज्ञान रूपी अग्नि सभी पापों को भस्म कर देती है|*

निःसंशय है नहीं समान ज्ञान भूलोक कुछ पावन |
कर सिद्ध योग सम्यक पा लेते तत्व ज्ञान महास्विन ||४-३८||

भावार्थः *निःसंदेह पृथ्वी लोक पर ज्ञान के समान पवित्र कुछ नहीं है| योग को भली भांति सिद्ध कर महापुरुष तत्व ज्ञान को पा जाते हैं|*

जो जितेन्द्रिय तत्पर श्रद्धावान पाएं ज्ञान वह जन |
पाते परम शान्ति पा ज्ञान तुरंत साधक बुद्धिवन ||४-३९||

भावार्थः *जो जितेन्द्रिय एवं तत्पर प्राणी हैं, ऐसे श्रद्धावान को ज्ञान की प्राप्ति होती है| ज्ञान पाकर बुद्धिमान साधक तुरंत परम शांति प्राप्त करते हैं|*

हैं जो श्रद्धा-रहित विवेक-हीन कुतर्की जन |
निःसंदेह होते अग्रसर वह ओर पतन अर्जुन ||
नहीं मिलता सुख इहलोक परलोक ऐसे जन ||४-४०||

भावार्थः *हे अर्जुन, श्रद्धा और विवेक से रहित, कुतर्की प्राणी निःसंदेह पतन की ओर जाते हैं| ऐसे प्राणियों को इहलोक अथवा परलोक में सुख नहीं मिलता|*

करे जो विच्छेद सम्बन्ध जग द्वारा योग पृथानंदन |
कर नष्ट संशय बने आत्मवंत हो मुक्त कर्म बंधन ||४-४१||

भावार्थः *हे अर्जुन, जो योग द्वारा संसार से सम्बन्ध विच्छेद कर संशयों को नष्ट कर ले वह आत्मवंत (स्वरुप परायण) बनकर कर्म बंधन से मुक्त हो जाता है|*

करो दूर संशय जो हुआ हिय उत्पन्न अज्ञान अर्जुन |
काटो इसे ज्ञान शस्त्र से हो स्थित योग युद्धिवन ||४-४२||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद ज्ञानकर्मयोगसंयास नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण चतुर्थ अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थ: *हे अर्जुन, अज्ञान से उत्पन्न संशय को हृदय से दूर करो | हे योद्धा, इसे ज्ञान शस्त्र से काटकर योग (समता) में स्थित हो जाओ|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में ' ज्ञानकर्मयोगसंयास' नामक चतुर्थ अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय ५: सन्यासयोग:

अर्जुन उवाच
कर रहे प्रशंसा आप संन्यास कर्म बोले अर्जुन |
है कर्मयोग महान यह भी हैं आपके दृढ़ वचन ||
हो सर्वथा कल्याणकारी कहो वह श्रेष्ठ साधन ||५-१||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'आप संन्यास कर्म की प्रशंसा कर रहे हैं| कर्मयोग भी महान है, ऐसे भी आपके निश्चित वचन हैं| इन साधनों में से जो अति कल्याणकारी हो, वह कहो|'*

श्री भगवानुवाच
हैं सांख्य व् कर्मयोग दोनों उत्तम बोले भगवन |
है कर्मयोग उत्तमतर समझो युद्धिवन अर्जुन ||५-२||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'हे योद्धा अर्जुन, सांख्य योग एवं कर्मयोग दोनों ही उत्तम हैं| परन्तु कर्मयोग श्रेष्ठ है, ऐसा समझो|'*

है जो नर रहित-द्वेष रहित-कामना योद्धा अर्जुन |
हैं यह लक्षण जो बनाएं नर सन्यासी अति पावन ||
रहता वह सदा सुखी और होता रहित कर्म बंधन ||५-३||

भावार्थ: *हे योद्धा अर्जुन, द्वेष एवं कामना से रहित होना प्राणी को अत्यंत पवित्र सन्यासी बनाने के लक्षण हैं| वह सदैव कर्म बंधन से रहित होकर सुखी रहता है|*

हैं मूढ़ समझते सांख्य और कर्मयोग दें फल भिन्न |
पाएं परमात्म-तत्व करें किसी योग का अनुसरन ||५-४||

भावार्थ: *मूर्ख लोग सांख्ययोग एवं कर्मयोग को दो भिन्न फल देने वाला समझते हैं| किसी भी योग का अनुसरण करें, परमात्म-तत्व की प्राप्ति हो जाती है|*

सांख्य व् कर्मयोगी करें प्राप्त एक ही तत्व विद्यन् |
समझे जो सांख्य और कर्मयोग सम वही बुद्धिवन ||५-५||

भावार्थ: *सांख्ययोगी एवं कर्मयोगी को एक ही तत्व ज्ञान (परमात्म-तत्व) की प्राप्ति होती है| जो सांख्ययोग एवं कर्मयोग को समान समझता है, वही बुद्धिमान है|*

है दुर्लभ सिद्धि सांख्ययोग बिन कर्मयोग अर्जुन |
पा सकें तुरंत तत्व ज्ञान कर्मयोग से साधकजन ||
है यही साधन मुख्य करें जो प्राज्ञ मुनि अनुसरन ||५-६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, बिना कर्मयोग के सांख्ययोग की सिद्धि कठिन है| साधकगण कर्मयोग से शीघ्र ही तत्व ज्ञान की प्राप्ति कर सकते हैं| ज्ञानी मुनि मुख्यतः इसी साधन का अनुसरण करते हैं|*

हो जितेन्द्रिय कर सकें वश तन जो निर्मल आत्म जन |
देखें हरि हर प्राणी नहीं होते लिप्त वह कर्म बंधन ||५-७||

भावार्थ: *जिस निर्मल आत्म-स्वरुप मनुष्य ने अपनी इन्द्रियों एवं शरीर को वश में कर लिया है, हर प्राणी में ईश्वर देखता है, वह कर्म बंधन में लिप्त नहीं होता|*

पाए सांख्ययोगी ब्रह्म करे जब इस विधि का अनुसरन |
हर काल करे कोई कर्म जैसे गन्धग स्पृशन् खाए भोजन ||
करे निरूपण हो स्थिति अध्यासीन अथवा चलन || ५-८||
सुने बोले सोए ले श्वास करे जब मल मूत्र विसर्जन |
हों नेत्र खुले अथवा बंद रखे सदैव हिय यह धारन ||
हूँ नहीं मैं कर्ता कभी इन सब इन्द्रियों के करन ||५-९||

भावार्थ: सांख्ययोगी परमात्म-तत्व की प्राप्ति इस विधि के अनुसरण से प्राप्त कर सकता है| हर काल कोई भी कर्म करे जैसे देखे, सुने, सूंघे, बैठे, चले, भोजन ग्रहण करे, बोले, मल मूल विसर्जन करे, सोए, श्वास ले, नेत्र बंद अथवा खोले, सदैव अपने हृदय में यह भाव रखे कि मैं इन इन्द्रिय कर्मों का कर्ता नहीं हूँ|

त्याग कामना करे जो सम्पूर्ण कर्म समर्पण भगवन |
होता नहीं लिप्त अघ सम पत्र कमल जल उस भक्तजन ||५-१०||

भावार्थ: *आसक्ति त्याग कर जो भक्त अपने सम्पूर्ण कर्म प्रभु को समर्पित कर देता है जैसे कमल पत्र जल से लिप्त नहीं होता, उसी प्रकार वह पाप से लिप्त नहीं होता (अर्थात जिस प्रकार जल में रहते हुए कमल पत्र को जल स्पर्श नहीं करता उसी प्रकार भक्त को संसार में रहते हुए भी सांसारिक पाप स्पर्श नहीं करते|)*

त्याग आसक्ति करे कर्मयोगी कर्म द्वारा वयुन |
करें यह कर्म शुद्ध इन्द्रिय तन मन और अन्तःकरन ||५-११||

भावार्थ: *कर्मयोगी आसक्ति त्याग कर बुद्धि द्वारा जो कर्म करता है उससे इन्द्रिय, शरीर, मन और अन्तःकरण की शुद्धि होती है|*

त्याग कर्म फल पाए कर्मयोगी परम शान्ति पावन |
सकाम नर जो युक्त कामना बंधे वह कर्म बन्धन ||५-१२||

भावार्थ: *कर्मयोगी साधक कर्म फल की इच्छा त्याग कर परम शान्ति पाता है| सकाम पुरुष कामनाओं (इच्छाओं) से आसक्त होकर कर्म बंधन में बंध जाता है|*

रहे सुखी वह साधक संयमी नवद्वार नगर तन |
कर सके जब वह पूर्ण त्याग कर्म तन मन वचन ||
समझो उसे सांख्ययोगी तुम हे शूरवीर अर्जुन ||
जाने जो सत्य है प्रमत न करे न करवाए कोई करन ||५-१३||

भावार्थ: *हे शूरवीर अर्जुन, जो साधक सब कर्मों को तन, मन, वचन से त्याग कर सकता है वह संयमी पुरुष नवद्वार शरीर नगर में सुख से रहता है| वह बुद्धिमान है जो इस सत्य को समझता है कि वह न कर्म करता है और न करवाता है| उसे सांख्ययोगी समझो|*

नहीं रचते हरि संयोग कर्म कर्म-फल और कर्तापन |
हैं यह सब कार्य प्रकृति समझ भली भांति अर्जुन ||५-१४||

भावार्थ: *कर्म, कर्म-फल और कर्तापन के संयोग को प्रभु नहीं रचते| हे अर्जुन, यह कार्य प्रकृति का है, इसे भली भांति समझ|*

नहीं करते ग्रहण हरि शुभ और अशुभ कर्म भूजन |
अज्ञान आवरण से रहे ढका ज्ञान जानो यह अर्जुन ||
हो अज्ञानी इस हेतु मोहित होता साधक जीवन ||५-१५||

भावार्थ: *प्रभु किसी के शुभ एवं अशुभ कर्मों को ग्रहण नहीं करते| अज्ञान के आवरण से ज्ञान ढका हुआ है, हे अर्जुन, यह समझो| अज्ञानी हो इस कारण साधक का जीवन मोहित होता है|*

करें नष्ट अज्ञान अंतर्मन आत्मज्ञान से जो भूजन |
करें दीपित परम-तत्व वह अपने हिय सम सूर्य द्योतन ||५-१६||

भावार्थ: *जो पुरुष अंतर्मन के अज्ञान को आत्मज्ञान द्वारा नष्ट कर देते हैं वह सूर्य के प्रकाश की तरह अपने हृदय में परम-तत्व को प्रकाशित कर लेते हैं|*

हो स्थिति परमात्म-तत्व करें तन्मय बुद्धि और मन |
हो रहित पाप पाएं परम गति वह साधक हे अर्जुन ||५-१७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, वह साधक जो परमात्म-तत्व में स्थित होकर अपनी बुद्धि एवं मन को तन्मय कर लेते हैं, वह पाप रहित होकर परम गति को प्राप्त होते हैं|*

जो जन संपन्न विद्या विनय देखें सभी जन रूप भगवन |
हों वह ब्राह्मण चंडाल गौ गज स्वान या अन्य जीवन ||५-१८||
समझो जीता जग उस जन स्थित समता उनके मन |
हो चुके वह स्थित निर्दोष और सम ब्रह्म में अर्जुन ||५-१९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो विद्या एवं विनय से संपन्न पुरुष सभी में हरि रूप देखते हैं, वह ब्राह्मण, चांडाल, गाय, हाथी, कुत्ता या कोई भी जीव हो, उन प्राणियों ने (जीवित रहते हुए) विश्व को जीत लिया है, ऐसा समझो| उनका मन समता में स्थित है| वह निर्दोष एवं सम ब्रह्म में स्थित हो चुके हैं|*

हो न प्रसन्न पा प्रिय वस्तु हो पा अप्रिय न उद्विग्न |
है वह नर स्थिर-बुद्धि स्थित ब्रह्म बुद्धिवन अर्जुन ||५-२०||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो प्राणी प्रिय वस्तु पा हर्षित न हो एवं अप्रिय पा उद्विग्न न हो, वह ब्रह्म में स्थित स्थिर-बुद्धि विद्वान है|*

आसक्ति रहित बाह्य वस्तु पाए आत्मिक सुख वह जन |
हो लीन ध्यान ब्रह्म करे वह अनुभव सुख अनादिनिधन ||५-२१||

भावार्थ: *बाह्य वस्तु (सांसारिक वस्तु) से आसक्ति रहित साधक आत्मिक सुख प्राप्त करता है| वह ब्रह्म ध्यान में लीन होकर अक्षय सुख का अनुभव करता है|*

होते उत्पन्न भोग संयोग विषय इन्द्रिय कुंतीनंदन |
समझ इन्हें विनाशी नहीं होते रमण इनमें बुद्धिवन ||५-२२||

भावार्थ: *हे कुन्तीनन्दन, इन्द्रिय एवं विषय के संयोग से भोग (सांसारिक सुख) उत्पन्न होते हैं| इन्हें विनाशी समझ (इनका आदि एवं अंत होता है ऐसा विचार कर) विद्वान् इनमें रमण नहीं होते|*

कर ले जो नर संयत काम क्रोध इहलोक पूर्व मरन |
समझो उसे योगी पा सके वही परम सुख अर्जुन ||५-२३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो प्राणी मरण से पूर्व इहलोक (भूलोक) में काम और क्रोध को नियंत्रित कर ले उसे योगी समझो| वही परम सुख पाता है|*

हैं प्रसन्न जो अंतरात्मा करते वह ब्रह्म-तत्व रमन |
हैं वह सांख्ययोगी बुद्धिवन पा सकें वह निर्मोचन ||५-२४||

भावार्थ: *जो प्राणी अंतरात्मा में प्रसन्न रहता है, वह परमात्म-तत्व में रमण करता है| वह विद्वान् सांख्ययोगी निर्वाण की प्राप्ति करता है|*

कर नियंत्रित तन बुद्धि इन्द्रिय रत परहित जो जन |
हुए नष्ट संशय अघ करें वह ऋषि प्राप्त निर्मोचन ||५-२५||

भावार्थ: *तन, बुद्धि एवं इन्द्रिय को नियंत्रण में कर जो प्राणी लोक कल्याण में रत हैं उनके संशय एवं पाप नष्ट हो जाते हैं| वह ऋषि निर्वाण की प्राप्ति करते हैं|*

हैं जो रहित काम क्रोध संयत चित्त आत्म प्राज्ञ जन |
समझो उन्हें सब ओर परिपूर्ण निर्वाण ब्रह्म अर्जुन ||५-२६||

भावार्थ: हे अर्जुन, जो ज्ञानी पुरुष काम क्रोध से रहित एवं संयत चित्त हैं उन्हें सब ओर से निर्वाण ब्रह्म में परिपूर्ण समझो|

रख बाह्य विषय बाह्य करे स्थित मध्य भौं दृष्टि नयन |
करे संतुलित तब विचरित भीतर श्वसन अपान पवन ||५-२७||
कर सके जो साधक संयत बुद्धि इन्द्रियाँ और मन |
वह मुनि रहित आसक्ति भय क्रोध व् स्थित अबंधन ||५-२८||

भावार्थ: *बाह्य विषयों को बाहर ही रख कर भृकुटि के मध्य नेत्र दृष्टि को स्थिर करे| अपने भीतर विचरित प्राण एवं अपान वायु को संतुलित करे| ऐसा मुनि आसक्ति, भय एवं क्रोध से रहित है एवं मुक्त है|*

समझे जो मुझे भोक्ता यज्ञ तप सभी लोकेश महन |
सुहिय मधुर कृपालु पा जाए वह भक्त सुख अमन ||५-२९||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद कर्मयोगसंन्यास नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण पंचम अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थः *जो मुझे यज्ञ और तप का भोक्ता, सम्पूर्ण लोकों का महान् ईश्वर, सुहृदय, मधुर एवं कृपालु समझता है वह भक्त सुख और शान्ति को प्राप्त होता है|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'कर्मयोगसंन्यास' नामक पंचम अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय ६: ध्यानयोगः

श्री भगवानुवाच
कर त्याग कर्म फल करे जो प्राज्ञ कर्तव्य कर्म पालन |
है वह सन्यासी न कि जो करे त्याग अग्नि और करन ||६-१||

भावार्थ: *जो ज्ञानी कर्म फल का त्याग कर कर्तव्य पालन करता है वह सन्यासी है, न कि वह जिसने अग्नि एवं कर्म का त्याग किया है|*

संन्यास को ही समझो तुम योग युद्धिवन अर्जुन |
बिन त्याग संकल्प नहीं हो सकता कोई योगी जन ||६-२||

भावार्थ: *हे योद्धा अर्जुन, संन्यास को ही योग समझो क्योंकि संकल्प के त्याग किए बिना कोई योगी नहीं हो सकता|*

है इच्छा यदि साधक हो वह आरूढ़ योग अर्जुन |
हो सिद्धि तब जब हो वह लिप्त कर्तव्य कर्म पावन ||
हो आसीन योग करे प्राप्त शम और तत्व भगवन ||६-३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, यदि साधक की इच्छा योग में आसीन होने की हो तब वह पवित्र कर्तव्य कर्म में लिप्त होने पर ही सफलता प्राप्त कर सकता है| इस प्रकार योगासन हो कर शान्ति एवं परमात्म-तत्व की प्राप्ति करे|*

रहे जब नहीं आसक्ति विषय इन्द्रिय कर्म हे अर्जुन |
कर त्याग सभी संकल्प हो जाए वह योगासीन जन ||६-४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जब इन्द्रिय विषय एवं कर्म में आसक्ति नहीं रहती तब सम्पूर्ण संकल्पों का त्याग कर वह प्राणी योगासीन हो जाता है|*

करें साधक स्व-उद्धार स्वयं नहीं जाएं ओर पतन |
रहे स्मरण हो तुम स्वयं मित्र एवं स्वयं ही वैरिन ||६-५||

भावार्थ: *साधक को स्वयं ही अपना उद्धार करना चाहिए, पतन की ओर नहीं जाना चाहिए| स्मरण रहे कि तुम स्वयं मित्र एवं स्वयं ही शत्रु हो|*

पा सके जो विजय विषय द्वारा आत्मा पृथानंदन |
है मित्र आत्मा उसकी समझो ऐसा प्रिय अर्जुन ||
किन्तु जो अजितेन्द्रिय समझो आत्मा उसकी द्विषन् ||६-६||

भावार्थ: *हे प्रिय अर्जुन, जो आत्मा (स्वयं) के द्वारा अपने विषयों (इन्द्रियों) पर विजय प्राप्त कर लेता है उसकी आत्मा मित्र है, ऐसा समझो| लेकिन जो अजितेन्द्रिय है, उसकी आत्मा (स्वयं) उसकी शत्रु है|*

कर लेता प्राप्त विजय स्वयं पर होता तब योगी जन |
अनुकूल प्रतिकूल परिस्थिति रहे सदा शांत मन ||
रहे सम सुख दुःख मान अपमान पाए तब वह भगवन ||६-७||

भावार्थ: *जो स्वयं पर विजय प्राप्त कर लेता है, वही योगी है| अनुकूल अथवा प्रतिकूल परिस्थिति में उसका मन सदा शांत रहता है| सुख-दुःख, मान-अपमान में सम रहे तब उसे भगवद प्राप्ति हो जाती है|*

जो रहित विकार और तृप्त ज्ञान विज्ञान अंतःकरन |
है जितेन्द्रिय रखे बुद्धि सम मृदा स्वर्ण या ग्रावन ||
है युक्त योग वह जन पा सके परमात्म-तत्व अर्जुन ||६-८||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो विकार रहित है और अंतःकरण में ज्ञान, विज्ञान से तृप्त है, जो जितेन्द्रिय है, मिट्टी, स्वर्ण, पत्थर में सम बुद्धि रखता है, योग युक्त है, वह परमात्म-तत्व को प्राप्त करता है|*

रखे जो सम भाव प्रिय अप्रिय बंधु रिपु संत असंतन |
रहे सम उदासीन मध्यस्थ है वही सम बुद्धि श्रेष्ठ जन ||६-९||

भावार्थ: *जो प्रिय, अप्रिय, मित्र, शत्रु, संत, दुष्ट, उदासीन, मध्यस्थ सब में समता रखता है, वही सम बुद्धि श्रेष्ठ पुरुष है|*

बैठे साधक एकांत स्थान कर संयमित शरीर और मन |
करे स्थिर मन आत्मा हो मुक्त धन संग्रह और मन्मन् ||६-१०||

भावार्थ: *एकांत स्थान में बैठकर साधक अपने शरीर और मन को संयमित करे| धन का संग्रह एवं इच्छाओं से रहित होकर मन को आत्मा में स्थिर करे|*

बिछा भूमि कुश मृग छाल बैठे ऊपर शुद्ध आसन |
न अति ऊंचा न नीचा करे स्थापित सम तल आसन ||६-११||

भावार्थ: *कुश, मृग छाल एवं चादर बिछाकर शुद्ध आसन पर स्थित हो| इस आसन की स्थापना न तो अत्यंत ऊंचे और न ही अत्यंत नीचे, अपितु सम तल स्थान पर हो|*

कर चित्त एकाग्र हो इन्द्रियजित बैठे पावन आसन |
है यह विधि हेतु अभ्यास योग साधना सुन अर्जुन ||६-१२||

भावार्थ: *हे अर्जुन सुन| पवित्र आसन पर बैठ इन्द्रियों को जीत कर मन को एकाग्र करे| योग साधना के अभ्यास हेतु यही विधि है|*

कर अचल तन सिर ग्रीवा हो नासिका अग्र दर्शन |
बिन देखे किसी दिशा करे ध्यान इस प्रकार जन ||६-१३||

भावार्थ: *काया, सिर एवं गर्दन को अचल कर नासिका के अग्र भाग में देखे| किसी दिशा में न देखते हुए प्राणी अपना ध्यान लगाए|*

हो अभय कर अंतःकरण शांत करे ब्रह्मचर्य पालन |
कर संयमित चित्त हो आसीन युक्त लक्ष्य पाएं भगवन ||६-१४||

भावार्थः *निर्भय होकर, अंतःकरण को शांत कर, ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए, संयमित चित्त से भगवद प्राप्ति को लक्ष्य बना आसन पर आसीन हो|*

कर सके जो इस भांति साधक संयमित स्थिर तन मन |
पा सके वह योगी सुगति परम शान्ति व् तत्व भगवन ||६-१५||

भावार्थः *जो साधक इस प्रकार अपने मन, तन को स्थिर एवं संयमित कर सकता है उस योगी को निर्वाण, परमात्म-तत्व एवं परम शांति प्राप्त होती है|*

हो नहीं सकता सिद्ध योग कभी उस साधक का अर्जुन |
करे आहार और निद्रा अति या मित जो योगी जन ||६-१६||

भावार्थः *हे अर्जुन, उस साधक को योग कभी फलीभूत नहीं हो सकता जो अधिक भोजन करने वाला है अथवा कम भोजन करने वाला है, अधिक सोने वाला है अथवा कम सोने वाला है|*

संयमित आहार विहार करे योग साधक दुःख शमन |
करे प्रयास यथायोग्य हो सीमित जागरण शयन ||६-१७||

भावार्थः *संतुलित आहार, विहार से योग साधक का दुःख नाशक होता है| सीमित निद्रा एवं जागरण का यथायोग्य प्रयास करे|*

हो जाए जिस काल स्थित स्वरुप में स्व-नियंत्रित मन |
न हो आसक्ति किसी वस्तु है वह योग स्थिति अर्जुन ||६-१८||

भावार्थः *हे अर्जुन, जिस समय नियंत्रित मन स्वयं के स्वरुप में स्थित हो जाए, किसी भी वस्तु में आसक्ति न रहे तब उसे योग की स्थिति समझो|*

रहे स्थिर जैसे दीप ज्योति जब शांत मंडल पवन |
समझो है वही योगी हो गया जिसका स्थिर मन ||६-१९||

भावार्थ: *जैसे शांत वायु मंडल में दीप की लौ स्थिर रहती है, (उसी प्रकार) जिसका चित्त स्थिर हो गया हो उसे योगी समझो |*

योग सेवन से मिले शान्ति और हो नियंत्रित मन |
करे अनुभव तब साधक परम संतोष व् तत्व-भगवन ||६-२०||

भावार्थ: *योग सेवन से शांति मिलती है और मन नियंत्रित होता है| तब साधक परम संतोष एवं परमात्म-तत्व का अनुभव करता है|*

करते आत्यन्तिक अतीन्द्रिय बुध्दिग्राह्य सुख वेदिन् |
नहीं होते विचलित कभी परमात्म-तत्व योगीगन ||६-२१||

भावार्थ: *आत्यन्तिक, अतीन्द्रिय एवं बुध्दिग्राह्य सुख का अनुभव करते हुए योगी कभी परमात्म-तत्व से विचलित नहीं होते|*

नहीं जिससे कोई लाभ उच्चतम और न सम अर्जुन |
हो जब स्थित उसमें न हो घोर दुःख से विचलित मन ||६-२२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिस लाभ से उच्चतम कोई लाभ नहीं है और न समान है, उसमें स्थित होकर महान दुःख भी मन को विचलित नहीं कर सकता (अतः इस महान लाभ को प्राप्त करो)|*

जिसमें है दुःख संयोग का वियोग वह है योग अर्जुन |
कर अभ्यास इस ध्यानयोग का रहित-आलस हियन ||६-२३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिसमें दुःख के संयोग का वियोग है, वह योग है| इस ध्यानयोग का आलस रहित मन से अभ्यास कर|*

करे साधक त्याग कामना हुई जो हेतु संकल्प उत्पन्न |
बन जितेन्द्रिय रहे दूर विषय जो दें अल्प सुख जन ||६-२४||

भावार्थ: *साधक संकल्प से उत्पन्न कामनाओं का त्याग करे| इन्द्रियों को वश में कर, विषय जो क्षणिक सुख देने वाले हैं, प्राणी उनसे दूर रहे|*

पाएं धैर्य-युक्त बुद्धि से शनैः शनैः शान्ति योगीगन |
करो स्थित चित्त दैह्य में न करो कोई अन्य चिंतन ||६-२५||

भावार्थ: *धैर्य-युक्त बुद्धि से योगी को धीरे धीरे शान्ति मिलती है| अपने चित्त को आत्मा में स्थित कर फिर साधक कोई और अन्य चिंतन न करे|*

है स्वभाव करता विचरण विषय चंचल अस्थिर मन |
हो जाता स्थिर चित्त करे जब साधक इसे नियंत्रन ||६-२६||

भावार्थ: *चंचल अस्थिर मन का स्वभाव विषयों में विचरण करना है| साधक जब इसे नियंत्रित करता है तब चित्त स्थिर हो जाता है|*

हो गए हों सब नष्ट पाप जिस साधक हे पृथानंदन |
कर विक्षेप शांत हुआ सर्वथा पावन जिसका मन ||
है वह ब्रह्मरूप योगी पाए उत्तम सुख सत भगवन ||६-२७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिस साधक के सब पाप नष्ट हो गए हों, विक्षेप (रजोगुण) शांत कर जिसने अपने मन को सर्वथा पवित्र कर लिया हो, वह ब्रह्म रूप योगी है| वह उत्तम सुख एवं सत भगवान् को प्राप्त करता है|*

पाप रहित योगी जो कर सके स्थिर आत्मा स्व-मन |
पा परमात्म-तत्व करे वह अनुभव नित्य सुख अर्जुन ||६-२८||

भावार्थ: हे अर्जुन, पाप रहित योगी जो अपने मन को आत्मा में स्थिर कर सकता है वह परमात्म-तत्व का अनुभव कर नित्य सुख की प्राप्ति करता है|

सर्वत्र समदर्शी योगी है जिनका योग-युक्त मन |
देखते वह सम्पूर्ण जग स्थित स्व-रूप सम भगवन ||६-२९||

भावार्थ: *जो सर्वत्र समदर्शी योगी है, जिनका मन (अंतःकरण) योग से युक्त है, वह सम्पूर्ण जग को प्रभु के सम अपने स्वरुप में स्थित देखता है|*

देखे मम रूप सब प्राणी एवं सर्वत्र मुझे जो जन |
नहीं अदृश्य मैं उसको पाए सर्वत्र वह मेरा दर्शन ||६-३०||

भावार्थ: *जो सब प्राणियों में एवं सर्वत्र मुझे देखता है उसको मैं अदृश्य नहीं होता| वह सर्वत्र मेरे दर्शन करता है|*

भजे मुझे सदा जो जन हो स्थित एकात्म भाव अर्जुन |
रहे स्थित वह मुझ में ही हो पवित्र हर काल हर क्षन ||६-३१||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो प्राणी सदैव एकात्म भाव से मुझे भजता है वह हर समय, हर क्षण मुझ में ही पवित्र हो स्थित रहता है|*

देखे जो योगी सर्वत्र स्व-समान हर प्राणी अर्जुन |
रहे सम दुःख सुख हर दशा समझो उसे योगी महन ||६-३२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो योगी सर्वत्र हर प्राणी को अपने समान देखता है, हर परिस्थिति दुःख, सुख (आदि) में समान रहता है उसे महान योगी समझो|*

अर्जुन उवाच
समझाए जो आप समता पूर्ण योग बोले अर्जुन |
नहीं देखता स्थिर मन हेतु चंचलता हे मधुसूदन ||६-३३||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'हे मधुसूदन, जो आपने समता पूर्वक योग समझाया, मैं चंचल मन के कारण उसे स्थिर स्थिति में नहीं देखता|'*

चंचल बलशाली दृढ़ मन करे अति विचलित मधुसूदन |
समझूं है यह योग कठिन समान करना निग्रह पवन ||६-३४||

भावार्थः *हे मधुसूदन, चंचल, बलशाली, दृढ़ मन अत्यंत विचलित करने वाला है| यह योग कठिन है जैसे वायु को निग्रह करना, ऐसा मैं समझता हूँ|*

श्री भगवानुवाच

निःसंदेह है मन चंचल दुष्कर करना वश हे युद्धिवन |
पर संभव कर सकें निग्रह युक्त अभ्यास वैराग्य जन ||६-३५||

भावार्थः *हे योद्धा, निःसंदेह मन चंचल और कठिनता से वशीभूत होता है| परन्तु वैराग्य के अभ्यास से (माध्यम से) इसे प्राणी निग्रह (नियंत्रित) कर सकता है|*

है मत मम मिले कठिन योग यदि भक्त का असंयत मन |
पर जो करे वश मन विधिवत यत्न पा सके योग जन ||६-३६||

भावार्थः *मेरा ऐसा मत है कि साधक के अनियंत्रित मन से योग पाना कठिन है| लेकिन विधि पूर्वक मन को वश में करने के प्रयास से प्राणी को योग की प्राप्ति हो जाती है|*

अर्जुन उवाच

हुआ जो विचलित योग से पर हो श्रद्धा उसके मन |
करे प्रयास सामर्थ्य से पर नहीं हों सफल प्रयत्न ||
न पा सके सिद्धि योग वह पाए कौन गति हे कृष्न ||६-३७||

भावार्थः (*अर्जुन ने पूछा) हे कृष्ण, जिस श्रद्धालु का मन योग से विचलित हो गया हो, अपनी सामर्थ्य के अनुसार प्रयास करने पर भी जिसके प्रयत्न सफल न हों उसे योग सिद्धि नहीं मिल सकती पर उसे कौन सी गति मिलती है?*

हुआ मोहित ब्रह्म मार्ग पर रहित-राग जो जन |
क्या हो भ्रष्ट पाए विनाश वह सम मेघ छिन्न भिन्न ||६-३८||

भावार्थः *जो प्राणी ब्रह्म के मार्ग में मोहित हो गया हो पर राग-रहित है, क्या वह भ्रष्ट होकर छिन्न भिन्न मेघ के समान नष्ट हो जाता है?*

हो तुम्हीं जो कर सको दूर मेरा यह संशय भगवन |
नहीं विश्व ब्रह्मज्ञानी कोई अतिरिक्त आपके महन ||६-३९||

भावार्थ: *हे भगवन, मेरे इस संशय को केवल आप ही दूर कर सकते हैं क्योंकि इस विश्व में आपके अतिरिक्त कोई महान ब्रह्मज्ञानी नहीं है|*

श्री भगवानुवाच

सुन पार्थ नहीं होता विनाश उस जन बोले भगवन |
करे जो हितकर कर्म नहीं संभव हो दुर्गति उस जन ||६-४०||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'हे पार्थ, ऐसे प्राणी का विनाश नहीं होता| जो कल्याणकारी कार्य करते हैं उन प्राणियों की दुर्गति संभव नहीं|'*

करें प्राप्त पुण्यवान लोक होते जो योग भ्रष्ट जन |
करें वास दीर्घकाल ले जन्म गृह वंश शुद्ध आचरन ||६-४१||
अथवा लें जन्म योग भ्रष्ट योगी गृह प्रमत हे अर्जुन |
निःसंदेह यह जन्म अति दुर्लभ हेतु सामान्य भूजन ||६-४२||
हो प्रेरित ज्ञान पूर्व-जन्म रहता जो इस जन्म स्मरन |
करे वह जब योग इस जन्म हो सिद्ध वह योगीजन ||
हो निःसंशय सफल करे जब तप से वह साधना जन ||६-४३||

भावार्थ: *यदि प्राणी योग से भ्रष्ट हो जाएं तो वह पुण्यवान लोक को प्राप्त करते हैं| शुद्ध आचरण वाले प्राणियों के घर में जन्म लेकर वह दीर्घकाल तक वहां वास करते हैं| हे अर्जुन, अथवा योग भ्रष्ट योगी पंडितों के गृह में जन्म लेते हैं| निःसंदेह इस प्रकार का जन्म साधारण प्राणियों के लिए अत्यंत दुर्लभ है| पूर्वजन्म के ज्ञान के स्मरण से प्रेरित होकर वह इस जन्म में जब योग करता है तब वह सिद्ध होता है| तप से साधना करता हुआ (योग) वह निःसंदेह सफलता को प्राप्त होता है (अतः उसे योग सिद्धि होती है)|*

कारण पूर्वाभ्यास हुआ अवश होता आकृष्ट साधन |
हो जिज्ञासु योग करे वेदित सकाम कर्म वह जन ||६-४४||

भावार्थः *पूर्वाभ्यास के कारण अवश हुआ वह साधना (योग) की ओर आकर्षित होता है| योग में जिज्ञासा होने से वह वेद वर्णित सकाम कर्म करता है|*

कर प्रयास हो जाएं शुद्ध सब पाप कर्म साधकगन |
कर सिद्ध योग शनैः शनैः पाए परम गति अर्जुन ||६-४५||

भावार्थः *हे अर्जुन, प्रयास करने से साधक पूर्ण पाप कर्मों से शुद्ध होकर धीरे धीरे योग को सिद्ध करता हुआ परम गति को प्राप्त होता है (अर्थात साधक परमात्म-तत्व की प्राप्ति कर लेता है)*

तपस्वी ज्ञानयोगी व् कर्मयोगी में है योगी महन |
अतः बनो योगी है यह मेरा निश्चित मत बुद्धिवन ||६-४६||

भावार्थः *तपस्वी, ज्ञानयोगी एवं कर्मयोगी के मध्य योगी श्रेष्ठ है| इसलिए हे प्रमत, योगी बनो, ऐसा मेरा निश्चित मत है|*

है श्रेष्ठ योगी जो युक्त-श्रद्धा करे मेरा अनुसरन |
एकत्व भाव हो तल्लीन हिय गाए सदा मेरे सदगुन ||६-४७||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद आत्मसंयमयोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण षष्ठम अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थः *वह योगी श्रेष्ठ है जो श्रद्धा से मेरा अनुसरण करे (अर्थात मेरी आज्ञा का पालन करे)| एकत्व भाव से हृदय में तल्लीन हो मेरी सद्गुणों को गाए (अर्थात मेरा भजन करे)|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'आत्मसंयमयोग' नामक षष्ठम अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय ७ : ज्ञानविज्ञानयोग:

श्री भगवानुवाच
कर आसक्त मन मुझ में अभ्यास योग से बोले भगवन |
कैसे जानो मेरा समग्र रूप सुनो तुम अब अर्जुन ||७-१||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'हे अर्जुन, मन को अभ्यास योग से मुझ में आसक्त करो| मेरे समग्र रूप को कैसे जानोगे, अब यह सुनो|'*

विज्ञान सहित सम्पूर्ण ज्ञान करूँ मैं अब विवरन |
न रहे कुछ ज्ञातव्य पश्चात उसके विश्व में अर्जुन ||७-२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, विज्ञान सहित सम्पूर्ण ज्ञान का मैं अब विवरण करूंगा| इसके पश्चात विश्व में कुछ भी जानने योग्य नहीं रहेगा|*

हेतु पूर्ण सिद्धि करता प्रयास एक मध्य सहस्त्र जन |
पा सके मेरा तत्व केवल विशेष प्रयत्नशील बुद्धिवन ||७-३||

भावार्थ: *पूर्ण सिद्धि के लिए सहस्त्रों प्राणियों में एक प्रयास करता है| मेरा तत्व (परमात्म-तत्व) प्रयत्नशील बुद्धिमानों में कोई विशेष ही प्राप्त कर पाता है|*

है मेरी अपराप्रकृति विभक्त अष्ट प्रकार पृथानंदन |
मन बुद्धि अहंकार भू जल अग्नि आकाश और पवन ||७-४||
है भिन्न जीव भूत पराप्रकृति समझो तुम हे अर्जुन |
करूं मैं धारण दृश्यमान विश्व हेतु इस चेतन गुन ||७-५||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मेरी अपराप्रकृति आठ भागों में विभक्त है, मन, बुद्धि, अहंकार, पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश एवं वायु| मेरी जीव भूत पराप्रकृति इस (अपराप्रकृति) से भिन्न है| इस चेतन गुण से (अपराप्रकृति के कारण) मैं दृश्यमान विश्व को धारण करता हूँ|*

हेतु अपरा व् परा प्रकृति होती उत्पत्ति विश्वजन |
समझो मुझे कारक विश्व सृजन व् प्रलय अर्जुन ||७-६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, समस्त विश्व में प्राणियों की उत्पत्ति परा एवं अपरा प्रकृति के कारण ही होती है| मुझे ही ब्रह्माण्ड का सृजन कर्ता एवं प्रलय कर्ता समझो|*

नहीं कोई कारण व् कार्य मेरे अतिरिक्त इस भुवन |
समझो इस जग को ओत प्रोत मुझ में हे अर्जुन ||
जैसे बांधे धागा सूत का माला में मणि और रत्न ||७-७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मेरे अतिरिक्त इस विश्व में न कोई कारण है, न कार्य| इस विश्व को मुझ से ओत प्रोत समझो जैसे सूत का धागा माला में मणि एवं रत्न को बांधता है|*

हूँ मैं पेयों में रस व् सोम सूर्य में प्रभा अर्जुन |
हूँ मनुज में पुरुषार्थ ओम वेद और शब्द गगन ||७-८||

भावार्थ: *हे अर्जुन, में पेय पदार्थों में रस हूँ, चन्द्रमा एवं सूर्य में आभा हूँ, वेदों में ओम हूँ, आकाश में शब्द और प्राणियों में पुरुषार्थ हूँ|*

भू में पावन गंध अग्नि का तेज और जीवन सभी जन |
हूँ मैं   ही तप तपस्वी   में और सर्वव्यापी   अर्जुन ||७-९||

भावार्थ: *अर्जुन, पृथ्वी की पवित्र गंध, अग्नि का तेज, सभी प्राणियों की जीवन, तपस्वी का तप एवं सर्वव्यापी मैं ही हूँ|*

भूत में अनादि बीज और बुद्धि प्रमत में अर्जुन |
हूँ मैं ही संसार सार और तेज तेजस्वी भूजन ||७-१०||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मैं ही प्राणियों में अनादि बीज, बुद्धिमानों में बुद्धि, संसार का सार एवं तेजस्वियों के अंदर तेज हूँ|*

हूँ मैं बल उनका जो रहित कामना आसक्ति जन |
मैं ही धर्म-युक्त वेद अनुकूल कर्म हे अर्जुन ||७-११||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो प्राणी कामना एवं आसक्ति से रहित हैं, उनका बल मैं ही हूँ| मुझे ही तुम धर्म-युक्त वेद के अनुकूल काम समझो|*

सब सत रजस और तमस भाव हों मुझ से ही उत्पन्न |
पर मैं निलीन प्रत्येक भाव नहीं वह मुझ में अर्जुन ||७-१२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, सभी सात्विक, राजस एवं तामस भाव मेरे से ही उत्पन्न होते हैं लेकिन मैं न तो स्वयं इन भावों में हूँ और न यह भाव मुझ में हैं|*

जो हुआ मोहित भाव त्रिगुण हों उत्पन्न इस भुवन |
नहीं समझ सके वह मेरा अविनाशी रूप अर्जुन ||७-१३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, इस विश्व में त्रिगुणों (सत, तमस एवं रजस) द्वारा उत्पन्न भावों से मोहित हुआ (प्राणी) मेरे अविनाशी रूप को नहीं समझ सकता है|*

है समझना कठिन त्रिगुणमयी माया मेरी अर्जुन |
पर तरे सुगम माया आए जो मेरी शरण भूजन ||७-१४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मेरी त्रिगुणमयी (सत, रजस एवं तमस रूपी) माया अति दुस्तर है| किन्तु जो प्राणी मेरी शरण आ जाता है वह माया को सहजता से पार कर जाता है|*

पापी मूढ़ नराधम जन नहीं भजते कभी श्री भगवन |
हर लेती माया ज्ञान उनका समझो उन्हें आसुरी जन ||७-१५||

भावार्थ: *पापी (दुष्कर्म करने वाले), मूढ़ एवं नराधम प्राणी प्रभु का भजन कभी नहीं करते| माया उनका ज्ञान हर लेती है| उन्हें आसुरी प्राणी समझो|*

कर्ता-सुकृत आर्त जिज्ञासु और बुद्धिवन अर्जुन |
चतुर् प्रकार नर हैं समर्थ पा सकें शरण भगवन ||७-१६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, पवित्र कर्म कर्ता, आर्त (प्रभु का वियोगी), जिज्ञासु एवं बुद्धिमान, यह चार प्रकार के पुरुष भगवान् की (मेरी) शरण पाने में समर्थ हैं|*

है ज्ञानी भक्त श्रेष्ठ मध्य इन चतुर् प्रकार अर्जुन |
समझो उसे नित्य निरंतर अनन्य भक्त श्री भगवन ||
मैं अति प्रिय उसे और वह मेरा अति प्रिय भक्तजन ||७-१७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, इन चारों प्रकार में ज्ञानी भक्त श्रेष्ठ है| वह भगवान् का सदैव अनन्य परम पावन भक्त है| मैं उसे अति प्रिय हूँ और वह मेरा अति प्रिय भक्त है|*

यद्यपि उत्कृष्ट सब पर ज्ञानी भक्त मेरा निरूपन |
है अभिन्न मुझ से वह स्थित मम श्रेष्ठ गति बुद्धिवन ||७-१८||

भावार्थ: *यद्यपि सभी (चारों प्रकार के भक्त) भक्त उत्कृष्ट हैं पर ज्ञानी भक्त मेरा ही स्वरुप है| वह मुझ से अभिन्न है| वह बुद्धिमान मेरी श्रेष्ठ गति में स्थित है (अर्थात मेरे श्रेष्ठ रूप में स्थित है)|*

ले जन्म कई बार नर पा सके तब ब्रह्मज्ञान अर्जुन |
है प्रकृष्ट महात्मा जो समझे व्याप्त सर्वत्र भगवन ||
हो सहज प्राप्ति मेरी जब आ जाए वह मेरी शरन ||७-१९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, कई जन्म लेने के पश्चात मनुष्य को ब्रह्मज्ञान प्राप्त होता है| वह श्रेष्ठ महात्मा है जिसे सर्वत्र प्रभु दिखाई देते हैं| (इस स्थिति में पहुंचने के पश्चात) जब वह मेरी शरण आता है तब उसे मेरी प्राप्ति सुलभ हो जाती है|*

भोग वासना मोह से बुद्धि हर लेती ज्ञान जिन जन |
हो प्रेरित स्वभाव विषयी करें वह देव देवी भजन ||७-२०||

भावार्थ: *मोह वासना से मोहित हो जिनकी बुद्धि ज्ञान हर लेती है, वह विषयी स्वभाव से प्रेरित होकर देवी, देवताओं का भजन करते हैं।*

हो पूर्ण सकाम भावना करे अर्पण वह जिस देवगन |
भर देता श्रद्धा उसके मन उसी देव में मैं अर्जुन ||७-२१||

भावार्थ: *अर्जुन, जब साधक सकाम भावना से पूर्ण हो जिस देवता (देवी, देवता) को अर्पण करता है, मैं उस के मन में उसी देवता (देवी, देवता) की श्रद्धा भर देता हूँ।*

हो युक्त श्रद्धा करे देव देवी जब नर भजन पूजन |
पाए मनुष्य इच्छित विषय कर पालन विधिवत नियम ||७-२२||

भावार्थ: *जब श्रद्धा युक्त मनुष्य उचित नियमों का पालन करते हुए देवी, देवता की पूजा करता है तब उसको इच्छित विषय (भोगों) की प्राप्ति होती है।*

करे साधना जो देव देवी है वह अल्प बुद्धि जन |
पाए वह फल नाशवान पर पाए मुक्ति मेरा भक्तगन ||७-२३||

भावार्थ: *जो अल्प बुद्धि वाले प्राणी देवी, देवताओं की साधना करते हैं उन्हें नाशवान फलों की प्राप्ति होती है। परन्तु मेरे भक्तों को मुक्ति की प्राप्ति होती है (जो अविनाशी है)।*

नहीं समझे मेरा अविनाशी परम भाव अबुद्धि जन |
समझे वह मुझे व्यक्त यद्यपि हूँ मैं अव्यक्त अर्जुन ||७-२४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, बुद्धिहीन प्राणी मेरे सर्वश्रेष्ठ अविनाशी भाव को नहीं समझते। वह मुझे मनुष्य की तरह (व्यक्त) ही मानते हैं जब कि मैं अव्यक्त (मन एवं इन्द्रियों से परे) हूँ।*

न समझ सकें मेरा अजन्मा अविनाशी रुप मोहित जन |
ढका माया से नहीं होता मैं प्रकट समक्ष अबुद्धजन ||७-२५||

भावार्थः *मोहित प्राणी मेरे अजन्मा एवं अविनाशी रुप को नहीं समझ सकते| माया से ढका हुआ मैं ऐसे बुद्धिहीन प्राणियों के समक्ष प्रकट नहीं होता|*

समझो मुझे ज्ञाता भूत वर्तमान भविष्य सब जन |
पर न समझ सकें यह तथ्य अतिरिक्त जो मेरे भक्तगन ||७-२६||

भावार्थः *मुझे सभी प्राणियों के भूत, वर्तमान एवं भविष्य का ज्ञाता समझो| परन्तु मेरे भक्तगण के अतिरिक्त यह तथ्य कोई और नहीं समझ सकता|*

हेतु इच्छा होते द्वेष द्वन्द्व मोह उत्पन्न हे अर्जुन |
उत्पत्ति काल मोहित इनसे पड़ें चक्र जन्म-मरण भूजन ||७-२७||

भावार्थः *हे अर्जुन, इच्छाओं के (कामना) कारण द्वेष, द्वन्द्व, मोह उत्पन्न होते हैं| उत्पत्ति काल में इनसे मोहित हो प्राणी जन्म-मरण के चक्र में पड़ जाता है|*

हैं जो रहित द्वन्द्व मोह हुए नष्ट अघ जिन महात्मन |
होकर दृढ़व्रती करते वह भक्त केवल मेरा भजन ||७-२८||

भावार्थः *जो महात्मा द्वन्द्व, मोह से रहित हैं, जिनके पाप नष्ट हो गए हैं, ऐसे भक्त दृढ़व्रती होकर केवल मेरा भजन ही करते हैं|*

हेतु मुक्ति दुःख जरण मरण आता जो भक्त मेरी शरन |
है वह ज्ञानी ब्रह्म अध्यात्म व् सभी कर्म अर्जुन ||७-२९||

भावार्थः *वृद्धावस्था, मरण दुःख से मुक्ति पाने के लिए जो साधक मेरी शरण आता है, हे अर्जुन, वह ब्रह्म, अध्यात्म एवं सभी कर्मों का ज्ञानी है|*

जानें जो मुझे सहित अधिभूत अधिदैव अधियज्ञ जन |
समझ सकें मुझे अंत काल वह युक्तचित्त बुद्धिवन ||७-३०||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद ज्ञानविज्ञानयोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण सप्तम अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थ: *जो प्राणी अधिभूत, अधिदैव तथा अधियज्ञ के सहित मुझे जानते हैं वह युक्तचित्त ज्ञानी अन्तकाल में मुझे समझ लेते हैं|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'ज्ञानविज्ञानयोग' नामक सप्तम अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय ८: अक्षरब्रह्मयोग:

अर्जुन उवाच

हैं क्या ब्रह्म अध्यात्म अधिभूत अधिदैव और करन |
देखें कौन रूप हरि किए जिन वशीभूत अन्तःकरन ||८-१||
है अधियज्ञ क्या रहता कैसे वह स्थित इस मनुज तन |
कैसे जानें हरि अंतकाल संयत चित्त जन बोले अर्जुन ||८-२||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'ब्रह्म, अध्यात्म, कर्म, अधिभूत एवं अधिदैव क्या हैं? जिन प्राणियों ने अपने अन्तःकरण को वश में कर लिया है वह भगवान् को किस रूप में देखते हैं? अधियज्ञ क्या है और वह इस शरीर में कैसे स्थित रहता है? संयत चित्त पुरुष अन्त समय में भगवान् को किस प्रकार जानते हैं?'*

श्री भगवानुवाच

हेतु निवारण जिज्ञासा अर्जुन तब बोले मधुसूदन |
परम अक्षर तत्व ब्रह्म और है अध्यात्म स्वरूप जन ||
है प्रेरक बल कर्म जो करे मनुज भूत भाव उत्पन्न ||८-३||

भावार्थ: *अर्जुन की जिज्ञासा निवारण करने के लिए तब भगवान् कृष्ण बोले| परम अक्षर (अविनाशी) तत्व ब्रह्म एवं प्राणियों का स्वरुप (प्रकृति) अध्यात्म है| मनुष्यों में भूत भाव उत्पन्न करने वाला प्रेरक बल कर्म है|*

है नश्वर अधिभूत और हिरण्यगर्भ अधिदेव भगवन |
समझो मुझे अधियज्ञ इस नर तन रूप कुन्तीनन्दन ||८-४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, (पंचमहाभूत) नश्वर (वस्तु) अधिभूत और हिरण्यगर्भ भगवन (पुरुष) अधिदैव है| इस मनुष्य शरीर में मुझे ही अधियज्ञ समझो|*

कर स्मरण मेरा रूप जो नर करे अंत काल त्याग तन |
करे प्राप्त वह मेरा स्वरुप निःसंदेह हे अर्जुन ||८-५||

भावार्थः *हे अर्जुन, जो प्राणी अंत काल में मेरे स्वरुप को स्मरण कर शरीर त्यागता है वह प्राणी निःसंदेह मेरे स्वरुप को प्राप्त करता है|*

करे त्याग जिस भाव तन जन अंत काल कुन्तीनन्दन |
हो भावित उस भाव सदैव पाए वह पुनर्जन्म जन ||८-६||

भावार्थः *हे कुन्तीनन्दन, अंतकाल में जिस भाव से प्राणी अपना तन त्यागता है उसी भाव से सदैव भावित होकर वह प्राणी पुनर्जन्म लेता है (अर्थात नई योनि प्राप्त करता है)|*

करते हुए स्मरण मुझे इस हेतु करो युद्ध युध्वन् |
करो अर्पित मन बुद्धि मुझे निःसंशय पाओगे भगवन ||८-७||

भावार्थः *इस कारण हे योद्धा, मुझे स्मरण करते हुए युद्ध करो| मन, बुद्धि को मुझे समर्पण कर निःसंदेह तुम भगवान् (मुझे) पा जाओगे|*

संयमित चित्त युक्त अभ्यास योग जो करे मेरा चिंतन |
करे प्राप्त परम दिव्य भगवन वह साधक अर्जुन ||८-८||

भावार्थः *संयमित मन से अभ्यास योग से युक्त हो कर जो साधक मेरा चिन्तन करता है, हे अर्जुन, उसे परम दिव्य भगवान् प्राप्त होते हैं|*

करो बार बार स्मरण सर्वज्ञ नियंता धातार सनातन |
अचिन्त्य रूप सम रवि दीप्त परे अविद्या सूक्ष्म भगवन ||८-९||

भावार्थः *सर्वज्ञ, सनातन, नियन्ता, पालन-पोषण करने वाले, अचिन्त्यरूप, सूर्य के समान प्रकाशित, सूक्ष्म, अविद्या से परे भगवान् का अनुस्मरण करो|*

करो स्थापित प्राण योगबल मध्य भौंह समय मरन |
जो युक्त भक्ति और अटल मन हों प्राप्त उन्हें भगवन ||८-१०||

भावार्थ: *मरण समय में योगबल से प्राण को भौंह के बीच स्थापित करो| जो भक्ति एवं दृढ़ मन से युक्त है उन्हें भगवान् की प्राप्ति होती है|*

कहें अक्षर जिन्हें ज्ञानी मिलें जो राग-रहित जन |
करते पालन जिन की आज्ञा ब्रह्मचर्य साधकगन ||
हों कैसे प्राप्त वह दिव्य हरि करूँ मैं अब वर्णन ||८-११||

भावार्थ: *ज्ञानी जिन्हें अक्षर कहते हैं, जो ममता रहित प्राणियों को प्राप्त होते हैं, जिनकी आज्ञा से साधकगण ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, उन दिव्य हरि की प्राप्ति कैसे हो वह अब मैं वर्णन करूंगा|*

कर स्थापित प्राण ललाट हो स्थित गति योगधारन |
कर संयमित विषय इद्रियाँ स्थिर करे हिय जो मन ||८-१२||
अक्षर ब्रह्म मन्त्र ओम का करता हुआ उच्चारन |
करते हुए स्मरण हिय भगवन करे जो जन त्याग तन ||
पाए वह निःसंदेह परम गति सुन हृदय धार अर्जुन ||८-१३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, हृदय में धारण कर सुनो| जो साधक योगधारणा में स्थित हो प्राण को मस्तिष्क में स्थापित कर, विषय इन्द्रियों को संयमित कर, मन को हृदय में स्थिर कर, ब्रह्म मन्त्र अक्षर ओम का उच्चारण करता हुआ, हृदय में भगवान् को धारण कर तन त्यागता है वह निःसंदेह परम गति को प्राप्त होता है|*

जो अनन्य चित्त पुरुष करे मेरा स्मरण हे पृथानंदन |
करे प्राप्त मुझे वह सहज नित्य युक्त योगी महस्विन् ||८-१४||

भावार्थ: *हे पृथानंदन, जो अनन्य चित्त पुरुष मेरा स्मरण करता है उस महान नित्य युक्त योगी को मैं सुलभता से प्राप्त हो जाता हूँ|*

करें प्राप्त सहज परमात्मा वह परम सिद्ध महस्विन् |
नहीं होते प्राप्त उन्हें दुःख रूप जन्म-मरण बंधन ||८-१५||

भावार्थ: *वह परम सिद्ध महापुरुष सुलभता से परमात्मा को प्राप्त कर लेते हैं| जन्म-मरण के बंधन, जो दुःख रूप हैं, उनको प्राप्त नहीं होते (अर्थात मोक्ष पा लेते हैं)|*

ब्रह्मलोक सहित समस्त लोक देते बंधन जन्म-मरन |
नहीं होता पुनर्जन्म यदि कर ले जन प्राप्त मुझे अर्जुन ||८-१६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, ब्रह्मलोक सहित सभी लोक जन्म-मरण के बंधन से युक्त हैं (अर्थात इन लोकों में वास के पश्चात भी पुनर्जन्म लेना पड़ता है)| लेकिन यदि प्राणी मुझे प्राप्त कर लेता है तो पुनर्जन्म नहीं होता|*

जानें जो अवधि ब्रह्मलोक समझें वह भाव रात दिवन |
सहस्त्र वर्ष भुवन है समकक्ष ब्रह्मलोक एक दिन ||८-१७||

भावार्थ: *जो ब्रह्मलोक की अवधि जानते हैं, वही दिन रात के भाव को समझ सकते हैं| ब्रह्मलोक का एक दिन पृथ्वी के सहस्त्र दिन के समकक्ष है|*

करें रचना सृष्टि ब्रह्मदेव हो जब उदय उनका दिन |
हो विलीन तत्व जगत जब रात्रि ब्रह्मलोक हे अर्जुन ||८-१८||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जब उनका (ब्रह्मलोक) दिन उदय होता है तब ब्रह्मदेव सृष्टि की रचना करते हैं| ब्रह्मलोक की रात्रि होते ही यह जगत तत्व में विलीन हो जाता है (अर्थात प्रभु में विलीन हो जाता है)|*

कर्म हेतु कुल देता बंधन मनुज बार बार जन्म-मरन |
होता प्रकट भूलोक वह जब उदय ब्रह्मलोक दिवन ||
होता विलीन जब होती रात्रि ब्रह्मलोक अर्जुन ||८-१९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, समुदाय कर्म के कारण प्राणी पुनः पुनः जन्म-मरण से बंधित होता है (अर्थात जन्म-मरण के बंधन में पड़ा रहता है)| वह पृथ्वी लोक में ब्रह्मलोक के दिन के उदय होने पर प्रकट होता है तथा रात्रि होने पर विलीन हो जाता है|*

परे ब्रह्म तन-सूक्ष्म जो भाव शुद्ध अव्यक्त सनातन |
नहीं होता नष्ट कभी हों यदि नष्ट सर्व भूत अर्जुन ||८-२०||

भावार्थ: *जो ब्रह्म सूक्ष्म-शरीर से भी परे विलक्षण शुद्ध सनातन भाव है, हे अर्जुन, वह सम्पूर्ण प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता|*

यही अव्यक्त अक्षर परम गति जो लक्ष्य भूजन अर्जुन |
कर प्राप्त इसे पा मुझे हो मुक्त तब छूटें सभी बंधन ||८-२१||

भावार्थ: *हे अर्जुन, यही अव्यक्त अक्षर, परम गति है जो प्राणियों का लक्ष्य है| इसको प्राप्त कर मुझे पा और मुक्त हो| तब सभी बंधन से मुक्त हो जाओगे|*

करते वास सब प्राणी जिनके अंतर्गत अर्जुन |
हैं जो अविनाशी नित्य सर्वत्र व्याप्त भगवन ||
कर सके प्राप्त साधक उन्हें हेतु भक्ति गहन ||८-२२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिन भगवान् के अंतर्गत समस्त प्राणी वास करते हैं, जो अविनाशी, नित्य, सर्वत्र व्याप्त श्री भगवान् हैं, उन्हें साधक अनन्य भक्ति से प्राप्त कर सकता है|*

तन त्याग जिस मार्ग करें प्राप्त निर्वाण योगीजन |
बतलाऊँ मैं तुम्हें अब वह मार्ग सुन कुंतीनंदन ||८-२३||

भावार्थ: *हे कुंतीनंदन सुन, जिस मार्ग से शरीर त्याग कर योगीगण मोक्ष प्राप्त करते हैं वह मार्ग अब मैं तुम्हें बतलाऊँगा|*

त्यागें तन जो राह अग्नि शुक्ल ज्योति दिन उत्तरायन |
पा सकें वह साधक सहज ब्रह्म निःसंदेह अर्जुन ||८-२४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो साधक अग्नि, शुक्लपक्ष, ज्योति, दिन और उत्तरायण के मार्ग से तन त्यागते हैं वह निःसंदेह ब्रह्म को सहजता से प्राप्त करते हैं|*

त्यागें तन जन यदि धूम रात कृष्णपक्ष दक्षिणायन |
पा ज्योति सोम तब लौटें निःसंदेह वह भू अर्जुन ||८-२५||
यह दो मार्ग शुक्ल और कृष्ण हैं जग में पुरातन |
दे राह शुक्ल निर्वाण और कृष्ण जन्म-मरण बंधन ||८-२६||

भावार्थ: *विश्व में दो प्रकार के मार्ग, शुक्ल एवं कृष्ण, पुरातन हैं| शुक्ल मार्ग मोक्ष दाता है और कृष्ण मार्ग जन्म-मरण के बंधन में डाल देता है| हे अर्जुन, यदि प्राणी धूम, रात्रि, कृष्णपक्ष एवं दक्षिणायन में तन त्यागते हैं तो वह चन्द्रमा की ज्योति प्राप्त कर फिर से पृथ्वी पर लौट कर आते हैं (अतः जन्म-मरण के बंधन में पड़ जाते हैं)|*

होता नहीं मोहित जो जाने तत्व इन द्वि-मार्ग जन |
रहो इस हेतु योग युक्त तुम हर काल हे युद्धिवन ||८-२७||

भावार्थ: *हे योद्धा, इन दोनों मार्गों को जानने वाला कभी मोहित नहीं होता| अतः तुम हर समय योग युक्त रहो (अर्थात इन दोनों मार्गों को भली भांति समझो)|*

करें जो त्याग पुण्य फल यज्ञ तप दान वहदाध्ययन |
पा सकें वह परमात्म-तत्व जो परम आदि सनातन ||८-२८||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद अक्षरब्रह्मयोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण अष्टम अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थ: *जो वहदाध्ययन, यज्ञ, तप और दान के पुण्य फल का त्याग कर देते हैं उन्हें परमात्म-तत्व की प्राप्ति हो जाती है जो पवित्र, आदि और सनातन है|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में ' अक्षरब्रह्मयोग' नामक अष्टम अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय ९: राजविद्याराजगुह्ययोग:

श्री भगवानुवाच
सुनो अब अति गुप्त विज्ञान सहित संज्ञान बोले भगवन |
हो तुम रहित-दोष दृष्टि अतः कहूँ जो काटे भव-बंधन ||९-१||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'अब तुम अति गोपनीय ज्ञान विज्ञान सहित सुनो| चूंकि तुम दोष-दृष्टि रहित हो, अतः यह भव-बंधन को काटने वाला ज्ञान मैं तुम्हें देता हूँ|'*

है यह ज्ञान श्रेष्ठतम अति गुह्य धर्म युक्त व् पावन |
सुगम अविनाशी दे प्रत्यक्ष फल और आनंद महन ||९-२||

भावार्थ: *यह ज्ञान श्रेष्ठतम, अत्यंत गोपनीय, धर्ममय, प्रत्यक्ष फल देने वाला, अविनाशी एवं सरलता से प्राप्त होने वाला है| यह अत्यंत आनंद देता है|*

न पा सकें मुझे कभी जो रहित श्रद्धा धर्म युद्धिवन |
करते रहते वह अभग सदैव मृत्यु रूप जग भ्रमन ||९-३||

भावार्थ: *हे योद्धा, धर्म में श्रद्धा रहित प्राणी मुझे कभी नहीं पा सकते| वह अभागे इस मृत्यु रूप संसार में भ्रमण करते रहते हैं अर्थात जन्म-मरण के चक्र में पड़े रहते हैं|*

है व्याप्त सम्पूर्ण जग मम निराकार स्वरुप अर्जुन |
हैं स्थित सब जीव मुझ में परन्तु नहीं मैं स्थित जन ||९-४||
देखो मेरा ईश्वरीय योग करे जो सब प्राणी उत्पन्न |
करूँ धारण मैं सब पर नहीं स्थित हूँ मैं इन जन ||९-५||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मेरा निराकार स्वरुप समस्त संसार में व्याप्त है| सभी जीव मुझ में स्थित हैं परन्तु मैं उनमें स्थित नहीं हूँ| मेरे ईश्वरीय योग को देखो जो सभी प्राणियों को उत्पन्न करता है| मैं इन सब को धारण करता हूँ पर मैं इन प्राणियों में स्थित नहीं हूँ|*

जैसे रहे स्थित नभ पर करे सर्वत्र विचरण पवन |
सादृश्य हैं स्थित समस्त प्राणी मुझ में इस भुवन ||९-६||

भावार्थः *जिस प्रकार पवन सर्वत्र विचरण करते हुए आकाश में स्थित रहती है उसी प्रकार इस पृथ्वी पर समस्त प्राणी मेरे में स्थित हैं|*

हों समाहित मुझ में यह काल महाप्रलय अर्जुन |
करूँ उत्पन्न इन्हें पुनः आरम्भ काल कल्प नूतन ||९-७||

भावार्थः *हे अर्जुन, महाप्रलय समय में यह मुझ में समाहित हो जाते हैं| नए कल्प के आरम्भ में मैं इन्हें पुनः सृजित कर देता हूँ|*

हो वश प्रकृति होते परतंत्र जन समझ हे अर्जुन |
कल्प आरम्भ करूँ मैं पुनः सृजित इन् सब भूजन ||९-८||

भावार्थः *हे अर्जुन, प्रकृति के वश हुए यह प्राणी परतंत्र हैं, ऐसा समझो| इन प्राणियों का मैं कल्प के आरम्भ में पुनः सृजन करता हूँ|*

रहूँ रहित आसक्ति उदासीन मैं हर कर्म अर्जुन |
नहीं बांधते कर्म कभी मुझे हूँ मैं उपरि बंधन ||९-९||

भावार्थः *हे अर्जुन, मैं हर कर्म से आसक्ति रहित एवं उदासीन हूँ| चूंकि मैं बंधन से ऊपर हूँ अतः यह कर्म मुझे नहीं बांधते|*

करती प्रकृति उत्पन्न जग हो आधीन मेरे नियोजन |
होता परिवर्तित जग इस हेतु बहु प्रकार अर्जुन ||९-१०||

भावार्थः *हे अर्जुन, मेरे स्वामित्व में प्रकृति इस जग को उत्पन्न करती है| इसी कारण इस संसार का विविध प्रकार से परिवर्तन होता है|*

नहीं जानते मूढ़ मेरा रुप महेश्वर भाव पावन |
करते अवज्ञा मेरी समझ मुझे तन नर साधारन ||९-११||

भावार्थ: मूढ़ (प्राणी) मेरे शुद्ध भाव महेश्वर रुप को नहीं जानते| वह मुझे साधारण मनुष्य के शरीर में समझ मेरी अवज्ञा करते हैं|

आसुरी राक्षसी और मोहिनी भाव हैं जिनके मन |
हैं वह मूढ़ जाए व्यर्थ उनका ज्ञान और कर्म पावन ||९-१२||

भावार्थ: *जिनके मन में आसुरी, राक्षसी एवं मोहिनी भाव हैं (अर्थात अपनी सांसारिक मनोकामनाएं पूर्ण करने के लिए इन असत्य प्रकृतियों के आश्रित होते हैं), वह मूढ़ (अविवेकी) हैं| उनके शुभ कर्म और ज्ञान व्यर्थ जाते हैं|*

हैं जो आश्रित दैवीय प्रकृति महात्मा हे अर्जुन |
समझ मुझे आदि अव्यय नित्य भजें मुझे अनन्य मन ||९-१३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, दैवीय प्रकृति के आश्रित महात्मा मुझे आदि, अव्यय, नित्य समझ मुझे अनन्य मन से भजते हैं|*

प्रयत्नशील दढ़व्रती जन करें सतत मेरा कीर्तन |
हो नित्य युक्त अनन्य भक्ति करें वह मेरा पूजन ||९-१४||

भावार्थ: *प्रयत्नशील एवं दढ़व्रती प्राणी निरंतर मेरा कीर्तन करते हैं| वह नित्य युक्त होकर भक्तिपूर्वक मेरी उपासना करते हैं|*

करें कुछ जन ज्ञानयज्ञ से एकत्व भाव में मेरा भजन |
कुछ पृथक भाव कुछ करें मेरे विराट रूप का पूजन ||९-१५||

भावार्थ: *कोई मुझे ज्ञानयज्ञ से एकत्व भाव में मेरा भजन करते हैं| कोई पृथक भाव और कोई मेरे विराट स्वरूप (विश्वतोमुखम्) की उपासना करते हैं|*

हूँ मैं क्रतु यज्ञ स्वधा औषध मन्त्र घृत दहन |
हूँ मैं ही इज्या और कर्म हवन हे पृथानंदन ||९-१६||
समझो मुझे तुम मात पित पितामह धाता सब भुवन |
हूँ मैं ऋग् साम यजुर्वेद ओंकार ज्ञान पावन ||९-१७||
हूँ मैं लक्ष्य भर्ता स्वामी साक्षी मित्र स्थान शरन |
हूँ मैं हेतु सृजन प्रलय निधान अव्यय हे अर्जुन ||९-१८||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मैं क्रतु, यज्ञ, स्वधा, औषध, मन्त्र, घी, अग्नि, इज्या, हवन कर्म हूँ| मैं ही समस्त भुवन का पिता, माता, धाता (धारण करने वाला) और पितामह हूँ| मैं ही पवित्र, ओंकार, ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद का ज्ञान हूँ| मैं ही लक्ष्य, भरण-पोषण करने वाला (भर्ता), प्रभु (स्वामी), साक्षी, शरण स्थान तथा मित्र हूँ| मैं ही उत्पत्ति, प्रलय, निधान और अव्यय का कारण हूँ|*

करूँ ग्रहण जल हेतु हित जग सम तप रवि अर्जुन |
लौटाता जल बन वर्षा हूँ मैं सत असत सुधा मरन ||९-१९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, रवि समान तप कर संसार के हित के लिए मैं जल ग्रहण करता हूँ और वर्षा से उसे लौटाता हूँ| मैं ही अमृत, सत, असत एवं मृत्यु हूँ|*

ज्ञाता त्रिवेद सोमप रहित-अघ जो प्राणी पावन |
हेतु इच्छा पाए सुरलोक करें यज्ञ से मेरा पूजन ||
हेतु फल पुण्य कर्म पाऐं इंद्रलोक और दिव्य नंदन ||९-२०||

भावार्थ: *तीनों वेदों के ज्ञाता, सोमपान करने वाले, पापों से रहित, पवित्र पुरुष जिन्हें स्वर्गलोक प्राप्ति की इच्छा है वह यज्ञ के द्वारा मेरा पूजन करें| अपने पुण्य फल से वह इन्द्रलोक और दिव्य आनंद को प्राप्त करता है|*

भोग स्वर्ग लौटें भू जब क्षीण पुण्य सुकृतकर्मन् |
कहा जैसा त्रिवेद रहें वह चक्र जन्म-मरण बंधन ||९-२१||

भावार्थ: *स्वर्ग भोग जब शुभ कर्म के पुण्य क्षीण हो जाते हैं तब वह पृथ्वी पर लौटते हैं| तीनों वेदों में वर्णित वह जन्म-मरण के बंधन में पड़े रहते हैं|*

करें चिंतन सदैव मेरा अनन्य भाव से जो भक्तगन |
हैं वह नित्य युक्त महन करूँ उनका योगक्षेम वहन ||९-२२||

भावार्थ: *जो भक्तगण अनन्य भाव से मेरा चिन्तन करते हैं (मेरी उपासना करते हैं) वह नित्य युक्त महापुरुष हैं| मैं उनका योगक्षेम (अप्राप्त की प्राप्ति और प्राप्त की रक्षा) वहन करता हूँ|*

करें पूजन अन्य देव श्रद्धा सहित जो कुन्तीनन्दन |
करते वह भक्तगण अविधिपूर्वक मेरा ही पूजन ||९-२३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, श्रद्धा से जो भक्तगण अन्य देवताओं को पूजते हैं वह भी मुझे ही अविधिपूर्वक पूजते हैं|*

जान मुझे ही स्वामी सभी यज्ञ भोक्ता हे पृथानंदन |
जो नहीं जानते यह तत्व होता उनका गहन पतन ||९-२४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मुझे ही सभी यज्ञों का भोक्ता और स्वामी समझ| जो यह तत्व नहीं जानते हैं उनका गहन पतन होता है (अर्थात वह संसार को प्राप्त होते हैं)|*

साधक पाएं वही देव श्रद्धा से करें जिनका पूजन |
पाएं पितर करें जब नर उनका सुमिरन अन्वासन ||
पाएं भूत भजें भूत पाएं मुझे जो करें मेरा चिंतन ||९-२५||

भावार्थ: *साधक ने जिस देव की श्रद्धा से पूजा की, वह उन्हीं देव को पाते हैं| पितरों का स्मरण एवं पूजन करने वाले (पूजने वाले) पितरों को प्राप्त होते हैं| भूतों का भजन करने वाले भूतों को प्राप्त होते हैं| जो मेरा चिंतन (भजन) करता है, वह मुझे पाता है|*

करे जो भक्त मुझे पत्र पुष्प फल जल श्रद्धा से अर्पन |
करूँ स्वीकार मैं वह भोग उस पावन मन भक्तगन ||९-२६||

भावार्थ: *जो भी भक्त मुझे श्रद्धा से पत्र, पुष्प, फल, जल अर्पण करता है उस शुद्ध मन वाले भक्त का वह भोग मैं स्वीकार करता हूँ|*

करो जो भी तुम कर्म नित्य सम भोजन तप दान हवन |
हो जाओ अघहीन पावन कर मुझे वह अर्पण अर्जुन ||९-२७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो भी तुम नित्य कर्म करते हो जैसे भोजन, तप, दान, हवन, इन्हें मुझे अर्पण कर पाप रहित, पावन हो जाओ|*

हो जाओगे तुम मुक्त फल सब शुभ अशुभ कर्म बंधन |
हो कर सर्वथा मुक्त तब पा जाओगे मुझे तुम अर्जुन ||९-२८||

भावार्थ: *इस प्रकार सब शुभ, अशुभ कर्म बंधन से मुक्त हो जाओगे| हे अर्जुन, सबसे सर्वथा मुक्त होकर तब तुम मुझे पा जाओगे|*

न मुझे कोई प्रिय न अप्रिय रहूँ मैं सम सभी जन |
करूँ वास मैं हिय उनके करें जो नित्य मेरा भजन ||९-२९||

भावार्थ: *न कोई प्राणी मुझे प्रिय है, न अप्रिय| मैं सभी में समान (रूप से) रहता हूँ| जो मेरा नित्य भजन करते हैं उनके हृदय में मैं वास करता हूँ|*

हो यदि अतिसय दुराचारी पर करे वह मेरा भजन |
समझो साधु उसे चूंकि लिया उसने निश्चित वचन ||९-३०||

भावार्थ: *यदि कोई अतिशय दुराचारी भी मेरा भजन करता है तो उसे साधु समझो क्योंकि उसने निश्चित वचन ले लिया है|*

पा निरंतर शांति बने तत्काल धर्मात्मा वह जन |
हे कौन्तेय नहीं होता उस प्राणी का कभी पतन ||९-३१||

भावार्थः *हे कौन्तेय, वह शीघ्र ही निरंतर शान्ति को प्राप्त कर धर्मात्मा बन जाता है| उस प्राणी का कभी पतन नहीं होता|*

नर नारि वैश्य   शूद्र हो कोई पाप युक्त भूजन |
पाए निःसंदेह परम गति आए जब मेरी शरण अर्जुन ||९-३२||

भावार्थः *हे अर्जुन, पुरुष, स्त्री, वैश्य, शूद्र कोई भी पापी हो जब वह मेरी शरण आ जाते हैं तो निःसंदेह परम गति प्राप्त करते हैं|*

निःसंदेह करें प्राप्त परम गति पुण्यशील भक्तगन |
करें वह प्राप्त नित्य सुख इस लोक कर मेरा भजन ||९-३३||

भावार्थः *पुण्यशील भक्तगण निःसंदेह परम गति प्राप्त करते हैं| इस लोक में मेरा भजन कर वह नित्य सुख प्राप्त करते हैं|*

हे भक्त कर स्थिर मन मुझ में कर मेरा ही पूजन |
हो परायण मुझ में पा जाएगा अवश्य लक्ष्य जीवन ||९-३४||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या   योगशास्त्रमय   महाग्रंथ   गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप   ग्रन्थ   अति   पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद राजविद्याराजगुह्ययोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण नवम अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थः *हे भक्त, मुझ में मन को स्थिर कर मेरा पूजन कर| मुझ में परायण होकर (अर्थात स्वयं को मुझे समर्पण कर) अपने जीवन का लक्ष्य (प्रभु की प्राप्ति एवं मोक्ष) पा जाएगा|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'राजविद्याराजगुह्ययोग' नामक नवम अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय १०: विभूतियोग:

श्री भगवानुवाच
करो श्रवण मेरे वचन बोले तब श्री मधुसूदन |
कहूँ हेतु हित भक्त रखें जो अतिशय प्रेम भगवन ||१०-१||

भावार्थ: *श्री कृष्ण बोले, 'तुम मेरे वचनों का श्रवण करो| यह मैं प्रभु में (मुझ में) अतिशय प्रेम रखने वाले भक्तगणों के हित के लिए कहता हूँ'|*

न जाने कोई मेरी उत्पत्ति देव अथवा महर्षिगन |
समझो मुझे आदि सभी सुर असुर ऋषि भूजन ||१०-२||

भावार्थ: *मेरी उत्पत्ति कोई भी देवता अथवा महर्षिगण नहीं जानते क्योंकि मैं ही सभी सुर, असुर, ऋषि एवं प्राणियों का आदि हूँ (अर्थात मेरे द्वारा ही इनकी उत्पत्ति होती है)|*

जो समझे मुझे अजन्मा अनादि स्वामी लोक भगवन |
हो रहित सम्मोह मुक्त अघ पा सके वह मेरा दर्शन ||१०-३||

भावार्थ: *जो मुझे अजन्मा, अनादि और लोकों का स्वामी ईश्वर समझता है वह सम्मोह रहित एवं पाप-मुक्त होकर मेरा दर्शन पा जाता है|*

बुद्धि ज्ञान मोह क्षमा सत्य दम शम जन्म और मरन |
सुख दुःख भय अभय यश अपयश सब लौकिक प्रवर्तन ||१०-४||
अहिंसा समता संतोष तप दान आदि गुण और अवगुन |
हूँ मैं हेतु उत्पत्ति इन होते सब प्रकट मेरे कारन ||१०-५||

भावार्थ: *बुद्धि, ज्ञान, मोह, क्षमा, सत्य, दम, शम, जन्म, मृत्यु, सुख, दुःख, भय, अभय, यश, अपयश, अहिंसा, समता, सन्तोष, तप, दान, आदि सभी सांसारिक गुण एवं अवगुण के उत्पन्न होने का मैं ही हेतु हूँ और मेरे कारण ही होते हैं|*

सप्तऋषि चार सनकादि चतुर्दश मनु आदि गण महन |
इस भू सब प्रजा जिनकी हुए वह मेरे संकल्प उत्पन्न ||१०-६||

भावार्थ: *सप्तऋषि, चार सनकादि तथा चौदह मनु, जिनकी संसार में यह प्रजा है वह मेरे संकल्प से उत्पन्न हुए हैं|*

जाने योग तत्व और मेरी विभूति जो साधकगन |
समझो उसे तुम अविकम्प योग युक्त योगीजन ||
निःसंदेह है वह महान   युग-पुरुष   पृथानंदन ||१०-७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो साधक मेरी विभूति और योग के तत्व को जानता है उसे तुम अविकम्प योग (अर्थात् निश्चल ध्यान योग) से युक्त योगी समझो| वह निःसंदेह महान युग-पुरुष है|*

समझो मुझे ही सर्वस्य प्रभव स्थल हे पृथानंदन |
मेरा ही उत्तरदायित्व करूँ विकास समस्त भुवन ||
जो जानें यह सत्य करें मेरा भजन वह बुद्धिवन ||१०-८||

भावार्थ: *हे पृथानंदन, मुझे ही सर्वस्य प्रभव स्थान समझो| मेरा ही उत्तरदायित्व है कि मैं जग का विकास करूँ| जो बुद्धिमान (पुरुष) यह सत्य जानते हैं वह मुझे भजते हैं|*

करें जो चित्त स्थित मुझ में और करें प्राण समर्पन |
कराते हुए बोध मेरा करें केवल मेरा विषय कथन ||
रहें संतुष्ट सदा रमते हुए मेरे नित्य निरंतर भजन ||१०-९||
दूँ उन्हें बुद्धि विवेक करें जो सदैव मेरा सुमिरन |
पा जाएं वह मुझे हो नित्य-युक्त निष्पाप अर्जुन ||१०-१०||

भावार्थ: *मुझ में चित्त को स्थिर करते हुए और प्राणों (इन्द्रियों) को समर्पित किए जो सदैव मेरा बोध कराते रहते हैं, मेरे ही विषय में कथन करते हुए सन्तुष्ट रहते हैं एवं मेरे भजन में रमते हैं| हे अर्जुन, जो सदैव मेरा स्मरण करते हैं उन्हें मैं बुद्धि विवेक दे देता हूँ| वह नित्य-युक्त निष्पाप होकर मुझे प्राप्त करते हैं|*

कर कृपा उन भक्त करूँ निवास उनके अन्तःकरन |
कर दूर अज्ञान तम भर देता प्रकाश मैं उनके मन ||१०-११||

भावार्थ: *उन भक्तों पर अनुग्रह कर मैं उनके अन्तःकरण में निवास करता हूँ| उनके अज्ञान अन्धकार को दूर कर मैं उनके मन में प्रकाश हूँ|*

अर्जुन उवाच

हैं आप प्रभु परम ब्रह्म धाम पावन बोले अर्जुन |
शाश्वत दिव्य आदि अजन्मा सर्वव्यापी सनातन ||१०-१२||
कहें यही समस्त सम देवर्षि नारद असित ऋषिगन |
महर्षि व्यास ऋषि देवल और आप स्वयं कृष्न ||१०-१३||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'हे कृष्ण, आप प्रभु, परम ब्रह्म, धाम एवं पवित्र हैं| सनातन, दिव्य, आदि (देव), जन्म-रहित और सर्वव्यापी हैं| ऐसा ही देवर्षि नारद, (ऋषि) असित, ऋषि देवल, महर्षि व्यास (समान समस्त महान ऋषिगण) और स्वयं आप भी कहते हैं|'*

निःसंदेह है सब सत्य कहे मुझे जो कुछ भी भगवन |
है असंभव जान सकें यह स्वरुप देव असुर भूजन ||१०-१४||

भावार्थ: *हे भगवन, जो कुछ भी आप ने कहा वह निःसंदेह सत्य है| इस (वास्तविक) स्वरूप को जानना देवता, दानव एवं मनुष्य के लिए असंभव है|*

हे भूतेश पुरुषोत्तम देवों के देव भूतभावन |
जानें आप स्वयं ही स्वरुप आपका श्रीपति भगवन ||१०-१५||

भावार्थ: *हे पुरुषोत्तम, भूतभावन, भूतेश, देवों के देव, श्रीपति भगवन, आप स्वयं ही अपने स्वरुप को जानते हैं|*

हैं स्थित आप भुवन कर व्याप्त सब विभूति भगवन |
आप स्वयं ही समर्थ जो कर सकें यह दिव्यता वर्णन ||१०-१६||

भावार्थ: *इन सम्पूर्ण विभूतियों को आप व्याप्त कर लोकों में स्थित हैं| आप ही स्वयं इस दिव्यता (विभूतियों) को वर्णन करने में समर्थ हैं|*

कहो योगेश्वर करूँ मैं किस प्रकार निरंतर चिंतन |
हैं कौन कौन से भाव जो उपयुक्त चिंतन भगवन ||१०-१७||

भावार्थ: *हे योगेश्वर, मुझे बतलाओ कि मैं किस प्रकार निरन्तर चिन्तन करूँ| हे भगवन्, कौन कौन से भाव चिंतन के उपयुक्त हैं|*

करो वर्णन स्व-विभूति और योग शक्ति हे भगवन |
नहीं होती तृप्ति मुझे करते श्रवण अमृत वचन ||१०-१८||

भावार्थ: *हे भगवन, अपनी योग शक्ति और विभूति का वर्णन करो| अमृत (रूपी) वचनों को सुनते हुए मुझे तृप्ति नहीं हो पा रही|*

श्री भगवानुवाच
हो प्रसन्न बोले भगवन करूँ दिव्य विभूति वर्णन |
नहीं अंत मेरा विस्तार समझ लो तुम यह अर्जुन ||१०-१९||

भावार्थ: *भगवान् प्रसन्न हो कर बोले, 'मैं तुम्हें अपनी दिव्य विभूतियों का वर्णन करूंगा| हे अर्जुन, यह समझ लो कि मेरे विस्तार का अन्त नहीं है|'*

सुनो गुडाकेश हूँ मैं ही आत्मा स्थित हिय सब जन |
समझो मुझे ही आदि मध्य अंत सब सुरासुर भूजन ||१०-२०||

भावार्थ: *हे गुडाकेश (निद्राजित्), मैं ही समस्त प्राणियों के हृदय में स्थित सबकी आत्मा हूँ| सम्पूर्ण सुर, असुर एवं भूवासीओं का आदि, मध्य और अन्त भी मैं ही हूँ|*

समझ मुझे विष्णु तू द्वादस अदिति पुत्रों में अर्जुन |
मरुतों का तेज नक्षत्रों का शशि ज्योति सूर्य किरन ||१०-२१||

भावार्थ: *हे अर्जुन, तू मुझे बारह आदित्यों में विष्णु, ज्योति में सूर्य किरण, मरुतों का तेज और नक्षत्रों में चन्द्रमा समझ|*

हूँ मैं ही वेदों में सामवेद देवों में इंद्र अर्जुन |
इन्द्रियों में मन और भूत प्राणियों में चेतन ||१०-२२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मैं ही वेदों में सामवेद हूँ| देवों में इन्द्र हूँ| इन्द्रियों में मन हूँ और भूत प्राणियों में चेतना (ज्ञान शक्ति) हूँ|*

हूँ मैं रुद्रों में शिव और यक्षों में कुबेर सधन |
पर्वतों में मेरु वसुओं में अग्नि हे पृथानंदन ||१०-२३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मैं ही (ग्यारह) रुद्रों में शंकर हूँ और यक्षों में धनपति कुबेर (वित्तेश) हूँ| वसुओं में अग्नि एवं पर्वतों में मेरु हूँ|*

पुरोहितों में समझो मुझे बृहस्पति हे अर्जुन |
हूँ महासेनापति कार्तिकेय मैं ही क्षेत्र रन ||
समझो मुझे सागर जलाशयों में तुम युद्धिवन ||१०-२४||

भावार्थ: *हे योद्धा अर्जुन, पुरोहितों में मुझे बृहस्पति समझो| युद्ध क्षेत्र में मैं ही कार्तिकेय महासेनापति हूँ| जलाशयों में मुझे समुद्र समझो|*

महर्षियों में भृगु वाणी में हूँ ओंकार अर्जुन |
यज्ञों में जपयज्ञ शैलों में हिमालय गिरि पावन ||१०-२५||

भावार्थ: *महर्षियों में भृगु और वाणी में ओंकार मैं ही हूँ| यज्ञों में जपयज्ञ और पर्वतों में पावन हिमालय पर्वत हूँ|*

हूँ मैं पीपल सब वृक्षों में और नारद देवऋषिगन |
चित्ररथ गंधर्वों और सिद्धों में कपिल हे अर्जुन ||१०-२६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मैं समस्त वृक्षों में पीपल (अश्वत्थ), देवर्षियों में नारद, गन्धर्वों में चित्ररथ और सिद्ध पुरुषों में कपिल मुनि हूँ|*

हूँ उच्चैश्रवा अश्व निकला संग सोम सागर मंथन |
समझ गजों में मुझे ऐरावत एवं नृप सभी भूजन ||१०-२७||

भावार्थ: *मैं उच्चैश्रवा अश्व (सर्वश्रेष्ठ अश्व) हूँ जो अमृत के साथ समुद्र मंथन से प्रकट हुआ था| हाथियों में ऐरावत और मनुष्यों में नृप मुझे समझो|*

शस्त्रों में वज्र गायों में कामधेनु हूँ अर्जुन |
हूँ सर्पों में वासुकि मैं कंदर्प हेतु जन सृजन ||१०-२८||

भावार्थ: *शस्त्रों में वज्र और धेनुओं (गायों) में कामधेनु हूँ| सर्पों में वासुकि सर्प हूँ| मैं प्रजा उत्पत्ति का हेतु कन्दर्प (कामदेव) हूँ|*

हूँ शेषनाग नागों में और जल देवों में वरुन |
पितरों में अर्यमा और यम करूँ जो नियमन ||१०-२९||

भावार्थ: *मैं नागों में अनन्त (शेषनाग) हूँ और जल देवताओं में वरुण हूँ| मैं पितरों में अर्यमा और नियमन करने वाला यम हूँ|*

समझो मुझे तुम सम्राट प्रह्लाद मध्य दैत्यगन |
हूँ मैं ही काल करें जो ज्योतिष गणन इस भुवन ||
वन पशुओं में सिंह और गरुण खगों में अर्जुन ||१०-३०||

भावार्थ: *हे अर्जुन, दैत्यों में सम्राट प्रह्लाद और पृथ्वी पर ज्योतिष गणना करने वालों में मैं काल हूँ| वन पशुओं में सिंह और पक्षियों में गरुड़ हूँ|*

राम शस्त्रधारियों में और पवन करे जो पावन |
जलचरों में मकर और नदियों में हूँ गंगा पावन ||१०-३१||

भावार्थ: *मैं शस्त्रधारियों में राम और पवित्र करने वालों में वायु हूँ। जलचरों में मगरमच्छ और नदियों में पवित्र गंगा हूँ।*

हूँ स्थित मैं आदि अंत मध्य सृष्टि हे कुन्तीनन्दन |
हूँ वाद विवेचन में और विद्या में दैविक विद्यन् ||१०-३२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, सृष्टि का आदि, अन्त और मध्य मैं हूँ। मैं विद्या में आध्यात्म ज्ञान और विवेचन में वाद हूँ।*

हूँ अकार वर्णमाला में समासों में द्वंद्व अर्जुन |
हूँ काल का भी महाकाल मैं विराट रूप भगवन ||१०-३३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मैं वर्णमाला में अकार और समासों में द्वन्द्व हूँ। मैं काल का भी महाकाल (अक्षय काल) और विराट रूप भगवान् हूँ।*

हूँ मैं ही सर्व भक्षक मृत्यु और उत्पत्ति का कारन |
मैं ही कीर्ति श्री वाक स्मृति मेधा धृति अर्जुन ||
क्षमा सहित सब गुण हैं जो निहित नारि इस भुवन ||१०-३४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मैं ही सर्व भक्षक मृत्यु और उत्पत्ति का कारण हूँ। कीर्ति, श्री, वाक (वाणी), स्मृति, मेधा, धृति , क्षमा सहित इस विश्व की स्त्रियों के गुण मुझे ही समझो।*

गायत्री में मुझे छंद समझो तुम हे पृथानंदन |
हूँ मैं ही बृहत्साम करें जब सामवेद गायन ||
मासों में मार्गशीर्ष व् ऋतुओं में वसंत महन ||१०-३५||

भावार्थ: *हे पृथानंदन, गायत्री में मुझे छंद समझो। जब सामवेद का गायन होता है तो मैं ही बृहत्साम हूँ। मासों में मार्गशीर्ष और ऋतुओं में श्रेष्ठ वसन्त हूँ।*

हूँ मैं छलियों में द्यूत तेजस्वी का तेज अर्जुन |
विजय और व्यवसाय में समझो मुझे सत भाव जन ||१०-३६||

भावार्थः *हे अर्जुन, मैं छल करने वालों में द्यूत हूँ और तेजस्वियों का तेज हूँ| विजय और व्यवसाय (उद्यमशीलता) में मुझे पुरुषों का सात्विक भाव समझो|*

हूँ मैं वृष्णियों में वासुदेव पांडवों में अर्जुन |
ऋषियों में व्यास और कवियों में मैं कवि उशन ||१०-३७||

भावार्थः *मैं वृष्णि-वंशीयों में वासुदेव हूँ और पाण्डवों में अर्जुन| मैं मुनियों में व्यास और कवियों में उशन कवि हूँ|*

हूँ नीति रखें जो इच्छा विजय और दंड हूँ दमन |
हूँ मौन मैं भाव गुह्य और ज्ञान समस्त बुद्धिवन ||१०-३८||

भावार्थः *मैं विजय की इच्छा रखने वाले में नीति हूँ और दमन में दण्ड हूँ| गुह्यों में मैं ही मौन हूँ और समस्त बुद्धिमानों में ज्ञान हूँ|*

हूँ मैं ही बीज हेतु उत्पत्ति समस्त भूत हे अर्जुन |
मुझ में निहित सब नहीं अस्तित्व बिन मेरे किसी जन ||१०-३९||

भावार्थः *हे अर्जुन, समस्त भूतों की उत्पत्ति का कारण बीज मैं ही हूँ| सभी मुझ में निहित हैं| मेरे बिना किसी प्राणी का कोई अस्तित्व नहीं है|*

है नहीं अंत मेरी दिव्य विभूति हे परन्तप अर्जुन |
कहा संक्षेप में जो हर सकूं अज्ञान तेरा युद्धिवन ||१०-४०||

भावार्थः *हे परन्तप अर्जुन, मेरी दिव्य विभूतियों का अन्त नहीं है| अपनी विभूतियों को मैंने संक्षेप में तेरा अज्ञान हरण करने के लिए कहा है|*

हैं जो भी विभूति युक्त कान्ति और शक्ति इस भुवन |
समझो मेरे तेज के अंश से हुईं वह सभी उत्पन्न ||१०-४१||

भावार्थः *जो भी विभूति इस संसार में कान्ति एवं शक्ति युक्त हैं उनको तुम मेरे तेज के अंश से ही उत्पन्न हुई समझो|*

क्या प्रयोजन जानना चाहो अधिक इससे अर्जुन |
करूँ धारण ब्रह्माण्ड मैं रूप एक स्व-अंश वपुन ||१०-४२||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद विभूतियोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण दशम अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थः *हे अर्जुन, इससे अधिक (ज्ञान) जानने का क्या प्रयोजन है? (अर्थात मैं सम्पूर्ण ज्ञान तुम्हें दे चुका हूँ| अब और अधिक ज्ञान जान कर क्या करो?) मैं इस ब्रह्माण्ड को भगवान् रूप के एक अंश से धारण करता हूँ|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'विभूतियोग' नामक दशम अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय ११: विश्वरूपदर्शनयोग:

अर्जुन उवाच

कर कृपा मुझ पर कहे तुम अति गुह्य अध्यात्म वचन |
हुआ नष्ट मोह मेरा सुन प्रवचन प्रभु बोले अर्जुन ||११-१||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'हे प्रभु, मुझ पर अनुग्रह कर तुमने परम गोपनीय, अध्यात्म वचन कहे| उन प्रवचन को सुन मेरा मोह नष्ट हो गया है|'*

सुना हेतु उत्पत्ति विनाश आप के मुख कमलनयन |
हैं आप अविनाशी जान सका यह महात्म्य भगवन ||११-२||

भावार्थ: *हे कमलनयन, मैंने उत्पत्ति और प्रलय का कारण आप के मुख से सुना| हे भगवन, आपका अव्यय महात्म्य भी जान सका|*

हैं आप निःसंदेह नित्य कहा जैसा आपने भगवन |
है चाह देखूं अब प्रत्यक्ष रूप ईश्वर हे मधुसूदन ||११-३||

भावार्थ: *हे परमेश्वर, जैसा आपने कहा आप निःसंदेह नित्य हैं| हे मधुसूदन, मैं आपके ईश्वरीय रूप को प्रत्यक्ष देखना चाहता हूँ|*

यदि समझें आप शक्त देख सकूं रूप आपका भगवन |
हे योगेश्वर तब कराइए मुझे स्व-दिव्य रूप दर्शन ||११-४||

भावार्थ: *हे भगवन, यदि आप मानते हैं कि मैं आपका रूप देखने में समर्थ हूँ, हे योगेश्वर, तब आप अपने अव्यय रूप का मुझे दर्शन कराइये|*

श्री भगवानुवाच

पार्थ देखो अब तुम मेरे सहस्रश रूप बोले भगवन |
नाना प्रकार वर्ण व्यवेत आकार दिव्य वर्पन् ||११-५||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'पार्थ, अब तुम मेरे सहस्रों नाना प्रकार, वर्ण तथा असमरूप आकृति वाले दिव्य रूपों को देखो|'*

हे भारत देखो मुझ में सभी आदित्य वसु मरुद्गन |
रूद्र अश्वनीकुमार अन्य विस्मि न देखे अतिपन्न ||११-६||

भावार्थ: *हे भारत, मुझ में पूर्व में न देखे हुए आश्चर्य एवं सभी आदित्य, वसु, रुद्र, अश्विनीकुमार और मरुद्गण को देखो|*

देखो हुआ स्थित चराचर जगत एक स्थान मेरे तन |
देखो सभी जो चाहो देखना हे निन्द्रजित अर्जुन ||११-७||

भावार्थ: *हे निंद्रा को जीतने वाले अर्जुन (गुडाकेश), मेरे शरीर में एक स्थान पर स्थित हुए चराचर जगत् को देखो| जो भी तुम देखना चाहते हो, वह सभी देखो|*

नहीं समर्थ इन नेत्र देख सको तुम विराट वर्पन् |
दूँ दिव्य चक्षु जो कर सको ईश्वरीय योग दर्शन ||११-८||

भावार्थ: *तुम अपने इन (प्राकृत) नेत्रों से मुझे देखने में समर्थ नहीं हो इसलिए मैं तुम्हें दिव्य चक्षु देता हूँ जिससे तुम मेरे ईश्वरीय 'योग' को देख सको|*

संजय उवाच

बोले संजय राजन कहे यह शब्द महायोगेश्वर भगवन |
दिए तब अर्जुन ईश्वरीय युक्त स्व-रूप भगवद-दर्शन ||११-९||

भावार्थ: *संजय बोले, 'हे राजन् (धृतराष्ट्र), महायोगेश्वर हरि ने इस प्रकार के वचन कहे| तब अर्जुन को अपना भगवद-स्वरुप परम ईश्वरीय युक्त रूप दिखाया|'*

अनेक मुख युक्त विभव लोचन देखे भगवन तब अर्जुन |
युक्त दिव्य आभूषण था हस्तक शस्त्र अद्भुत वर्पन ||११-१०||

दिव्य कंठमाल दिव्य वस्त्र तन दिव्य गंध लेप धारन |
अद्भुत अनंत युक्त विस्मि विराट् रूप परम भगवन ||११-११||

भावार्थ: *तब अर्जुन ने भगवान् का अनेक मुख उपयुक्त नेत्रों से युक्त, दिव्य आभूषण पहने एवं हाथों में शस्त्र लिए अद्भुत रूप देखा| उनके कण्ठ में दिव्य माला और तन पर दिव्य वस्त्र थे| वह दिव्य गन्ध का लेपन किए हुए थे एवं समस्त प्रकार के आश्चर्यों से युक्त विराट् रूप परम भगवान् थे|*

हों जैसे उदय सहस्त्र रवि नभ दें साथ अवद्योतन |
था सलक्षण प्रकाश तन उन विश्वरूप श्री नारायन ||११-१२||

भावार्थ: *आकाश में सहस्र सूर्यों के एक साथ उदय होने से जो प्रकाश होगा उसके समान उन विश्वरूप श्री परमात्मा के तन में प्रकाश था|*

यद्यपि है यह जगत विभक्त पर देखा अविभक्त अर्जुन |
देखा समाहित एक स्थान तन में देवाधिदेव कृश्न ||११-१३||

भावार्थ: *अर्जुन ने विभक्त जगत् को अविभक्त रूप में देखा जो देवों के देव श्रीकृष्ण के शरीर में एक स्थान पर समाहित था|*

हो रहा अनुभव रोमांच हुए विस्मित श्री अर्जुन |
हुए नत मस्तक देख विश्वरूप बोले तब वह भगवन ||११-१४||

भावार्थ: *आश्चर्य चकित हो रोमांच का अनुभव करते हुए अर्जुन विश्वरूप रूप देख नत मस्तक हो कर भगवान् से बोले|*

अर्जुन उवाच
देखूं मैं समस्त देव समुदाय अनेक जन बोले अर्जुन |
कमलासीन ब्रह्मा महादेव सर्व ऋषि दिव्य अहिन ||११-१५||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'मैं समस्त देवों को तथा अनेक प्राणियों के समुदायों को और कमलासन पर स्थित ब्रह्माजी को, शंकर को, समस्त ऋषियों को और दिव्य सर्पों को देख रहा हूँ।*

देखूं मैं हरि अनंत रूप अनेक बाहु उदर मुख नयन |
न पा सकूं मैं आदि अंत मध्य हे विश्वरूप भगवन ||११-१६||

भावार्थ: *हे प्रभु, मैं आपके अनंत रूप देख रहा हूँ जिनमें अनेक बाहु, उदर, मुख और नेत्र हैं। हे विश्वरूप भगवन, मैं आपके आदि, मध्य और अन्त को देखने में असमर्थ हूँ।*

देखता युक्त मुकुट गदा चक्र तेजस्वी रूप भगवन |
देदीप्यमान सम अग्नि रवि अप्रमेय दुरालोक तन ||११-१७||

भावार्थ: *मुकुट, गदा एवं चक्र युक्त तेजस्वी स्वरुप जो अग्नि और सूर्य के समान ज्योतिर्मय, अप्रमेय एवं देखने में अति कठिन है, देख रहा हूँ।*

हैं आप ही परम अक्षर निधान विश्व धर्मी पावन |
मानता हूँ आप ही रक्षक नित्य धर्म सनातन जन ||११-१८||

भावार्थ: *आप ही परम अक्षर हैं। आप ही सत्य ,पवित्र एवं इस विश्व के परम आश्रय (निधान) हैं। आप ही शाश्वत धर्म के रक्षक एवं सनातन पुरुष हैं, ऐसा मेरा मानना है।*

हैं रहित आदि अंत मध्य युक्त अनंत सामर्थ्य भगवन |
हैं युक्त आप अनंत बाहु सम सोम रवि अनेक नयन ||
हैं मुख दीप्ति अग्नि रूप तपा रहे स्व-तेज से भुवन ||११-१९||

भावार्थ: *आप आदि, अन्त और मध्य से रहित, अनंत सामर्थ्य से युक्त हैं। अनंत बाहुओं वाले तथा चन्द्र, सूर्य स्वरूपी अनेक नेत्रों वाले हैं। दीप्ति अग्नि रूपी मुख वाले आप अपने तेज से इस विश्व को तपा रहे हैं।*

हैं व्याप्त आप समस्त दिशाएं मध्य भू नभ महन |
हो रहे भयभीत त्रिलोक देख अद्भुत उग्र वर्पन ||११-२०||

भावार्थ: *हे महात्मन्, आकाश और पृथ्वी के मध्य समस्त दिशाओं में आप व्याप्त हैं| आपके इस अद्भुत और उग्र रूप को देखकर तीनों लोक भयभीत हो रहे हैं|*

करबद्ध समस्त समूह देव कर रहे प्रवेश आपके तन |
होते प्रतीत भयभीत कर रहे स्तुति आपकी भगवन ||
समूह महर्षि सिद्धगण कर रहे सब स्वस्तिवाचन |
उत्तम अनुरक्ति मन्त्रों से कर रहे सब स्तुति गायन ||११-२१||

भावार्थ: *समस्त देवताओं के समूह हाथ जोड़े आप के शरीर में प्रवेश कर रहे हैं| ऐसा प्रतीत होता है कि वह भयभीत होकर आप की स्तुति कर रहे हैं| महर्षि और सिद्धों के समुदाय 'कल्याण हो' (स्वस्तिवाचन) ऐसा कहकर उत्तम भक्ति पूर्ण मन्त्रों द्वारा आपकी स्तुति कर रहे हैं|*

आदित्य साध्य विश्वेदेव द्वि-अश्वनीकुमार वसुगन |
रूद्र ऊष्मपा गन्धर्व यक्ष असुर सिद्ध और मरुद्गन ||
हो विस्मित देख रहे रूप अद्भुत अलौकिक भगवन ||११-२२||

भावार्थ: *आदित्य, साध्य, विश्वेदेव, दोनों अश्विनीकुमार, वसुगण, रूद्र, ऊष्मपा, गन्धर्व, यक्ष, असुर, सिद्ध, मरुद्गण, यह सब विस्मित होते हुए आपके (भगवान् के) अद्भुत अलौकिक रूप को देख रहे हैं|*

विकराल दन्त बहु मुख बाहु उरु पग उदर और नयन |
हो रहे भयभीत देख रूप सब मैं स्वयं भी भगवन ||११-२३||

भावार्थ: *हे भगवन, आपके विकराल दन्त, अनेक मुख, नेत्र, बाहु, उरु (जंघा), पग, उदर वाले वाले रूप को देखकर सब मेरे सहित भयभीत हो रहे हैं|*

कर रहा स्पर्श नभ दिव्य तन युक्त अनेक मुख नयन |
नहीं पा रहा धैर्य शम देख यह बृहत् रूप भगवन ||११-२४||

भावार्थ: *हे भगवन, आकाश को स्पर्श करता हुआ आपका दिव्य शरीर अनेक मुख और विशाल नेत्र से युक्त है| इस विशाल रूप को देख मैं धैर्य और शान्ति को नहीं पा रहा हूँ|*

हो रहा दिशा भ्रम और खो रहा शान्ति हे भगवन |
देख विकराल दन्त सम प्रलयाग्नि ज्वलित आसन् ||
हे देवेश जगन्निवास हरि हों आप तत्काल प्रसन्न ||११-२५||

भावार्थ: *हे भगवन, आपके विकराल दन्त और प्रलयाग्नि के समान प्रज्वलित मुखों को देखकर मुझे दिशा भ्रम हो रहा है और मैं शान्ति खो रहा हूँ| हे देवेश, जगन्निवास हरि, आप तुरंत प्रसन्न हो जाइए|*

पुत्र धृतराष्ट्र सहित नृप कर रहे प्रवेश हरि तन |
भीष्म द्रोण कर्ण सहित सभी हमारे पक्ष युद्धिवन ||११-२६||
देख रहा हूँ फँस रहे आपके विकराल दन्त भगवन |
हो रहे सर चूर्णित उनके फँस आपके मुख दुर्धर्षन् ||११-२७||

भावार्थ: *मैं देख रहा हूँ कि धृतराष्ट्र के पुत्र राजाओं सहित प्रभु के शरीर में प्रवेश कर रहे हैं| भीष्म, द्रोण, कर्ण और हमारे पक्ष के योद्धागण भी आपके विकराल दंतों में फँस रहे हैं| हे भगवन, आपके भयानक मुख में फँस उनके सर चूर्णित हो रहे हैं|*

सम बहे नदी जल प्रवाह ओर समुद्र द्रुतगामिन |
वैसे ही कर रहे प्रवेश आपके मुख भू योद्धागन ||११-२८||

भावार्थ: *जैसे नदियों के जल प्रवाह समुद्र की ओर वेग से बहते हैं वैसे ही पृथ्वी के योद्धागण आपके मुख में प्रवेश कर रहे हैं|*

जैसे विनाश हेतु पतंगे करें प्रवेश प्रज्वलित दहन |
कर रहे प्रवेश स्व-विनाश हेतु मुख आपके युद्धिवन ||११-२९||

भावार्थ: *जैसे पतंगे अपने नाश के लिए प्रज्वलित अग्नि में प्रवेश करते हैं यह योद्धागण अपने नाश के लिए आपके मुख में प्रवेश कर रहे हैं|*

ले रहे आस्वादन विष्णु आप करते हुए लोक ग्रसन |
तपा रहा जग तेज आपका जो उग्र प्रकाश भगवन ||११-३०||

भावार्थ: *हे विष्णु भगवन, आप लोकों को ग्रसते हुए आस्वाद ले रहे हैं| हे भगवन, आपका उग्र प्रकाश रूपी तेज संसार को तपा रहा है|*

हैं कौन आप किए धारण यह उग्र रूप हे भगवन |
हे सत्तम देव कर स्वीकार नमन मेरा होईए प्रसन्न ||
दीजिए ज्ञान तत्व जान सकूं मैं आपका प्रयोजन ||११-३१||

भावार्थ: *हे भगवन, उग्र रूप धारण करने वाले आप कौन हैं? हे देवों में श्रेष्ठ, आपको नमस्कार है, आप प्रसन्न होईए| आप तत्व ज्ञान दीजिए ताकि मैं आपका प्रयोजन समझ सकूं|*

श्री भगवानुवाच

हूँ मैं प्रवृद्ध काल जो करूँ नाश जग बोले भगवन |
आया बन काल यहां करूँ संहार सब अधर्मी जन ||
करो तुम युद्ध या नहीं न रहें जीवित प्रतिपक्ष जन ||११-३२||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'मैं संसार का नाश करने वाला प्रवृद्ध काल हूँ| इस समय मैं सभी अधर्मी प्राणियों का संहार करने आया हूँ| तुम युद्ध करो अथवा नहीं, यह प्रतिपक्ष जन जीवित नहीं रहेंगे|*

उठो धनुर्धर बनो निमित्त करो युद्ध मारो वैरिन |
पाओ यश भोगो राज हैं यह मृतक द्वारा भगवन ||११-३३||

भावार्थ: *हे धनुर्धर, उठो और इन शत्रुओं को मारने के निमित्त बनो| यश को प्राप्त करो और राज्य भोगो| यह तो पहले से ही मेरे (भगवान्) द्वारा मारे जा चुके हैं।*

करो वध तुम भीष्म द्रोण जयद्रथ कर्ण सम युद्धिवन |
हैं यह वधित हो अभय करो तुम युद्ध जीतो वैरिन ||११-३४||

भावार्थ: *तुम द्रोण, भीष्म, जयद्रथ, कर्ण समान सभी योद्धाओं का वध करो| यह पहले ही (मेरे द्वारा) वधित (मारे गए) हैं| भय मत करो, तुम युद्ध करो और शत्रुओं को जीतो|*

संजय उवाच

बोले संजय सुने किरीटी पार्थ ने केशव वचन |
करबद्ध कम्पित तन भय से बोले वह करते हरि नमन ||११-३५||

भावार्थ: *संजय बोले,' केशव (भगवान्) के यह वचन सुनकर किरीटी अर्जुन हाथ जोड़े हुए, कांपते हुए तन एवं भयभीत हुए प्रभु को नमस्कार करते हुए बोले|'*

अर्जुन उवाच

है यह सत्य हरि हो रहा हर्षित जग कर आपके कीर्तन |
भयभीत भाग रहे असुर समस्त दिशाएं बोले अर्जुन ||
पा रहे अनुराग पर कर नमन समुदाय सिद्ध भक्तगन ||११-३६||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'यह सत्य है कि आपके कीर्तन करने से जग अति हर्षित हो रहा है| भयभीत राक्षस लोग समस्त दिशाओं में भाग रहे हैं परन्तु आपको नमन कर सिद्ध भक्तगणों के समुदाय अनुराग पा रहे हैं|'*

हैं आप ही आदि ब्रह्मा श्रेष्ठ कर्ता महात्मन |
हे अनंत देवेश जगन्निवास करें सब आपका नमन ||
हैं आप परे सत असत पक्ष और अक्षर तत्व भगवन ||११-३७||

भावार्थ: *हे महात्मन्, आप ही आदि ब्रह्मा और श्रेष्ठ कर्ता हैं| हे अनन्त, देवेश, जगन्निवास, आपको सब नमन करते हैं| आप सत्, असत् पक्ष से परे अक्षर तत्व भगवान् हैं|*

हैं आप आदि देव जग परम आश्रय ज्ञाता सनातन |
हैं ज्ञेय परम धाम अनंत रूप विश्व व्याप्त हे भगवन ||११-३८||

भावार्थ: *आप आदि देव, जगत् के परम आश्रय, ज्ञाता, और पुराण (सनातन) हैं| हे भगवन, आप ज्ञेय, (जानने योग्य), परम धाम, अनन्त रूप, विश्व व्याप्त हैं|*

हैं आप ही यम दहन वरुण सोम ब्रह्मा और पवन |
प्रपितामह करो स्वीकार मेरे सहस्त्र सहस्त्र नमन ||११-३९||

भावार्थ: *आप ही वायु, यम, अग्नि, वरुण, चन्द्रमा हैं| हे प्रपितामह (ब्रह्मा के भी कारण), मेरे सहस्र सहस्त्र नमस्कार स्वीकार कीजिए|*

हे सर्वरूप सर्वव्याप्त अमित विक्रमी सर्वात्मन |
हे अनंत शक्त भगवन करूँ मैं अग्रत पृष्ठत नमन ||११-४०||

भावार्थ: *हे सर्वरूप सर्वव्याप्त अमित विक्रमी सर्वात्मन, हे अनन्त सामर्थ्य वाले भगवन्, मैं आप को आगे और पीछे (अर्थात सर्वत्र स्थानों) से नमस्कार करता हूँ|*

समझ सखा आपको नहीं जान सका महिमा भगवन |
पुकारा बलात जैसे यादव सखा हो वश प्रमादिन् ||११-४१||
किया बहु भांति अपमान काल शय्या आसन भोजन |
कभी एकांत कभी समक्ष अन्य करूँ अघ क्षमायाचन ||११-४२||

भावार्थ: *हे भगवन्, आपको सखा समझ आपकी महिमा को नहीं जान सका| प्रमाद से आपको 'यादव, सखा', कह कर बलात् पुकारा| मैंने शय्या, आसन और भोजन के समय कभी अकेले कभी औरों के समक्ष आपका बहुत प्रकार से अपमान किया है| इन पापों को क्षमा करो|*

आप चराचर जगत पिता गुरु पूजनीय प्रकर्षिन् |
नहीं कोई सम त्रिलोक अप्रतिम प्रभाव भगवन ||११-४३||

भावार्थ: *आप इस चराचर पृथ्वी के पिता, पूजनीय और सर्वश्रेष्ठ गुरु हैं| भगवान् के अप्रितम प्रभाव के समान तीनों लोकों में कोई नहीं है|*

कर प्रणिपात साष्टांग तन करूँ स्तुति हे भगवन |
सुनो प्रार्थना मेरी हे हरि और हो तुम प्रसन्न ||
करो क्षमा मेरे अपराध जैसे करे प्रिय प्रियन |
पिता पुत्र के गुरु शिष्य के और सखा स्नेहन् ||११-४४||

भावार्थः *हे भगवन्, मैं शरीर से साष्टांग प्रणिपात करके आपकी स्तुति करता हूँ| हे ईश्वर आप मेरी प्रार्थना सुनो और प्रसन्न हो| जैसे पिता पुत्र के, मित्र मित्र के और प्रिय प्रिया के अपराध क्षमा कर देता है उसी समान आप भी मेरे अपराधों को क्षमा कीजिये|*

हो रहा हर्षित मैं देख अद्दष्टपूर्व रूप भगवन |
हों प्रकट आप सौम्य रूप करे इच्छा यह भीरु मन ||
हे देवेश जगन्निवास होइए आप मुझ पर प्रसन्न ||११-४५||

भावार्थः *हे भगवन, मैं आपके इस अद्दष्टपूर्व रूप को देखकर हर्षित हो रहा हूँ| आप सौम्य रूप में प्रकट होइए ऐसी इच्छा यह भयभीत मन कर रहा है| हे देवेश, जगन्निवास, आप मुझ पर प्रसन्न होइए|*

देखना चाहूँ रूप युक्त मुकुट कर चक्र गदा भगवन |
सौम्यमूर्ते सहस्रबाहो दिखाइए चतुर्भुज वर्पन् ||११-४६||

भावार्थः *हे भगवन, मैं आपका मुकुटधारी, गदा और चक्र हाथ में लिए रूप देखना चाहता हूँ| हे सौम्यमूर्ते, सहस्रबाहो, चतुर्भुज रूप दिखाइए|*

श्री भगवानुवाच

दिखाया आत्मयोग से तेजस्वी रूप तुम्हें अर्जुन |
यह अनंत विराट रूप न देखा पूर्वकाल किसी जन ||
हूँ मैं प्रसन्न तुम पर निःसंदेह बोले भगवन ||११-४७||

भावार्थः *भगवान् बोले, 'हे अर्जुन, मैंने आत्मयोग (योग शक्ति) से तेजोमय रूप तुम्हें दिखाया है| यह अनन्त विराट रूप पूर्व में किसी प्राणी ने नहीं देखा है| निःसंदेह मैं तुम पर प्रसन्न हूँ|*

अतिरिक्त तुम्हारे असंभव देख सकें यह रूप भूजन |
चाहे करें वह यज्ञ दान अनुष्ठान उग्र तप वेदाध्ययन ||११-४८||

भावार्थ: *तुम्हारे अतिरिक्त इस रूप को देखना प्राणियों के लिए असंभव है| चाहे वह वेदाध्ययन, यज्ञ, दान, अनुष्ठान और उग्र तप करें|*

न हो व्यथित मूढ़ भावित देख कर उग्र रूप अर्जुन |
हो प्रसन्न और निर्भय देखो मेरा चतुर्भुज वर्पन् ||११-४९||

भावार्थ: *अर्जुन, मेरे उग्र रूप को देखकर तुम व्यथा और मूढ़ भाव को प्राप्त नहीं हो| निर्भय और प्रसन्नचित्त होकर मेरे चतुर्भुज रूप को देखो|*

संजय उवाच

बोले संजय तब दिखाया सहज चतुर्भुज रूप भगवन |
किए आश्वस्त भयभीत अर्जुन तब महात्मा कृष्न ||११-५०||

भावार्थ: *संजय बोले, 'भगवान् ने तब अपने सौम्य चतुर्भुज रूप को दर्शाया| महात्मा कृष्ण ने तब भयभीत अर्जुन को आश्वस्त किया|'*

अर्जुन उवाच

देख सौम्य रूप हुआ मैं शांत चित्त बोले अर्जुन |
कर सका प्राप्त सचेत स्व-प्रकृति अब हे जनार्दन ||११-५१||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'हे जनार्दन, आपके सौम्य रूप को देखकर अब मैं शांत चित्त एवं सचेत हो गया हूँ और अपने स्वभाव को प्राप्त हो गया हूँ|'*

श्री भगवानुवाच

है अति दुर्लभ देखना यह मेरा रूप बोले भगवन |
पा सकें दर्शन यह रूप रहते सदा इच्छुक देवगन ||११-५२||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'मेरा यह रूप देखना अति दुर्लभ है| देवतागण भी सदा इस रूप के दर्शन के इच्छुक रहते हैं|'*

रहे स्मरण नहीं कर सके कोई मेरे दर्शन हे अर्जुन |
सुर असुर नर या अन्य हेतु यज्ञ तप दान वेद अध्ययन ||
देखा जो तुमने अभी विराट या चतुर्भुज वर्पन ||११-५३||
है संभव जानें मुझे अनन्य भक्ति से ही हे अर्जुन |
जो जानें तत्व मेरा कर सकें दिव्य साकार दर्शन ||११-५४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, स्मरण रहे कि जो विराट रूप अथवा सौम्य चतुर्भुज रूप तुमने अभी देखा, इसे कोई सुर, असुर, नर या अन्य तप, दान, यज्ञ अथवा वेद अध्ययन से नहीं देख सकता| हे अर्जुन, अनन्य भक्ति के द्वारा मुझे समझना संभव है (अनन्य भक्ति के माध्यम से प्रभु को समझना संभव है)| जो मेरा तत्व जानते हैं वह मेरे दिव्य साकार दर्शन कर सकते हैं|*

करे कर्म हेतु मेरे और परम लक्ष्य मैं जिस भूजन |
अनासक्त निर्वैर भक्त वह कर सके मेरा निरूपन ||११-५५||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद विश्वरूपयोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण एकादस अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थ: *जो पुरुष मेरे लिए ही कर्म करता है, मैं ही जिसका परम लक्ष्य हूँ, वह वैर एवं आसक्ति रहित भक्त मेरे रूप के दर्शन कर सकता है|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'विश्वरूपयोग' नामक एकादस अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय १२: भक्तियोग:

अर्जुन उवाच

है कौन उत्तम योगवित मध्य दोनों पूछे अर्जुन |
करे पूजन सतत आपका या अक्षर अव्यक्त निर्गुन ||१२-१||

भावार्थ: *अर्जुन ने पूछा, 'उन दोनों में से कौन उत्तम योगवित् है जो सतत आपकी उपासना करता है अथवा अक्षर अव्यक्त निर्गुण की उपासना करता है|'*

श्री भगवानुवाच

कर मन एकाग्र हो नित्य-युक्त करें जो मेरा पूजन |
हैं श्रेष्ठ वह श्रद्धा युक्त भक्तजन बोले भगवन ||१२-२||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'मुझ में मन को एकाग्र करके नित्य-युक्त हो जो भक्त परम श्रद्धा से मेरी उपासना करते हैं, वह श्रेष्ठ हैं|'*

जो करें साधना रूप अनिर्देश्य अव्यक्त परिज्मन् |
अक्षर अचिन्त्य कूटस्थ अचल ध्रुव रुप श्री भगवन ||१२-३||
कर सकें वह वश इन्द्रियाँ और रखें सम भाव जन |
रहें रत हित सदा भूजन पा सकें मुझे वह भक्तगन ||१२-४||

भावार्थ: *जो अक्षर, अनिर्देश्य, अव्यक्त, सर्वगत, अचिन्त्य, कूटस्थ, अचल और ध्रुव रूप भगवान् की उपासना करते हैं, इन्द्रिय समुदाय को भली भांति नियमित कर लेते हैं, समभाव वाले हैं, प्राणियों के हित में सदा रत रहते हैं, वह भक्त मुझे पा सकते हैं|*

हुए आसक्त जो अव्यक्त रुप होता कष्ट उन्हें साधन |
समझना गति अव्यक्त की कठिन हेतु तनधारी जन ||१२-५||

भावार्थ: *अव्यक्त रूप में आसक्त होने वालों को साधना में क्लेश होता है क्योंकि देहधारियों को अव्यक्त की गति समझना कठिन है|*

हों मेरे परायण कर अर्पण समस्त कर्म जो भक्त जन |
कर ध्यान अनन्य योग जो करें सदैव मेरा ही भजन ||१२-६||
हुआ जिन साधक चित्त स्थिर मुझ में हे पृथानंदन |
मरण सम भव सागर से करूँ उद्धार तुरंत ऐसे जन ||१२-७||

भावार्थ: *जो भक्तजन मेरे परायण होकर सब कर्मों को मुझे अर्पण करके अनन्य योग के द्वारा मेरा ही भजन करते हैं, जिन साधक का मन मुझ में स्थिर हो गया है, हे अर्जुन, ऐसे प्राणियों को तुरंत मृत्यु सम भवसागर से उद्धार कर देता हूँ|*

कर प्रविष्ट बुद्धि मुझ में करो चित्त स्थिर अर्जुन |
करोगे निवास मुझ में ही तब निःसंदेह युद्धिवन ||१२-८||

भावार्थ: *हे योद्धा अर्जुन, मुझ में बुद्धि को प्रविष्ट कर चित्त को स्थिर करो तदुपरान्त तुम मुझ में ही निवास करोगे, इसमें कोई संशय नहीं है|*

हो नहीं समर्थ यदि तुम कर सको स्थिर मुझ में मन |
करो यत्न पा सको मुझे अभ्यास योग से हे अर्जुन ||१२-९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, यदि तुम अपने मन को मुझ में स्थिर करने में समर्थ नहीं हो तो अभ्यास योग के द्वारा मुझे प्राप्त करने का प्रयत्न करो|*

यदि न संभव अभ्यास योग करो कर्म हो मेरे परायन |
पाओगे सिद्धि निःसंशय करो जब कर्म मुझे अर्पन ||१२-१०||

भावार्थ: *यदि तुम अभ्यास योग करने में असमर्थ हो तो मेरे परायण हो कर कर्म करो| मुझे अर्पण करते हुए कर्मों को करने से निःसंदेह सिद्धि को प्राप्त करोगे|*

हो असमर्थ यदि कर सको कोई एक कथित साधन |
आत्म संयम से योग द्वारा करो तुम त्याग फल करन ||१२-११||

भावार्थ: *यदि एक भी कथित साधन करने में असमर्थ हो तो तुम आत्म संयम से योग द्वारा कर्मों के फल का त्याग करो|*

है ज्ञान श्रेष्ठ अभ्यास से और ध्यान श्रेष्ठ आबोधन |
पर सर्व श्रेष्ठ कर्म फल त्याग जो देता तुरंत शामन ||१२-१२||

भावार्थ: *अभ्यास से ज्ञान श्रेष्ठ है| ज्ञान से श्रेष्ठ ध्यान है| सर्व श्रेष्ठ कर्म फल त्याग है जिससे तत्काल शान्ति मिलती है|*

है रहित द्वेष ममता गल्भ मित्रवत दयालु जो भूजन |
क्षमाशील सम दुःख सुख करे नित्य निरंतर मेरा भजन ||१२-१३||
संतुष्ट योगी इन्द्रियजित दृढ़ निश्चयी भक्तजन |
प्रिय मुझे करे जो मन बुद्धि सम्पूर्ण मुझ में अर्पन ||१२-१४||

भावार्थ: *द्वेष, ममता एवं अहंकार से रहित, सब का मित्र, करुणावान्, सुख और दुःख में सम, क्षमावान्, मेरा नित्य निरंतर भजन करने वाला, इन्द्रियजित (जिसने इन्द्रियों को संयमित कर लिया है), दृढ़ निश्चयी, योगी , संतुष्टी, मन और बुद्धि मुझ में अर्पण किए हुए, ऐसा भक्त मुझे प्रिय है|*

नहीं हो उद्विग्न कभी और नहीं हो क्षुब्ध किसी जन |
हो मुक्त हर्ष अमर्ष भय उद्वेग वह मेरा प्रिय भक्तजन ||१२-१५||

भावार्थ: *जो उद्वेग (आवेश) को प्राप्त नहीं होता और जो किसी व्यक्ति से क्षुब्ध नहीं होता तथा जो हर्ष, अमर्ष (असहिष्णुता) भय और उद्वेगों से मुक्त है, वह भक्त मुझे प्रिय है|*

अनपेक्ष दक्ष उदासीन गतव्यथ कर्म त्यागी पावन |
संपन्न यह गुण भक्त है मुझे अति प्रिय हे अर्जुन ||१२-१६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, अपेक्षा रहित, शुद्ध, दक्ष, उदासीन, व्यथा रहित और कर्म त्यागी, इन गुणों से संपन्न भक्त मुझे अति प्रिय है|*

हो जो कभी न हर्षित करे न द्वेष न शोक न मन्मन् |
करे त्याग सत असत कर्म वह मेरा प्रिय भक्तजन ||१२-१७||

भावार्थः *जो भक्त कभी न हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न शोक करता है, न आकांक्षा करता है, शुभ और अशुभ कर्म को त्याग देता है, वह मेरा प्रिय भक्त है|*

रहे सम शत्रु मित्र मान अपमान शीत उष्ण जो भूजन |
आसक्ति रहित सम सुख दुःख सदा जो भक्त अर्जुन ||१२-१८||
रहे सम निन्द प्रशंसा अनिकेत संतुष्ट अल्प साधन |
हो मननशील स्थिर बुद्धि है अति प्रिय वह भक्तजन ||१२-१९||

भावार्थः *हे अर्जुन, जो भक्त शत्रु और मित्र, मान और अपमान, शीत और उष्ण, सुख और दुःख में सम और आसक्ति रहित है, निन्दा और प्रशंसा दोनों में ही समान रहता है, मननशील है, अल्प साधन से सन्तुष्ट रहता है, अनिकेत है, स्थिर बुद्धि वाला है, वह भक्त मुझे अति प्रिय है|*

जो मानें मुझे परम लक्ष्य वह श्रद्धावान भक्तगन |
हैं मेरे प्रिय करें जो यथावत धर्ममय कर्म पालन ||१२-२०||

करते हुए ओम तत सत पूर्ण भगवन्नाम उच्चारन |
ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद भक्तियोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण द्वादस अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थः *जो श्रद्धावान भक्तगण मुझे ही परम लक्ष्य मानते हैं एवं यथोक्त धर्ममय कर्म का पालन करते हैं, वह मुझे प्रिय हैं|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'भक्तियोग' नामक द्वादस अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय १३: क्षेत्र-क्षेत्रज्ञविभागयोग:

अर्जुन उवाच
जानना चाहूँ विषय ज्ञान और ज्ञेय बोले अर्जुन |
दो ज्ञान मुझे प्रकृति पुरुष क्षेत्र क्षेत्रज्ञ कृष्न ||१३-१||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'हे कृष्ण, मैं प्रकृति, पुरुष, क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ तथा ज्ञान और ज्ञेय को जानना चाहता हूँ|'*

श्री भगवानुवाच
हे अर्जुन समझो शरीर को ही क्षेत्र बोले भगवन |
जाने जो यह तथ्य समझो उसे तुम क्षेत्रज्ञ बुद्धिवन ||१३-२||

भावार्थ: *श्री भगवान् बोले, 'हे अर्जुन, इस शरीर को ही क्षेत्र कहते हैं| जो यह तथ्य जानता है वह ज्ञानी क्षेत्रज्ञ है|'*

समझो मुझे ही क्षेत्रज्ञ तुम सब क्षेत्र हे पृथानंदन |
है क्षेत्र क्षेत्रज्ञ ज्ञान ही सत्य ऐसा मेरा आंकलन ||१३-३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, समस्त क्षेत्रों में क्षेत्रज्ञ मुझे ही जानो| क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का ज्ञान ही सत्य है, ऐसा मेरा मत है|*

क्या है क्षेत्र क्या उसके विकार और क्या कारन |
क्या डालता प्रभाव क्षेत्रज्ञ सुनो अब तुम अर्जुन ||१३-४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, क्षेत्र क्या है, इसके विकार क्या हैं, इस का कारण क्या है और क्षेत्रज्ञ क्या प्रभाव डालता है? यह अब सुनो|*

किए वेद ऋचाएं और ऋषि क्षेत्र क्षेत्रज्ञ का वर्णन |
सम्यक् प्रकार से ब्रह्मसूत्र में भी है इसका विवरन ||१३-५||

भावार्थः *क्षेत्र, क्षेत्रज्ञ का वर्णन वेद की ऋचाएं एवं ऋषियों ने किया है| इसे सम्यक् प्रकार से ब्रह्मसूत्र में भी वर्णित किया गया है|*

पञ्च महाभूत दस इन्द्रिय मद मूल-प्रकृति वयुन |
पञ्च विषय मन व् इन्द्रिय हैं चौबीस क्षेत्र अयन ||१३-६||

भावार्थः *हे अर्जुन, पञ्च महाभूत, दस इन्द्रियाँ, अहंकार, बुद्धि, मूल-प्रकृति, मन तथा इन्द्रियों के पाँच विषय, यह क्षेत्र की चौबीस गति हैं|*

इच्छा द्वेष सुख दुःख स्थूल तन पिंड धृति और चेतन |
इन विकारों को समझो लक्षण क्षेत्र तुम हे अर्जुन ||१३-७||

भावार्थः *हे अर्जुन, इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख, स्थूल देह का पिण्ड, चेतन और धृति, इन विकारों को क्षेत्र के लक्षण समझो|*

न हो भाव साधक कभी उच्चता और दम्भाचरन |
हो हृदय में सदैव अहिंसा क्षमा और सहजपन ||
हो भाव गुरु सेवा जितेन्द्रिय स्थिर बुद्धि पावन ||१३-८||

भावार्थः *साधक में श्रेष्ठता एवं दम्भाचरण का भाव न हो| हृदय में अहिंसा, क्षमा, सरलता का भाव हो| गुरु के प्रति सेवा भाव, पवित्र, जितेन्द्रिय एवं स्थिर बुद्धि वाला हो|*

रहे भोग आसक्ति रहित अगर्वित इह व् परलोक जन |
करे जन्म मरण जरण विकर में दुःख बार बार चिन्तन ||१३-९||

भावार्थः *इस लोक और परलोक में भोग में आसक्ति और अहंकार रहित हो| जन्म, मृत्यु, वृद्धावस्था एवं व्याधि में दुःख का बार बार विचार करे|*

रहे रहित आसक्ति ममता संतान पत्नी निवास धन |
रखे सम अनुकूल प्रतिकूल परिस्थिति अपना मन ||१३-१०||

भावार्थः *संतान, स्त्री, घर, धन, ममता आदि में आसक्ति का अभाव हो| प्रिय और अप्रिय परिस्थिति में अपने चित्त को सम रखे |*

कर मन एकाग्र करे मेरी भक्ति अनन्य योग से जन |
हो न प्रीत जन समुदाय करे वरण सदा एकाकीपन ||१३-११||

भावार्थः *अनन्य योग के द्वारा चित्त को एकाग्र कर मेरी भक्ति करे| मनुष्यों के समुदाय में प्रेम न हो और एकाकी स्वभाव का हो|*

रखे जो साधक नित्य स्थिति अध्यात्म ज्ञान में अर्जुन |
देखे सदा तत्व ज्ञान के अर्थ रूप में केवल श्री भगवन ||
समझो उसे ज्ञानी भक्त विपरीत इसके अज्ञानी जन ||१३-१२||

भावार्थः *हे अर्जुन, जो साधक अध्यात्म ज्ञान में नित्य स्थिति रखे और तत्व ज्ञान के अर्थ रूप केवल परमात्मा को देखे, उसे ज्ञानी भक्त समझो (अर्थात वह भक्त सत्य ज्ञान जानता है)| जो इससे विपरीत है, वह अज्ञानी है|*

समझ जिसे नर पाए अमरत्व करूँ उस ज्ञेय का वर्णन |
समझो इसे अनादि परब्रह्म है न सत न असत अर्जुन ||१३-१३||

भावार्थः *हे अर्जुन, मैं उस ज्ञेय (ज्ञान से जानने योग्य) का वर्णन करूंगा जिसे समझ कर मनुष्य अमृतत्व को प्राप्त करता है| इसे अनादि, परब्रह्म समझो| यह न सत् है और न असत्|*

हैं सब ओर स्थित प्रभु के पद कर सर मुख कर्ण नयन |
कर व्यापित जग हैं स्थित परमात्म-तत्व में अर्जुन ||१३-१४||

भावार्थः *हे अर्जुन, भगवान् के हाथ, पैर, नेत्र, शिर, मुख और कर्ण सब ओर स्थित हैं| संसार में सब को व्याप्त कर वह परमात्म-तत्व में स्थित है|*

हैं प्रभु रहित समस्त विषय इन्द्रिय हे पृथानंदन |
करते प्रकाशित विषय रहते हुए स्वयं रहित बंधन ||
हैं रहित गुण और पोषक धारक गुण भोक्त भगवन ||१३-१५||

भावार्थ: *हे अर्जुन, भगवान समस्त विषय इन्द्रियों से रहित हैं| स्वयं के बंधन रहित रहते हुए वह समस्त विषय (गुण) को प्रकाशित करते हैं| वह गुण रहित हैं| सब का धारण पोषण करने वाले और गुणों के भोक्त भगवन हैं|*

हैं चर अचर सूक्ष्म अविज्ञेय स्थित अंतर्बाह्य भूजन |
हैं सर्वव्यापी चाहे स्थित सुदूर या अति समीप जन ||१३-१६||

भावार्थ: *भगवान् चर, अचर हैं| प्राणियों के अन्तर्बाह्य स्थित हैं| सूक्ष्म, अविज्ञेय हैं| प्राणी सुदूर या अत्यन्त समीप स्थित हो, वह सर्वव्यापी हैं|*

यद्यपि अविभक्त पर हैं स्थित विभक्त स्वरुप भगवन |
हैं ज्ञेय हरि सृजक पालक संहारक ब्रह्म और भूजन ||१३-१७||

भावार्थ: *यद्यपि भगवान् अविभक्त है तथापि वह विभक्त स्वरुप में स्थित है| ज्ञेय (जानने योग्य) हरि को ब्रह्म एवं प्राणियों का भर्ता, संहार कर्ता और उत्पत्ति कर्ता समझो|*

परे अज्ञान तम हैं ज्योति ज्योतियों में भगवन |
ज्ञानगम्य हेतु ज्ञेय व् ज्ञान रहते सदा सबके मन ||१३-१८||

भावार्थ: *भगवान् अज्ञान, अन्धकार से परे, ज्योतियों में ज्योति हैं| वह ज्ञेय और ज्ञान के द्वारा ज्ञानगम्य (जानने योग्य) हैं| वह सदा सभी के हृदय में स्थित हैं|*

किया संक्षेप वर्णन मैंने क्षेत्र ज्ञान ज्ञेय अर्जुन |
जानकर यह गूढ़ तत्व पा जाएं भक्त मेरा निरूपन ||१३-१९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मैंने क्षेत्र, ज्ञान और ज्ञेय का संक्षेप में वर्णन किया| यह गूढ़ तत्व जानकर भक्त मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है|*

समझो प्रकृति पुरुष दोनों अनादि तुम अर्जुन |
जानो द्वार प्रकृति करे जो सब विकार गुण उत्पन्न ||१३-२०||
कार्य और करण होते यह सब प्रकृति से उत्पन्न |
समझो हेतु पुरुष होते दुःख सुख अनुभव भूजन ||१३-२१||

भावार्थ: *हे अर्जुन, प्रकृति और पुरुष, दोनों को तुम अनादि समझो| सभी विकार और गुण के उत्पन्न होने में प्रकृति माध्यम है, यह जानो| कार्य और करण प्रकृति से ही उत्पन्न होते हैं| प्राणियों में सुख, दुःख के अनुभव में पुरुष को हेतु समझो|*

भोगे प्रकृति उत्पन्न गुण हो कर स्थित उसमें भूजन |
हेतु इन्हीं गुण हों शुभ अशुभ योनि में जन्म-मरन ||१३-२२||

भावार्थ: *प्रकृति में स्थित होकर पुरुष इस से उत्पन्न गुणों को भोगता है| इन्हीं गुण के कारण शुभ और अशुभ योनियों में जन्म-मरण होता है|*

हो भोक्ता सुख दुःख रख सम्बन्ध इस विनाशी तन |
बन जाए नर भर्ता करता हुआ इसका अनुसरन ||
पर यदि हो रहित इन गुण बन जाए तब सम भगवन ||१३-२३||

भावार्थ: *इस विनाशी शरीर से सम्बन्ध रख वह सुख ,दुःख का भोक्ता बन जाता है| उसका अनुसरण कर प्राणी भर्ता (भरण-पोषण करने वाला) बन जाता है| यदि इन गुणों से रहित हो जाए तो वह भगवान् के समान बन जाता है|*

सहित पुरुष और गुण जान सके जो प्रकृति जन |
निःसंदेह वह पाए निर्मोचन है यह सत्य अर्जुन ||
करे बर्ताव सर्वथा फिर भी न ले पुनर्जन्म कदाचन ||१३-२४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, पुरुष और गुणों के सहित प्रकृति को जो प्राणी जान लेता है वह निःसंदेह मोक्ष की प्राप्ति करता है| वह सब प्रकार का व्यवहार करता हुआ भी फिर जन्म नहीं लेता|*

करते अनुभव विविध योग से परमात्म-तत्व भक्तजन |
हो ध्यान सांख्य या कर्मयोग जिसमें रूचि साधकगन ||१३-२५||

भावार्थ: *हे अर्जुन, भिन्न भिन्न योग, ध्यानयोग, सांख्ययोग, कर्मयोग, जिसमें उनकी रूचि हो, उस योग से भक्त परमात्म-तत्व का अनुभव करते हैं|*

यदि हो न स्वयं तथ्य ज्ञान जानें द्वारा आचार्यगन |
तर जाएं भवसागर वह सुभग कर महन अनुसरन ||१३-२६||

भावार्थ: *जिन्हें स्वयं इस तथ्य का ज्ञान नहीं है वह आचार्यों के द्वारा इसे प्राप्त कर सकते हैं| वह सौभाग्यशाली महापुरुषों का अनुसरण कर भव सागर से तर जाते हैं अर्थात मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं|*

हों उत्पन्न संयोग क्षेत्र क्षेत्रज्ञ सब स्थावर जंगम जन |
है यह हरि नियम और विधि सुनो श्रेष्ठ अर्जुन ||१३-२७||

भावार्थ: *हे श्रेष्ठ अर्जुन, सुनो| स्थावर और जंगम जितने भी प्राणी हैं वह सब क्षेत्र क्षेत्रज्ञ के संयोग से ही उत्पन्न होते हैं, ऐसा विधि और भगवान का नियम है|*

देखता जो भक्त सब नश्वर भूतों में अनश्वर भगवन |
रहता स्थित समभाव सदैव करे वही जन सत दर्शन ||१३-२८||

भावार्थ: *जो भक्त समस्त नश्वर भूतों में अनश्वर परमेश्वर को देखता है और सदैव समभाव में स्थित रहता है, वही प्राणी सत (प्रभु) के दर्शन करता है|*

देखे जो जन समभाव दृष्टि से समरूप स्थित भगवन |
नहीं करता स्वयं नष्ट आत्मा पाता परम गति अर्जुन ||१३-२९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो भक्त समभाव दृष्टि से समरूप स्थित परमेश्वर को देखता है वह स्वयं के द्वारा आत्मा का नाश नहीं करता| वह परम गति को प्राप्त होता है|*

होते कर्म हेतु प्रकृति समझ सके जो यह सत्य जन |
करे कर्म युक्त भाव अकर्ता पाए वह प्रभु दर्शन ||१३-३०||

भावार्थ: *जो प्राणी ऐसा समझता है कि समस्त कर्म प्रकृति के द्वारा ही होते हैं तथा कर्म अकर्ता का भाव रख कर करता है, वही प्रभु के दर्शन पाता है|*

हो अनुभव जिस काल मनुज यद्यपि दिखते भाव भिन्न |
पर हैं स्थित यह सभी भाव केवल एक प्रकृति महन ||
समझ जाए है विस्तार हेतु प्रभु पाए वह तुरंत भगवन ||१३-३१||

भावार्थ: *जिस समय प्राणी यह अनुभव कर लेता है कि यद्यपि भाव पृथक दिखाई देते हैं परन्तु एक महान प्रकृति (परमात्मा) में स्थित हैं तथा यह जान जाता है कि यह विस्तार परमात्मा के कारण हुआ है, तब उसे तत्काल भगवद प्राप्ति हो जाती है|*

समझो है पुरुष अव्यय अनादि और निर्गुण अर्जुन |
न करे वह कर्म न हो लिप्त फल यद्यपि है युक्त तन ||१३-३२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, पुरुष अनादि, निर्गुण और अव्यय है, ऐसा समझो| यद्यपि वह शरीर से युक्त है (अर्थात् तनधारी हैं), पर वह न कर्म करता है और न फलों से लिप्त होता है|*

न हो जैसे लिप्त सर्वगत नभ कारण सूक्ष्म हे अर्जुन |
सादृश्य हो न लिप्त आत्मा यद्यपि स्थित सर्वत्र तन ||१३-३३||

भावार्थ: *जिस प्रकार सर्वगत आकाश सूक्ष्म होने के कारण लिप्त नहीं होता उसी प्रकार सर्वत्र देह में स्थित आत्मा लिप्त नहीं होती|*

करे प्रकाशित एक मृतण्ड सब जग जैसे हे अर्जुन |
करे प्रकाशित सम्पूर्ण क्षेत्र एक क्षेत्रज्ञ सलक्षन ||१३-३४||

भावार्थ: हे अर्जुन, जिस प्रकार एक सूर्य इस सम्पूर्ण लोक को प्रकाशित करता है उसी प्रकार एक क्षेत्रज्ञ सम्पूर्ण क्षेत्र को प्रकाशित करता है|

द्वारा ज्ञानचक्षु जानें भेद क्षेत्र क्षेत्रज्ञ जो जन |
हो पृथक विकार प्रकृति पाएं वह ब्रह्म पावन ||१३-३५||

ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन |
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन ||
श्री कृष्णार्जुन संवाद क्षेत्र-क्षेत्रज्ञविभागयोग नामन |
हुआ अत्र सम्पूर्ण त्रयोदस अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थ: *जो ज्ञानचक्षु के द्वारा क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के भेद को जान जाते हैं वह प्रकृति के विकारों से पृथक हो पवित्र ब्रह्म की प्राप्ति कर लेते हैं|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'क्षेत्र-क्षेत्रज्ञविभागयोग' नामक त्रयोदस अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय १४: गुणत्रयविभागयोग:

श्री भगवानुवाच
कहूँ पुनः उपम ज्ञान मध्य सभी ज्ञान बोले भगवन |
पाएं परम सिद्धि हों मुक्त जगत सुन सभी ऋषिगन ||१४-१||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'समस्त ज्ञानों में उत्तम ज्ञान को मैं पुन: कहता हूँ जिसको सुनकर सभी मुनिजन इस लोक से मुक्ति पाकर परम सिद्धि को प्राप्त होते हैं|'*

ले आश्रय यह ज्ञान पा मेरा स्वरुप पाएं निर्मोचन |
नहीं होते व्याकुल कभी प्रलय काल वह भक्तजन ||१४-२||

भावार्थ: *इस ज्ञान का आश्रय लेकर मेरे स्वरूप को प्राप्त कर पुरुष मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं एवं प्रलय काल में कभी व्याकुल नहीं होते|*

समझो है मेरी मूल प्रकृति करूँ त्रिलोक सृजन |
हूँ मैं ही हेतु करें सब लोक जीव गर्भ स्थापन ||
मेरे ही कारण होती उत्पत्ति सभी जीव हे अर्जुन ||१४-३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मेरी मूल प्रकृति त्रिलोक का सृजन करना है, ऐसा समझो| सभी लोकों में जीवों में गर्भ स्थापन का हेतु मैं ही हूँ| मेरे ही कारण समस्त भूतों की उत्पत्ति होती है|*

है माँ मूल प्रकृति हेतु तन उत्पत्ति योनि अर्जुन |
समझो मुझे जनयित्र करे जो सर्वत्र बीज स्थापन ||१४-४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, योनियों में शरीर उत्पत्ति की माँ मूल प्रकृति है| मुझे इन में बीज की स्थापना करने वाला पिता समझो|*

हुए उत्पन्न प्रकृति सत रजस तमस त्रिगुण युद्धिवन |
हेतु इन्हीं गुण अव्यय आत्मा पड़े जग व् तन बंधन ||१४-५||

भावार्थ: *हे महाबाहो, सत्त्व, रजस और तमस, प्रकृति से उत्पन्न तीन गुण हैं| इन्हीं गुण के कारण अविनाशी आत्मा संसार और देह के बंधन में पड़ जाती है|*

है सतगुण निर्मल अतः प्रकाशक निर्विकार अर्जुन |
सतगुण में सुख आसक्ति बांधे आत्मा जग तन बंधन ||१४-६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, सतगुण निर्मल होने से प्रकाशक और निर्विकार है| सतगुण में सुख आसक्ति आत्मा को संसार और शरीर में बाँध देती है|*

रजोगुण में आसक्ति करे उत्पन्न राग तृष्णा व् मन्मन् |
बांधे यह जीव कर्म आसक्ति समझो तुम कुंतीनंदन ||१४-७||

भावार्थ: *हे कुन्तीनन्दन, रजोगुण में आसक्ति ममता, तृष्णा और इच्छा उत्पन्न करती है| वह आत्मा को कर्मों की आसक्ति से बाँध देती है, ऐसा समझो|*

हो उत्पन्न अज्ञान से मोहक तमोगुण समझो अर्जुन |
प्रमाद आलस्य निद्रा से बांधे यह जीव भव बंधन || १४-८||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मोहक तमोगुण अज्ञान से उत्पन्न होता है| यह प्रमाद, आलस्य और निद्रा के द्वारा जीव को भव बंधन में बांधता है|*

करे आसक्त सतगुण सुख में रजोगुण कर्म अर्जुन |
ढक ज्ञान तमोगुण बनाए प्रमाद युक्त जन जीवन ||१४-९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, सतगुण सुख में और रजोगुण कर्म में आसक्त कर देता है| तमोगुण ज्ञान को ढककर प्राणी का जीवन प्रमाद से युक्त कर देता है|*

बढ़े सतगुण जब हो अवरुद्ध रजस और तमस गुन |
हो वृद्धि तमस गुन जब अवरुद्ध सत व् रजस गुन ||
बढ़े रजस गुण हो अवरुद्ध जब तमस और सतगुन ||१४-१०||

भावार्थः *रजोगुण और तमोगुण को अभिभूत (दबाने से) करने से सतगुण की वृद्धि होती है। रजोगुण और सतगुण को दबाने से तमोगुण की वृद्धि होती है। तमोगुण और सतगुण को अभिभूत (दबाने से) करने से रजोगुण की वृद्धि होती है।*

हो जब उत्पन्न प्रकाश रूप विवेक बुद्धि द्वार तन |
समझो हुआ प्रवृद्ध सतगुण जो देता तत्व-भगवन ||१४-११||

भावार्थः *जब शरीर के द्वार (अर्थात् इन्द्रियों) से विवेक बुद्धि रूप प्रकाश उत्पन्न होता है तब सतगुण को प्रवृद्ध हुआ समझो जो भगवद-तत्व देता है।*

बढ़े जब लोभ प्रवृत्ति जग-कर्म अशांति स्पृहा जन |
समझो हुए प्रवृद्ध रजोगुण लक्षण उनमें अर्जुन ||१४-१२||

भावार्थः *हे अर्जुन, जब प्राणी में लोभ, प्रवृत्ति (सामान्य चेष्टा,) सांसारिक कर्म, अशांति तथा स्पृहा बढ़ें तब उनमें रजोगुण के लक्षणों का प्रवृद्ध होना समझो।*

होता जब प्रवृद्ध तमोगुण समझो हे कुरुनन्दन |
होते उत्पन्न अप्रकाश अप्रवृत्ति प्रमाद संयोजन ||१४-१३||

भावार्थः *हे कुरुनन्दन, तमोगुण के प्रवृद्ध होने पर अप्रकाश, अप्रवृत्ति, प्रमाद और मोह, इनका उत्पन्न होना समझो।*

होता मरण जब है मनुज प्रवृद्ध सतगुण हे अर्जुन |
पाए स्थान निर्मल लोक समान उत्तम बोधिजन ||१४-१४||

भावार्थः *हे अर्जुन, जब मनुष्य सतगुण में प्रवृद्ध हुआ मृत्यु को प्राप्त होता है तब वह उत्तम ज्ञानियों के सामान निर्मल अर्थात् स्वर्गादि लोकों की प्राप्ति करता है।*

लेता जन्म नर योनि हो जब मनुज रजोगुण सम्पन्न |
पाए जन्म मूढ़ योनि करे जब तमोगुण कर्म जन ||१४-१५||

भावार्थ: *रजोगुण के प्रवृद्ध होने पर मनुष्य योनि में प्राणी जन्म लेता है| जो तमोगुण का कर्म करता है वह प्राणी मूढ़योनि में जन्म लेता है|*

देता फल शुभ कर्म सदैव सात्विक पावन हे अर्जुन |
रजोगुण देता दुःख और तमोगुण अज्ञान अबोधन ||१४-१६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, शुभ कर्म का फल सदैव सात्विक और निर्मल, रजोगुण का दुःख और तमोगुण का अज्ञान एवं मूढ़ता होता है|*

होता उत्पन्न ज्ञान सतगुण से समझो यह तुम अर्जुन |
देता रजोगुण लोभ व् तमोगुण प्रमाद मोह अबोधन ||१४-१७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, सतगुण से ज्ञान उत्पन्न होता है, यह समझो| रजोगुण लोभ तथा तमोगुण प्रमाद, मोह और अज्ञान देता है|*

स्थित सतगुण नर जाएं अवश्य उच्च लोक पश्चात मरन |
राजस भूलोक एवं पाएं अधोगति तामस वृत्ति जन ||१४-१८||

भावार्थ: *सतगुण में स्थित पुरुष मरण पश्चात उच्च लोकों को अवश्य जाते हैं| राजस पुरुष मनुष्य लोक में एवं तमोगुण वृत्ति के प्राणी अधोगति को प्राप्त होते हैं|*

जाने जो है कर्ता त्रिगुण व् हरि तत्व परे त्रिगुन |
पा जाए वह जन परम गति तत्काल हे पृथानंदन || १४-१९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जब प्राणी तीनों गुणों को ही कर्ता (अर्थात तीन गुणों के अतिरिक्त अन्य किसी को कर्ता नहीं माने) और तीनों गुणों से परे ईश्वर-तत्व को समझ जाता है तब वह परम गति को प्राप्त होता है (अर्थात प्रभु लोक में निवास पाता है)|*

जाने जो जन विवेक से त्रिगुण ही हेतु तन सृजन |
पाए वह निर्वाण हो मुक्त दुःख बृद्धायु जन्म-मरन ||१४-२०||

भावार्थ: *जो विवेक से यह जान जाता है कि शरीर की उत्पत्ति तीनों गुणों से ही हुई है वह जन्म, मृत्यु, वृद्ध अवस्था के दुःखों से मुक्त हो निर्वाण को प्राप्त होता है|*

अर्जुन उवाच

कहो लक्षण प्रभु नर जो अतीत त्रिगुण पूछे अर्जुन |
हुए कैसे वह अतीत इन गुण और करें कैसे आचरन ||१४-२१||

भावार्थ: *अर्जुन ने पूछा, 'हे प्रभु, तीन गुणों से अतीत प्राणी के लक्षण कहिए| वह किस प्रकार इन गुणों से अतीत होते हैं और कैसे आचरण करते हैं?'*

श्री भगवानुवाच

हुए जो प्रवृत्त प्रकाश प्रवृत्ति मोह हे अर्जुन |
न करते हुए द्वेष हो जाएं निवृत्त सभी मन्मन् ||
समझो हुए वह साधक अतीत त्रिगुण बोले भगवन ||१४-२२||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'हे अर्जुन, जो प्रकाश, प्रवृत्ति और मोह के प्रवृत्त होने पर द्वेष नहीं करते हुए सभी इच्छाओं से निवृत्त हो गए हैं उन्हें तुम त्रिगुण से अतीत हुआ समझो|*

जो आसीन सम उदासीन न हो विचलित त्रिगुण जन |
समझे है गुण ही कर्ता हो न विचलित स्थिति कठिन ||१४-२३||

भावार्थ: *जो प्राणी उदासीन के समान आसीन होकर तीन गुण से विचलित नहीं होता, 'गुण ही कर्ता है', ऐसा समझ कर कठिन स्थित से विचलित नहीं होता|*

हो सम सुख दुःख रहे स्थित स्व-स्वरुप जो धीर जन |
समझे जम्ब शिला स्वर्ण सम और प्रिय अप्रिय सलक्षन ||१४-२४||
रहे सम मान अपमान और उदासीन मध्य मित्र द्विषन् |
ऐसा परित्यागी सर्वारम्भ नर समझो गुणातीत महन ||१४-२५||

भावार्थ: *जो धीर प्राणी सुख, दुःख में समान रहता हुआ अपने स्वरुप में स्थित रहता है, मिट्टी, पत्थर और स्वर्ण में समदृष्टि रखता है, प्रिय और अप्रिय को सम दृष्टि से*

देखता है, मान और अपमान में सम रहता है, शत्रु और मित्र के मध्य उदासीन रहता है (अर्थात किसी एक का पक्ष नहीं लेता), ऐसे सर्वारम्भ परित्यागी पुरुष को महान गुणातीत समझो|

करे जो सदाचारी साधक भक्तियोग से मेरा सेवन |
हो अतीत त्रिगुण पा सके वह भक्त धाम भगवन ||१४-२६||

भावार्थ: *जो सदाचार का अनुसरण करने वाला साधक भक्तियोग से मेरा सेवन करता है (अर्थात मेरी उपासना करता है), वह भक्त तीनों गुणों से अतीत होकर भगवद धाम की प्राप्ति कर लेता है (अर्थात मोक्ष प्राप्त कर लेता है)|*

हूँ मैं ब्रह्म अविनाशी आश्रय परम सुख पावन |
समझो मुझे शाश्वत धर्म एकांतिक अमर हे अर्जुन ||१४-२७||

ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद गुणत्रयविभागयोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण चतुर्दस अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मैं ब्रह्म, अविनाशी, पवित्र, परम सुख का आश्रय हूँ| मुझे शाश्वत धर्म, ऐकान्तिक (अर्थात् पारमार्थिक सुख की प्रतिष्ठा) एवं अमर समझो|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'गुणत्रयविभागयोग' नामक चतुर्दस अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय १५: पुरुषोत्तमयोग:

श्री भगवानुवाच
मूल नभ व् शाखा निम्न है तरु अश्वत्थ रूप-भुवन |
है यह जग-वृक्ष अव्यय और हैं वेद इसके छादन ||
जो जाने यह सत्य है ज्ञाता सब वेद बोले भगवन ||१५-१||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'आकाश (ऊपर) की ओर मूल एवं नीचे की ओर शाखा वाला संसार-रूपी अश्वत्थ वृक्ष है| यह जग-वृक्ष अविनाशी है एवं इसके पत्ते वेद हैं| जो यह सत्य जानता है वही सम्पूर्ण वेदों का ज्ञाता है|*

हुईं प्रवृद्ध त्रिगुण सत रजस तमस भुज तरु-भुवन |
फैली हुईं नभ भू हैं पञ्च विषय इनके अंकुर नूतन ||
फैली अन्य मूल निम्न करें वह अनुसरण कर्म भुवन ||१५-२||

भावार्थ: *संसार-वृक्ष की शाखाएं त्रिगुण, सत, रजस और तमस, से प्रवृद्ध हुईं भूमि (नीचे) और नभ (ऊपर) पर फैली हुईं हैं| पञ्च विषय इनके नूतन अंकुर हैं| पृथ्वी में कर्मों का अनुसरण करती हुई अन्य जड़ें नीचे फैली हुईं हैं|*

जैसा रुप इस संसार-वृक्ष का करते हो निरूपन |
नहीं मिलता वैसा यदि करो विचार तुम अर्जुन ||
है नहीं इसका आदि अंत नहीं इसका कोई स्थापन |
काटो इस अश्वथ वृक्ष को शस्त्र निश्चित असलंग्न ||१५-३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, तुम यदि विचार करो तो इस संसार-वृक्ष का स्वरूप जैसा देखने में आता है वैसा मिलता नहीं है| इसका न आदि है, न अंत और न प्रतिष्ठा| इस अश्वत्थ वृक्ष को दृढ़ असंलग्न शस्त्र से काटो|*

करो खोज उस सत्य को पा जाओ जिससे निर्मोचन |
करो अनुभव आया शरण मैं आदि हरि कर्ता सृजन ||१५-४||

भावार्थ: *उस सत्य की खोज करो जिससे मोक्ष मिले| ऐसा अनुभव करो कि मैं सृजन कर्ता आदि परमात्मा की शरण में हूँ|*

रहित मान मोह आसक्ति जीत सकें जो दोष अर्जुन |
सम विदुर हो रहित कामना द्वंद्व सुख दुःख भूजन ||
करें ध्यान नित्य अचल हरि पाएं वह अव्यय भगवन ||१५-५||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिन पुरुषों ने मान, मोह, आसक्ति से रहित होकर दोषों पर विजय प्राप्त कर ली है, जो (महात्मा) विदुर के समान इच्छा, सुख, दुःख, द्वंद्व से रहित हैं, जो नित्य निरन्तर प्रभु का ध्यान करते हैं, उन्हें अविनाशी भगवान् की प्राप्ति हो जाती है|*

न कर सकें प्रकाशित सोम रवि अग्नि परम पद भगवन |
पाए जो मेरा परम धाम हो मुक्त वह जन्म-मरण बंधन ||१५-६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, भगवान् के परम पद को सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि प्रकाशित नहीं कर सकते| मेरे (भगवान् के) परम धाम को जो पा जाता है वह जन्म-मरण के बंधन से मुक्त हो जाता है (अर्थात मनुष्य योनि का लक्ष्य मोक्ष पा जाता है)|*

यद्यपि है जीव जग में मेरा सनातन अंश अर्जुन |
पर स्थित प्रकृति करे आकर्षित पंचेन्द्रिय व् मन ||१५-७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, यद्यपि जीव जग में मेरा ही सनातन अंश है परन्तु प्रकृति में स्थित हुआ वह पाँचो इन्द्रियों तथा मन को आकर्षित करता है|*

जैसे जाती गंध स्थान एक से अन्यत संग वेग पवन |
सादृश्य मरण पर ले जाए आत्मा मन को नए तन ||१५-८||

भावार्थ: *जिस प्रकार वायु के वेग से गंध एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाती है उसी प्रकार आत्मा मरण पर मन को नए तन में ले जाती है|*

ले आश्रय मन आत्मा करती है सेवन श्रवण नयन |
त्वचा रसना घ्राण समस्त विषय इन्द्रिय हे अर्जुन ||१५-९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, यह आत्मा मन का आश्रय लेकर श्रोत्र, चक्षु, स्पर्श, रसना और घ्राण, समस्त विषय इन्द्रिय आदि का सेवन करती है|*

नहीं जानते मूढ़ महत्व गुणवत्त देह्य का काल मरन |
या भोग रहे इंद्रिय विषयसुख पा कर भू नया तन ||
समझ सकें इसे केवल वह जन जो युक्त ज्ञान नयन ||१५-१०||

भावार्थ: *मरण समय अथवा पृथ्वी पर नए शरीर में इंद्रिय सुख में लिप्त मूढ़ (पुरुष) गुणवान आत्मा को नहीं समझते| इसे केवल ज्ञान चक्षु युक्त प्राणी ही समझ सकते हैं|*

करते अनुभव साधक योगी परमात्म-तत्व हे अर्जुन |
न समझ सकें अविवेकी नर जिनका अशुद्ध अंतःकरन ||१५-११||

भावार्थ: *हे अर्जुन, साधक योगी परमात्म-तत्व का अनुभव करते हैं| अशुद्ध अन्तःकरण एवं अविवेकी जन इसे नहीं समझ सकते|*

तेज रवि जो कर रहा प्रकाशित समस्त जग हे अर्जुन |
सहित इसके सोम अनल तेज भी हैं मुझ से ही उत्पन्न ||१५-१२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, सूर्य का तेज जो सम्पूर्ण जगत् को प्रकाशित कर रहा है, इसके सहित चन्द्रमा एवं अग्नि का तेज भी मुझ से ही उत्पन्न है|*

कर प्रवेश भू मैं अपने ओज से करूँ धारण भूजन |
बन रस स्वरुप सोम करता हूँ मैं ही औषध उत्पन्न ||१५-१३||

भावार्थ: *मैं ही पृथ्वी में प्रवेश करके अपने ओज से प्राणियों को धारण करता हूँ| मैं ही रस स्वरूप चन्द्रमा बनकर समस्त औषधियों को उत्पन्न करता हूँ|*

हूँ मैं अपान जठराग्नि पचाए जो चार तंत्र अन्न |
समझो मुझे ही प्राण जो है स्थित तन सब भूजन ||१५-१४||

भावार्थ: *मैं अपान जठराग्नि हूँ जो चार प्रकार के अन्न को पचाती है| मुझे ही प्राणियों के शरीर में स्थित प्राण समझो|*

देता मैं स्मृति ज्ञान अपोहन हो स्थित हिय सब जन |
समझो मुझे ही ज्ञेय व् ज्ञाता वेद वेदांत अर्जुन ||१५-१५||

भावार्थ: *मैं समस्त प्राणियों के हृदय में स्थित हो स्मृति, ज्ञान और अपोहन (संशय, भ्रम, विपरीत भाव, तर्क, वितर्क आदि दोषों का दूर होना) देता हूँ | मैं ही ज्ञेय (जानने योग्य) हूँ तथा वेद और वेदान्त के तत्व का ज्ञाता हूँ|*

हैं दो पुरुष क्षर अक्षर इस जग जान लो तुम अर्जुन |
समझो है आत्मा अक्षर तुम और हैं क्षर सब भूजन ||१५-१६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, इस जगत में क्षर (नश्वर) और अक्षर (अनश्वर) यह दो पुरुष हैं यह जान लो| समस्त भूत क्षर हैं और आत्मा अक्षर है, यह तुम समझ लो|*

विलक्षण व्यक्तित्व को कहें पुरुषोत्तम प्रथानंदन |
कर प्रवेश त्रिलोक करें सब को धारण अव्यय भगवन ||१५-१७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, विलक्षण व्यक्तित्व को पुरुषोत्तम कहते हैं| अव्यय ईश्वर त्रिलोक में प्रवेश कर सब को धारण करता है|*

हूँ मैं अतीत क्षर से और उत्तम अक्षर से हे अर्जुन |
हूँ प्रज्ञात पुरुषोत्तम चारों वेद और त्रिभुवन ||१५-१८||

भावार्थ: *हे अर्जुन, मुझे क्षर से अतीत और अक्षर से उत्तम समझो| मैं त्रिलोक और चारों वेद में पुरुषोत्तम (नाम से) प्रसिद्ध हूँ|*

जान सके हो रहित मोह मुझे पुरुषोत्तम जो जन |
हो कर सर्वज्ञ वह करे सम्पूर्ण भाव मेरा भजन ||१५-१९||

भावार्थ: *जो पुरुष मोह रहित होकर मुझ पुरुषोत्तम को जान जाता है वह सर्वज्ञ होकर सम्पूर्ण भाव से (अर्थात् पूर्ण हृदय से) मेरा भजन (मेरी भक्ति) करता है|*

किया मैंने वर्णन गुह्यतम ज्ञान हे निष्पाप अर्जुन |
हो जाते प्रमत और कृतकृत्य जान यह भक्तगन ||१५-२०||

ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद पुरुषोत्तमयोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण पञ्चदस अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थ: *हे निष्पाप अर्जुन, गुह्यतम ज्ञान का मैंने वर्णन किया| इस (ज्ञान) को जानकर भक्तगण बुद्धिमान और कृतकृत्य हो जाते हैं|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'पुरुषोत्तमयोग' नामक पञ्चदस अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय १६: दैवासुरसम्पद्विभागयोग:

श्री भगवानुवाच
पाएं जो दैवीय सम्पदा कहें उनके लक्षण अब भगवन |
जो निडर दानी ज्ञानयोगी कर सकें इन्द्रिय दमन ||
स्वाध्यायी तपी यज्ञ-कर्ता स्वभाव जिनका निरंजन ||१६-१||

भावार्थ: *अब भगवान् उन प्राणी के लक्षण बता रहे हैं जो दैवीय सम्पदा पाते हैं| जो प्राणी निडर, ज्ञानयोगी, दानी, इन्द्रियों का दमन कर सकने वाले, स्वाध्यायी, तपी, यज्ञ-कर्ता, सहज स्वभाव वाले हों|*

अहिंसा अक्रोध त्याग शान्ति दया अनिन्द सत्य-भाषन |
रहित-विषय स्वभाव सहज जिनका कोमल अन्तःकरन ||
करे नहीं अकर्तव्य कर्म हैं यह गुण दैवीय जन ||१६-२||

भावार्थ: *अहिंसा, क्रोध का अभाव, त्याग, शान्ति, दया, सत्य भाषण, अनिन्द (किसी की निन्दा न करना), विषय-रहित, सरल स्वभाव, अंतःकरण की कोमलता, अकर्तव्य कर्म न करना, यह गुण दैवीय प्राणियों के हैं|*

तेज क्षमा धैर्य अवैर भावना हृदय जिन भूजन |
हैं रहित मान अपमान और तन जिनका पावन ||
हैं वह दैवीय सम्पदा युक्त जन हे पृथानंदन ||१६-३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिन प्राणियों के हृदय में तेज, क्षमा, धैर्य, शरीर की शुद्धि, किसी में शत्रु भाव का अभाव, मान-अपमान से रहित, यह भावना हैं, वह दैवीय सम्पदा युक्त हैं|*

दम्भ अहंकार अभिमान क्रोध असभ्यता और अवेदन |
जिनमें यह दुर्गुण वह आसुरी सम्पदा युक्त जन ||१६-४||

भावार्थ: *दम्भ, घमण्ड, अभिमान, क्रोध, असभ्यता और अज्ञान, यह दुर्गुण आसुरी सम्पदा से युक्त प्राणी में होते हैं|*

देती दैवीय सम्पत्ति मोक्ष और आसुरी जग बंधन |
तुम पूर्ण दैवीय सम्पत्ति नहीं करो शोक अर्जुन ||१६-५||

भावार्थ: *दैवीय सम्पत्ति मुक्ति और आसुरी संसार बंधन देती है| अर्जुन, शोक मत करो क्योंकि तुम में दैवीय सम्पत्ति समाहित है|*

रहते दोनों दैवीय और आसुरी गुण सब भूजन |
बताया मैंने अभी विषय दैवीय सम्पदा हे अर्जुन ||
सुनो अब ध्यानपूर्वक आसुरी सम्पदा के लक्षन ||१६-६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, सभी प्राणियों में दैवीय और आसुरी गुण रहते है| अभी मैंने दैवीय सम्पत्ति के विषय में बताया| अब आसुरी सम्पत्ति के लक्षण ध्यानपूर्वक सुनो|*

नहीं जानते शुभ अशुभ आसुरी सम्पत्ति युक्त जन |
न उनमें शुद्धि न श्रेष्ठ आचरण और न सत्य भाषन ||१६-७||

भावार्थ: *आसुरी सम्पत्ति से युक्त मनुष्य शुभ,अशुभ नहीं जानते (इस कारण किस कार्य से निवृत हुआ जाए और किस कार्य में प्रवृत्त हुआ जाए, नहीं जानते)| वह शुद्ध, श्रेष्ठ आचरण वाले और सत्य भाषण वाले नहीं होते|*

कहते जग असत्य आश्रय-रहित बिन ईश्वर यह जन |
हो उत्पन्न जग संयोग नर नारि हेतु काम न अन्य कारन ||१६-८||

भावार्थ: *वह (आसुरी सम्पत्ति वाले) मनुष्य कहते हैं कि जगत आश्रय-रहित, असत्य और बिना ईश्वर वाला है| स्त्री-पुरुष के संयोग से संसार उत्पन्न हुआ है| काम (भावना) ही इसका हेतु है (कोई) अन्य कारण नहीं|*

हैं वह मंद बुद्धि नास्तिक करें असत्य ज्ञान अवलम्बन |
करते अपकार हैं रिपु लक्ष्य उनका विनाश भुवन ||१६-९||

भावार्थ: *असत्य ज्ञान का अवलम्बन करने वाले वह मंद बुद्धि एवं नास्तिक हैं| वह अपकार (बुरा) करते हैं, शत्रु हैं तथा उनका लक्ष्य जगत के नाश का है|*

ले मन अपूर्ण कामना हैं युक्त दम्भ दर्प मद यह जन |
हेतु मोह दुर्दान्त रख अशुद्ध भाव करें भू अटन ||१६-१०||

भावार्थ: *हृदय में अपूर्ण कामना लिए वह दम्भ, अहंकार एवं मद से युक्त मनुष्य हैं| मोह के कारण दुराग्रही, अशुद्ध भावना से वह पृथ्वी पर विचरते हैं|*

कर संग्रह विषय भोगते चिंतित रहें पर्यन्त मरन |
जो कुछ है सुख बस यही मानते ऐसा दुर्भग जन ||१६-११||

भावार्थ: *विषय (पदार्थों) का संग्रह कर उनको भोगते हुए मृत्यु पर्यन्त चिंतित रहते हैं| जो कुछ सुख है, यही है, वह अभागे यही मानते हैं|*

बंधे आशा शत पासे हो कर काम क्रोध परायन |
करें अनीति से लोकायत विषय हेतु संचय धन ||१६-१२||

भावार्थ: *आशा के सैंकड़ों पासों में बँधे काम, क्रोध के परायण होकर सांसारिक भोगों के लिए अन्यायपूर्वक धन का संग्रह करते हैं|*

किया प्राप्त आज मैंने यह करूँ सफल अपने मन्मन् |
यद्यपि हूँ संपन्न धन होगा अधिक करूँ और यत्न ||१६-१३||

भावार्थ: *(वह ऐसा सोचते हैं) मैंने आज यह प्राप्त कर लिया है जिससे मैं अपने मनोरथ को सफल करूँ| मेरे पास इतना धन है और अधिक होगा, मैं अथक प्रयास करूँ|*

किया वध मैंने कुछ रिपु करूँ वध झट शेष द्विषन् |
हूँ मैं सर्व समर्थ सिद्ध सुखी भोगी बली महन ||१६-१४||

भावार्थ: *कुछ शत्रुओं को तो मैंने मार दिया, शेष शत्रुओं को शीघ्र ही मार दूँगा| मैं सर्व समर्थ (ईश्वर), सिद्ध, सुखी, ऐश्वर्य को भोगने वाला एवं महान बली हूँ|*

हूँ धनी वृहद कुटुम्बी नहीं कोई सम मुझ भुवन |
करूँ यज्ञ दूँ दान हूँ सुखी रहें ऐसे मोहित यह जन ||१६-१५||

भावार्थ: *मैं धनी और बड़े कुटुम्ब वाला हूँ| मेरे समान इस जगत में कोई और नहीं है| मैं यज्ञ करूँगा, दान दूँगा और सुखी रहूँगा| ऐसे यह प्राणी मोहित रहते हैं|*

भ्रमित चित्त हेतु कामना फंसते वह मोह जाल बंधन |
हो आसक्त विषय भोग गिरते भयंकर नर्क वह जन ||१६-१६||

भावार्थ: *कामनाओं के कारण भ्रमित चित्त हो वह मोह जाल बंधन में फँस जाते हैं| विषय भोगों में आसक्त होकर वह प्राणी महान भयंकर नर्क में गिर जाते हैं|*

मान अति पूज्य स्वयं होते गर्वित चूर मान मद धन |
हो युक्त अधर्म और दम्भ करते वह असत यज्ञ यजन ||१६-१७||

भावार्थ: *वह अपने को अति पूज्य मानकर, अहंकार, धन और मान के मद में चूर, अधर्म और दम्भ से युक्त दिखावे के लिए वह यज्ञ यजन करते हैं|*

युक्त गल्भ बल दर्प काम क्रोध करते वह द्वेष भगवन |
रखते दोष-दृष्टि मेरे सद्गुण यह आसुरी अभग जन ||१६-१८||

भावार्थ: *अहंकार, बल, घमण्ड, काम और क्रोध से युक्त यह भगवान् से भी द्वेष करते हैं| मेरे (भगवान्) सदगुणों में दोष दृष्टि रखने वाले यह अभग आसुरी प्राणी हैं|*

होते क्रूर ईर्षालु अति नीच मलिन यह भूजन |
गिराता रहूँ मैं आसुरी योनि इन अधर्मी जन ||१६-१९||

भावार्थ: *यह प्राणी क्रूर, ईर्षालु, अत्यंत नीच एवं अपवित्र होते हैं| इन नराधमों को मैं आसुरी योनियों में गिराता रहता हूँ|*

कर सकें न प्राप्त कभी मुझे यह मूढ़ हे कुन्तीनन्दन |
लेते रहें जन्म जन्मांतर अधम आसुरी गति यह जन ||१६-२०||

भावार्थ: *हे कुन्तीनन्दन, यह मूढ़ मुझ (परमात्म-तत्व) को कभी प्राप्त नहीं कर सकते| यह प्राणी जन्म-जन्मांतर में अधम आसुरी गति में जन्म लेते रहते हैं|*

काम क्रोध लोभ   त्रिदोष हैं द्वार नर्क अर्जुन |
करो त्याग तुम यह दोष जो करें आत्मा का पतन ||१६-२१||

भावार्थ: *हे अर्जुन, काम, क्रोध तथा लोभ, यह तीन दोष (अवगुण) नर्क के द्वार हैं| इन अवगुणों का तुम त्याग करो जो आत्मा का नाश करने वाले हैं|*

हो मुक्त इन तीन नर्क द्वार करो श्रेष्ठ आचरन |
पा सकोगे परम गति सुनो तुम हे कुन्तीनन्दन ||१६-२२||

भावार्थ: *हे अर्जुन सुनो, इन तीन नर्क के द्वार से मुक्त होकर श्रेष्ठ आचरण करो| तुम परम गति (परमात्म-तत्व) को प्राप्त कर सकोगे|*

कर त्याग शास्त्र   विधि   करे जो मनमाना आचरन |
न कर सके प्राप्त सिद्धि सुख परम गति वह अधम जन ||१६-२३||

भावार्थ: *जो शास्त्र विधि को त्यागकर मनमाना आचरण करता है वह अधम प्राणी सिद्धि, परम गति, सुख को प्राप्त नहीं कर सकता|*

है प्रमाणिक शास्त्र में कर्म अकर्म विधि अर्जुन |
जान यह तथ्य करो सदा शास्त्र विधि कर्म भुवन ||१६-२४||

ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद दैवासुरसंपद्विभागयोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण षोडस अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थ: *हे अर्जुन, कर्तव्य और अकर्तव्य की विधि शास्त्र में प्रमाणिक है| यह सत्य जानकर लोक में सदा शास्त्र विधि कर्म करो|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में 'दैवासुरसंपद्विभागयोग' नामक षोडस अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय १७: श्रद्धात्रयविभागयोग:

अर्जुन उवाच
त्याग शास्त्र विधि करें जो श्रद्धा युक्त देव देवी पूजन |
हो उनकी कौन गति सत रजस या तमस पूछे अर्जुन ||१७-१||

भावार्थ: *अर्जुन ने पूछा, 'शास्त्र विधि त्याग श्रद्धा युक्त जो देवता और देवियों का पूजन करते हैं, उनकी स्थिति कैसी होती है, सत, रजस अथवा तमस?'*

श्री भगवानुवाच
हुई श्रद्धा जो उत्पन्न स्वभाववश बोले श्री भगवन |
देती त्रिप्रकार फल सत रजस तमस सुनो अर्जुन ||१७-२||

भावार्थ: *श्री भगवान बोले, 'स्वभाववश उत्पन्न हुई श्रद्धा, तीन प्रकार, सत, रजस और तमस, के फल देती है, अर्जुन सुनो|'*

होती श्रद्धा अनुरूप अंतःकरण सभी जन अर्जुन |
हो जैसी जिसकी श्रद्धा हो उसका वैसा निरूपन ||१७-३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, सभी मनुष्यों की श्रद्धा उनके अन्तःकरण के अनुरूप होती है| जिसकी जैसी श्रद्धा होती है उसका वही स्वरुप होता है (अर्थात वही उसकी स्थिति होती है)|*

करते सत जन देव देवी और रजस यक्ष असुर पूजन |
तमस भाव मनुज करते केवल भूत प्रेत उपासन ||१७-४||

भावार्थ: *सात्त्विक पुरुष देवता और देवियों का, रजस पुरुष यक्ष और राक्षसों का तथा तमस भाव के प्राणी केवल प्रेत और भूतगणों का पूजन करते हैं|*

युक्त अहम् दम्भ करें जो रहित शास्त्र विधि तप गहन |
है आसक्ति भोग अभिमान बल जिनके अंतःकरन ||१७-५||

दे कष्ट तन स्थित पंचभूत और आत्मा करते मनन |
हैं वह आसुरी प्रकृति मूढ़ मनुष मानुषी जन ||१७-६||

भावार्थ: *जो मनुष्य दम्भ और अहंकार से युक्त शास्त्र विधि से रहित घोर तप करते हैं, जिन प्राणियों के अंतःकरण में भोग आसक्ति और बल का अभिमान है, जो शरीर में स्थित पंचभूत एवं आत्मा को कष्ट देकर साधना करते हैं, वह अज्ञानी नर, नारी आसुर-स्वभाव वाले हैं|*

होता प्रिय भोजन त्रिप्रकार स्व-प्रकृति पृथक जन |
साहश्य हैं दान यज्ञ तप भी त्रिप्रकार सुन भेद अर्जुन ||१७-७||

भावार्थ: *तीन प्रकार का भोजन पृथक प्राणियों को अपने स्वभाव से प्रिय होता है| वैसे ही यज्ञ, तप और दान भी तीन प्रकार के होते हैं, यह भेद अब सुनो|*

बढ़ाए सत् भोज आयु स्वास्थ्य बल सुख प्रेम वयुन |
यह रस युक्त तैलीय भोजन देता शक्ति हृदय जन ||१७-८||

भावार्थ: *सात्विक भोजन आयु, बुद्धि, बल, स्वास्थ्य, सुख और प्रीति को बढ़ाता है| यह रस युक्त तैलीय भोजन प्राणियों के हृदय को शक्ति देता है|*

अति तिक्त खट्टा नमकीन गरम तीखा रूखा दाहन |
दे दुःख शोक रोग है अति प्रिय आहार राजस जन ||१७-९||

भावार्थ: *अति कड़वा, अति खट्टा, अति नमकीन, अति गरम, अति तीखा, रूखा, दाह वाला आहार जो दुःख, शोक तथा रोग देता है, वह राजसी प्राणियों का प्रिय आहार है|*

अधपका रसहीन गंधित बासी उच्छिष्ट अशुद्ध भोजन |
युक्त मांसादि अनाद्य आहार समझो प्रिय तामस जन ||१७-१०||

भावार्थ: *अधपका, रस रहित, गंधित, बासी, उच्छिष्ट एवं अशुद्ध भोजन जो मांसादि से बना है और खाने योग्य नहीं है, वह तामस प्राणियों का प्रिय समझो|*

करें सदा यज्ञ शास्त्र विधि है यह कर्म परम सत जन |
हो यज्ञ सत हेतु जनहित रहित-फल तृप्त करे वह मन ||१७-११||

भावार्थ: *शास्त्र विधि से यज्ञ करना सत्पुरुषों का परम कर्तव्य है| यज्ञ सात्विक, लोकहित के लिए और फल-रहित हो| यह मन को संतुष्ट करता है|*

हेतु दंभाचरण युक्त फलेच्छा किए यदि यज्ञ अर्जुन |
समझो वह यज्ञ राजस है विरुद्ध शास्त्र और मलिन ||१७-१२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, यदि दम्भाचरण युक्त एवं फल की इच्छा लिए हुए यज्ञ किया जाता है तो उस यज्ञ को शास्त्र के विरुद्ध, अशुद्ध और राजस समझो|*

हीन शास्त्र विधि बिन अन्नदान मंत्र और वित्तदन |
हो बिन श्रद्धा जो यज्ञ समझो उसे तामस हे अर्जुन ||१७-१३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, शास्त्र विधि से हीन, बिना अन्नदान, मंत्र, दक्षिणा और श्रद्धा से किए जाने वाले यज्ञ को तामस समझो|*

शुद्ध सहज अहिंसक ब्रह्मचारी करें जब देव पूजन |
हो आदर ब्राह्मण गुरु ज्ञानी वह तप विषयक तन ||१७-१४||

भावार्थ: *पवित्र, सरल, अहिंसक और ब्रह्मचारी जब देवों का पूजन करते हैं, ब्राह्मण, गुरु और ज्ञानियों का आदर होता है, इसे शरीर सम्बन्धी तप कहा जाता है|*

जो यज्ञ सत प्रिय युक्त यथार्थ भाषण करे न उद्वेग मन |
हो जहां नाम हरि जपन और वेद शास्त्र पठन-पाठन ||
हेतु लोकहित समझो उस यज्ञ को वाणी तप अर्जुन ||१७-१५||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो यज्ञ सत्य, प्रिय, यथार्थ भाषण से युक्त, मन को उद्वेग न करने वाला, वेद और शास्त्रों के पठन-पाठन एवं परमेश्वर के नाम जपन के साथ लोक हित के उद्देश्य से किया जाता है, उसे 'वाणी तप' समझो|*

हो मन प्रसन्न शांत पावन मौनी व् भाव हरि चिंतन |
हो स्थिर चित्त करे यज्ञ कहें इसे तब तप विषयक मन ||१७-१६||

भावार्थ: *मन प्रसन्न, शांत, पवित्र, मौनी हो, भगवद् चिन्तन करने का भाव हो, चित्त स्थिर हो, इसे 'मन सम्बन्धी तप' कहते हैं|*

युक्त श्रद्धा रहित-फलेच्छा कर अर्पित वचन तन मन |
किया जाए जो यज्ञ कहते उसे सात्विक तप अर्जुन ||१७-१७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, श्रद्धायुक्त एवं फल की इच्छा से रहित जो वाणी, शरीर और मन से को अर्पित कर यज्ञ किया जाता है, उसे सात्त्विक कहते हैं|*

किया यज्ञ यदि हेतु स्वार्थवश हों पूर्ण मन्मन |
हो हिय भाव पाखण्ड यह राजस तप दे फल क्षणिन् ||१७-१८||

भावार्थ: *यदि स्वार्थ के लिए हृदय में पाखण्ड भाव से इच्छाओं की पूर्ति के लिए यज्ञ किया गया है, तो यह राजस तप है जो क्षणिक फल देता है|*

करे जो तप युक्त-हठ वश मूढ़ दे कष्ट वचन तन मन |
हेतु जिसका अनिष्ट अन्य है वह तामस तप हे अर्जुन ||१७-१९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो तप मूढ़ता पूर्वक हठ से, मन, वाणी और शरीर की पीड़ा देकर, दूसरे का अनिष्ट करने के लिए किया जाता है, वह तप तामस है|*

है दान कर्तव्य इस भाव दे दान उचित पात्र जो जन |
निष्काम भाव किसी काल और थल वह सत वित्तदन ||१७-२०||

भावार्थ: *दान देना ही कर्तव्य है, ऐसे भाव से जो दान किसी भी थल तथा काल में उचित पात्र को निष्काम भाव से दिया जाता है, वह सत (सात्विक) दान है|*

दें दान युक्त क्लेश प्रत्युपकार पूर्ति मन्मन् |
हो लक्ष्य स्वार्थ है वह दान राजस हे प्रथानन्दन ||१७-२१||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो दान क्लेश पूर्वक, प्रत्युपकार, इच्छाओं की पूर्ति अथवा किसी स्वार्थ के लिए दिया जाता है, वह दान राजस है।*

दें बिन सत्कार युक्त तिरस्कार दान कुपात्र जन |
हो काल देश अनुचित समझो उसे तामस वित्तदन ||१७-२२||

भावार्थ: *बिना सत्कार तथा तिरस्कार पूर्वक अयोग्य देश, काल में कुपात्र के प्रति दिया गया दान तामस कहलाता है|*

ॐ तत सत नाम है त्रिप्रकार निर्देश श्री भगवन |
की उत्पत्ति आदि सृष्टि इन हरि वेद यज्ञ ब्राह्मन ||१७-२३||

भावार्थ: *ॐ, तत्, सत्, तीन प्रकार के नाम भगवान् का निर्देश है| इन भगवान् ने ही सृष्टि के आदि काल में ब्राह्मण, वेद तथा यज्ञ की रचना की|*

श्रेष्ठ जन करें नियत रूप तप क्रिया यज्ञ वित्तदन |
करें कार्य आरम्भ ॐ से करते हुए वेद अनुसरन ||१७-२४||

भावार्थ: *श्रेष्ठ पुरुष नियत यज्ञ, दान और तपरूप क्रियाएँ करें| 'ॐ' से कार्य आरम्भ करते हुए वेद का अनुसरण करें|*

समझ ईश्वर को तत हो निष्काम भाव रहित मन्मन् |
करें यज्ञ तप दान आदि शुभ कर्म हेतु निर्मोचन ||१७-२५||

भावार्थ: *ईश्वर को 'तत' समझते हुए मोक्ष के लिए निष्काम भाव से इच्छा रहित हो कर यज्ञ, तप, दान आदि शुभ कर्म करें|*

है नाम सत हरि अतः रख भाव सत्य श्रेष्ठ मन अर्जुन |
करें आरम्भ उत्तम कर्म सदा कर शब्द सत उच्चारन ||१७-२६||

भावार्थः *हे अर्जुन, सत भगवान् का नाम है| अतः मन में सत्य एवं श्रेष्ठ भाव से सभी उत्तम कार्य 'सत' शब्द के उच्चारण से आरम्भ करें|*

स्थिति यज्ञ तप दान की कहें वेद ग्रन्थ सत अर्जुन |
करें सत उच्चारण सदा जब करें निमित्त कर्म भगवन ||१७-२७||

भावार्थः *हे अर्जुन, यज्ञ, तप और दान की स्थिति वेद ग्रन्थ में सत्' कही जाती है| जब परमात्मा के लिए कर्म करें तब 'सत्' शब्द का उच्चारण करें|*

बिन श्रद्धा किए गए शुभ कर्म जैसे दान तप हवन |
हैं असत दें अशुभ फल इह और परलोक हे अर्जुन ||१७-२८||

ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन |
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन ||
श्री कृष्णार्जुन संवाद श्रद्धात्रयविभागयोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण सप्तदश अध्याय करे कल्याण जन ||

भावार्थः *हे अर्जुन, बिना श्रद्धा के किए शुभ कर्म जैसे हवन, दान और तप, 'असत्' हैं| वह इहलोक (भूलोक) एवं परलोक (मरणोपरांत स्वर्ग आदि लोक) में अशुभ फल देते हैं|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद् भगवद् गीता के श्रीकृष्ण-अर्जुन संवाद में श्रद्धात्रयविभागयोग नामक सत्रहवाँ अध्याय संपूर्ण हुआ|

अध्याय १८: मोक्षसंन्यासयोग:

अर्जुन उवाच
हे महाबाहो हे ऋषिकेश हे अन्तर्यामी बोले अर्जुन |
दो मुझे ज्ञान पृथक भाव तत्व संन्यास और यजन ||१८-१||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'हे महाबाहो, हे ऋषिकेश, हे अन्तर्यामी, मुझे संन्यास और त्याग के तत्व का पृथक ज्ञान दीजिए|'*

श्री भगवानुवाच
कुछ पण्डित कहें है संन्यास नाम त्याग काम्यकरन |
समझें कुछ कर्मफल त्याग ही है त्याग बोले भगवन ||१८-२||
कहें कुछ है कर्म दोषयुक्त अतः त्यागो इसे अर्जुन |
समझें कुछ है नहीं त्याज्य कर्म यज्ञ तप व् वित्तदन ||१८-३||

भावार्थ: *भगवान् बोले, 'कुछ पण्डित काम्य-कर्मों के त्याग को संन्यास कहते हैं| कुछ कर्मों के फल के त्याग को त्याग समझते हैं| हे अर्जुन, कुछ ऐसा कहते हैं कि कर्म दोषयुक्त है अतः इसका त्याग करो| कुछ समझते हैं कि यज्ञ, दान और तप कर्म त्यागने योग्य नहीं हैं|*

कहूँ विषय त्याग प्रथम मध्य त्याग व् सन्यास अर्जुन |
होता त्याग त्रिप्रकार सत रजस तमस अनुरूप मन ||१८-४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, संन्यास और त्याग, इन दोनों में से पहले त्याग के विषय में कहता हूँ| त्याग सात्त्विक, राजस और तामस, मन के भाव के अनुसार तीन प्रकार का होता है|*

तप यज्ञ दान हैं अति आवश्यक तीन कर्तव्य हेतु जन |
नहीं त्यागो यह त्रिकर्म करते यह हिय अति पावन ||१८-५||

भावार्थ: *यज्ञ, दान और तप प्राणियों के अति आवश्यक कर्तव्य हैं| इन तीनों कर्मों का त्याग नहीं करो| यह हृदय को पवित्र करने वाले हैं|*

करो यह त्रिकर्म व् अन्य कर्म रहित आसक्ति अर्जुन |
करो त्याग इच्छा है यह मेरा निश्चित उत्तम दर्शन ||१८-६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, इन त्रिकर्मों (यज्ञ, दान और तप) एवं अन्य (शुभ) कर्मों को आसक्ति त्याग कर करो| फल की इच्छा न करो| यह मेरा निश्चय किया हुआ उत्तम मत है|*

नहीं उचित करो त्याग तुम नियत कर्म हे अर्जुन |
करो त्याग यदि मोहवश इनको समझो तामस लक्षन ||१८-७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, नियत कर्म का त्याग करना उचित नहीं है| मोह के कारण इनका त्याग करना तामस प्रकृति का समझो|*

करो यदि त्याग नियत कर्म समझ भय दुःख कष्ट तन |
समझो इसे राजस त्याग जो देता नहीं फल पावन ||१८-८||

भावार्थ: *शारीरिक कष्ट, भय या दुःख के कारण यदि नियत कर्मों का त्याग करोगे तो इसे राजस त्याग समझो| इसका फल शुभ नहीं होता|*

कर्तव्य भाव से करो नियत कर्म तुम रहित फल मन्मन् |
किया रहित आसक्ति कर्म है त्याग सात्विक अर्जुन ||१८-९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, नियत (शास्त्रविहित) कर्म कर्तव्य भाव से आसक्ति और इच्छा के फल से रहित होकर करो| इसे सात्त्विक त्याग समझो|*

नहीं करे द्वेष कर्म अकुशल नहीं हो आसक्त पुण्यवन |
है वह त्यागी निःसंदेह स्थित स्वरुप प्रमत   भूजन ||१८-१०||

भावार्थ: *जो अकुशल कर्म से द्वेष नहीं करता और पुण्य में आसक्त नहीं होता वह प्राणी संशय-रहित, बुद्धिमान, त्यागी है एवं स्व-स्वरुप में स्थित है|*

नहीं संभव कर सके त्याग सब कर्म तन धारी जन |
अतः करे त्याग कर्म फल है वह त्यागी सत्य आत्मन् ||१८-११||

भावार्थः *शरीर धारी मनुष्य के लिए सब कर्मों का त्याग किया जाना संभव नहीं है, अतः जो कर्म फल का त्याग करे उसे ही सच्चा त्यागी समझो|*

पाएं फल त्रिप्रकार करें न त्याग जो कर्म फल जन |
मिले फल उन्हें इष्ट अनिष्ट मिश्रित पश्चात मरन ||
पर न मिले कोई फल करें जो कर्म फल त्याग अर्जुन ||१८-१२||

भावार्थः *हे अर्जुन, कर्म फल का त्याग न करने वाले मनुष्यों को मरण पश्चात अच्छा, बुरा और मिश्रित, तीन प्रकार का फल मिलता है किन्तु कर्म फल का त्याग कर देने वाले मनुष्यों को कर्मों का कोई फल नहीं मिलता|*

हैं पञ्च उपाय हेतु सिद्धि कर्म अनुरूप सांख्य मनन |
करें यह कैसे अंत कर्म कहूँ मैं विस्तार से युद्धिवन ||१८-१३||

भावार्थः *हे महाबाहो, कर्मों की सिद्धि के लिए सांख्य चिंतन (शास्त्र) के अनुसार पाँच उपाय हैं| यह कर्मों का अन्त कैसे करते हैं यह मैं विस्तारपूर्वक कहता हूँ|*

हेतु सिद्धि कर्म मनुज हैं पञ्च कारण इस भुवन |
अधिष्ठान कर्ता दैव चेष्टा और करण हे अर्जुन ||१८-१४||

भावार्थः हे अर्जुन, इस लोक में प्राणियों के कर्म की सिद्धि के लिए अधिष्ठान, कर्ता, दैव, करण एवं चेष्टा, यह पांच कारण समझो|

करें कर्म शास्त्रविधि या विपरीत निरत तन मन वचन |
बनें यह पञ्च कारण ही हेतु फल कर्म नर पृथानंदन ||१८-१५||

भावार्थः हे अर्जुन, मन, वाणी और शरीर के द्वारा शास्त्रानुकूल अथवा विपरीत जो कर्म किए जाते हैं उनमें यह पाँच कारण ही प्राणी के कर्म फल के हेतु बनते हैं|

हेतु अशुद्ध बुद्धि जो प्राणी समझे है कर्ता चेतन |
है वह मूढ़ मलिन नहीं हुआ उसे तत्व अवबोधन ||१८-१६||

भावार्थ: *जो मनुष्य अशुद्ध बुद्धि के कारण आत्मा को कर्ता समझता है वह मूढ़ मलिन है, उसे यथार्थ तत्व का ज्ञान नहीं हुआ|*

नहीं हो लिप्त बुद्धि जिसकी लौकिक कर्म अर्जुन |
रहता है भाव अकर्ता सदैव हृदय जिस भूजन ||
न मरे न बंधे अघ सम कर वध रण विपक्ष जन युद्धवन ||१८-१७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिस पुरुष में अकर्ता का भाव सदैव रहता है तथा जिसकी बुद्धि सांसारिक पदार्थों और कर्मों में लेपायमान नहीं है, वह न तो स्वयं मरता है, न युद्ध में प्रतिपक्ष योद्धाओं को मारकर पाप से बंधता है|*

समझो ज्ञान ज्ञेय और ज्ञाता भली भांति स्व-मन |
हैं यह निमित्त जो दें प्रेरणा हेतु कर्म अर्जुन ||
समझो कर्ता करण क्रिया निमित्त कर्म संकलन ||१८-१८||

भावार्थ: *हे अर्जुन, ज्ञान, ज्ञेय और ज्ञाता को अपने मन में भली भांति समझो| यह कर्म प्रेरणा देने वाले हैं| कर्ता, करण तथा क्रिया, यह कर्म संग्रह का कारण हैं|*

ज्ञान कर्म कर्ता त्रिप्रकार गुण भेद कहे विद्वज्जन |
है वर्णित जो तत्व सुनो मुझ से तुम अब अर्जुन ||१८-१९||

भावार्थ: *ज्ञान, कर्म और कर्ता, यह तीन प्रकार के गुण सब विद्वानों के द्वारा कहे गए हैं| जैसा तत्व वर्णित हैं, वह अब अर्जुन तुम मुझ से सुनो|*

है अविनाशी परमात्म-तत्व भाव का बोध जिन जन |
करें अनुभव समभाव सदा वह सत ज्ञानी अर्जुन ||१८-२०||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिन प्राणियों को अविनाशी परमात्म-तत्व भाव का ज्ञान है, वह सत ज्ञानी सदैव समभाव का अनुभव करते हैं|*

कर प्राप्त जिस ज्ञान करे अनुभव हैं भिन्न सब जन |
समझो देता यह ज्ञान राजस प्रवृत्ति साधक के मन ||१८-२१||

भावार्थ: *जिस ज्ञान की प्राप्ति से सम्पूर्ण प्राणियों में भिन्नता का अनुभव हो वह साधक के मन में राजस प्रवृत्ति देता हैं, ऐसा समझो|*

है जो ज्ञान मिथ्या तुच्छ युक्ति-रहित दे आसक्ति तन |
समझो है वह   ज्ञान त्याज्य दे तामस प्रवृत्ति जन ||१८-२२||

भावार्थ: *जो ज्ञान बिना युक्ति वाला, अवास्तविक और तुच्छ है, शरीर के प्रति आसक्ति देता है, उसे त्यागने योग्य समझो| वह प्राणियों में तामस प्रवृत्ति देता है|*

है जो कर्म नियत शास्त्रविधि युक्त भाव अकर्तापन |
रहित मद फलेच्छा राग द्वेष है वह सात्विक अर्जुन ||१८-२३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो कर्म शास्त्रविधि से नियत किया हुआ है तथा जिसमें कर्तापन का भाव नहीं है, अभिमान, फल इच्छा एवं राग द्वेष से रहित है, वह सात्त्विक है|*

इच्छा भोग युक्त मद और श्रम करता जो कर्म जन |
देता वह प्रवृत्ति राजस समझो भली भांति अर्जुन ||१८-२४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो कर्म भोगों की इच्छा हेतु अहंकार एवं परिश्रम से किया जाता है वह राजस प्रवृत्ति देता है, इसे भली भांति समझो|*

दे वह कर्म प्रवृत्ति तामस जो किया गया मूढ़ मन् |
युक्त फलेच्छा कपट हिंसा मोहवश और बिन चिंतन ||१८-२५||

भावार्थः *जो कर्म मूढ़ मन (बुद्धि), मोहवश, हिंसा, कपट, फलेच्छा और बिना सोच विचार के किया जाता है, वह तामस प्रवृत्ति देता है*|

रहित राग मद युक्त धैर्य उत्साह करे कर्म जो जन |
रहे सम सिद्धि असिद्धि समझो उसे सात्विक अर्जुन ||१८-२६||

भावार्थः *हे अर्जुन, जो प्राणी राग एवं अहंकार से रहित तथा धैर्य और उत्साह से युक्त कर्म करता है, सफल और असफल होने पर सम भाव रखता है, उसे सात्विक समझो*|

युक्त आसक्ति लोलुपता करे कर्म हेतु फल जो जन |
हो भाव अशुद्ध दे कष्ट अन्य है वह राजस कर्म अर्जुन ||
देता दुःखदायी फल करे यह लिप्त हर्ष शोक मन ||१८-२७||

भावार्थः *हे अर्जुन, जो प्राणी आसक्ति, लोभ और फल की चाह हेतु, अपवित्र भाव से दूसरों को कष्ट दे कर कर्म करता है, वह राजस कर्म है| यह दुःखदायी फल देता है जिससे मन हर्ष, शोक से लिप्त रहता है*|

अयुक्त धूर्त रहित-ज्ञान करे जो नष्ट अन्य आजीवन |
गर्भी आलसी अविवेकी दे शोक अन्य वह तामस जन ||१८-२८||

भावार्थः *जो अयुक्त (असावधान), अज्ञानी, धूर्त, दूसरों की जीविका को नष्ट करने वाला, घमंडी, आलसी, अविवेकी और दूसरों को शोक देने वाला है, वह प्राणी तामस है*|

गुण बुद्धि और धृति के हैं तीन भेद पृथानंदन |
करूँ मैं विवरण पृथक पृथक सुनो अब युद्धिवन ||१८-२९||

भावार्थः *हे अर्जुन, बुद्धि एवं धृति के गुणों के तीन भेद हैं| हे योद्धा, मैं उनका अब पृथक पृथक विवरण करता हूँ, सुनो*|

देती ज्ञान जो बुद्धि प्रवृत्ति निवृत्ति पथ मोक्ष बंधन |
भय अभय कर्म अकर्म समझो उसे तुम सत पावन ||१८-३०||

भावार्थ: *जो बुद्धि प्रवृत्ति और निवृत्ति मार्ग, बन्धन, मोक्ष, भय, अभय, कर्तव्य और अकर्तव्य का ज्ञान देती है, वह बुद्धि सात्त्विक एवं पवित्र है|*

नहीं समझे बुद्धि जो धर्म अधर्म कर्म अकर्म अर्जुन |
समझो है वह बुद्धि राजस दे आसक्ति भोग लौक्यन ||१८-३१||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो बुद्धि धर्म, अधर्म, कर्म, अकर्म को नहीं समझती, उसे राजस बुद्धि समझो| यह सांसारिक भोगों में आसक्ति देती है|*

अधर्म को धर्म समझ जो बुद्धि करे विपरीत करन |
है वह तामस बुद्धि घिरी हुई अवगुण हे अर्जुन ||१८-३२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो बुद्धि अधर्म को धर्म समझकर (शास्त्रों के) विपरीत कर्म करती है वह अवगुणों से घिरी बुद्धि तामसी है|*

युक्त समता अव्यभिचारणी धृति धारित करे जो जन |
रखे संयमित मन इन्द्रिय क्रिया वह सत धृति अर्जुन ||१८-३३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो प्राणी समता से युक्त अव्यभिचारिणी धृति को धारण करता है, मन, इन्द्रियों एवं क्रियाओं को संयमित रखता है, वह धृति सात्त्विकी है|*

फलेच्छा कर्म और आसक्ति काम धर्म धन जिन जन |
समझो उस धृति को राजसी धृति हे पृथानंदन ||१८-३४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिन प्राणियों की कर्म फल की इच्छा हो, धर्म, अर्थ और काम में आसक्ति हो, उस प्राणी की धृति को राजसी धृति समझो|*

न करे त्याग हेतु जिस धृति मद चिंता भय शयन |
देती वह दुःख समझो उसे तामसी धृति अर्जुन ||१८-३५||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिस धारण शक्ति के द्वारा मनुष्य निद्रा, भय, चिन्ता, और उन्मत्तता का त्याग न करे, वह दुःख देती है |उसे तामसी धृति (धारण शक्ति) समझो|*

कैसे मिले त्रिप्रकार सुख सुनो मेरे मुख भरत महन |
करके अभ्यास जिन हो अंत दुःख नाचे हृदय रमन ||१८-३६||
यद्यपि लगे सम विष प्रथम पर दे फल सम सुधा पावन |
है यह सत सुख प्रसाद जो करे उत्पन्न तत्व-भगवन ||१८-३७||

भावार्थ: *हे श्रेष्ठ भरत, मेरे मुख से सुनो कि तीन प्रकार के सुख कैसे प्राप्त हों जिनके अभ्यास करने से दुःख का अंत होता है और हृदय रमण करता है| आरम्भ में यद्यपि यह विष के तुल्य प्रतीत होते हैं परंतु परिणाम में पावन अमृत के तुल्य हैं| यह परमात्म-तत्व को उत्पन्न करने वाला सुख सात्त्विक प्रसाद है|*

हो उत्पन्न जो सुख हेतु विषय इन्द्रिय भोग भूजन |
दे प्रथम फल सम सुधा पर अंत सम राजस विषघ्न ||१८-३८||

भावार्थ: *जो सुख प्राणियों में विषय और इन्द्रियों के संयोग से उत्पन्न होता है, वह पहले अमृत के तुल्य प्रतीत होता है, पर उसका अंत विष तुल्य राजस है|*

हुआ उत्पन्न जो सुख हेतु निंद्रा आलस्य प्रमाद जन |
करे मोहित प्रथम पर दे फल वह तामस हे अर्जुन ||१८-३९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो सुख प्राणियों में निद्रा, आलस्य और प्रमाद से उत्पन्न होता है वह आरम्भ में मोहित करता है पर वह तामस फल देता है|*

है नहीं कोई सत्व भू नभ देवलोक या अन्य अध्यासन |
हो उत्पन्न प्रकृति रहित त्रिगुण जानो यह प्रचोदन ||१८-४०||

भावार्थ: *पृथ्वी, आकाश, देवलोक या किसी भी स्थान (लोक) में ऐसा कोई भी सत्त्व नहीं है जो प्रकृति से उत्पन्न इन तीनों गुणों से रहित हो, यह विधि नियम जानो|*

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र हुए स्व-कर्म उत्पन्न |
त्रिगुणों से किए शास्त्र ने विभक्त उनके जीवन ||१८-४१||

भावार्थ: *ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कर्मों के अनुसार उत्पन्न हुए| तीन गुणों (सत, रजस और तमस) से शास्त्रों ने उनका जीवन विभक्त किया है|*

सुनो अब ब्राह्मण के स्वाभाविक कर्म पृथानंदन |
हों जिसके वश विषय इन्द्रियाँ कर सके निग्रह मन ||
हो शुद्ध बाह्य भीतर धर्मशील सहे कष्ट धर्म पालन ||
करे क्षमा अपराध अन्य सदा और रखे सहज तन मन ||
हो ज्ञान वेद शास्त्र यज्ञविधि आस्तिक भाव भगवन ||
यह   ब्राह्मण कर्म स्वाभाविक   देते   भगवद दर्शन ||१८-४२||

भावार्थ: *हे अर्जुन, अब ब्राह्मण के स्वाभाविक कर्म सुनो| जिसके वश में विषय इन्द्रियाँ हों, मन को निग्रह कर सके, बाहर भीतर शुद्ध हो, धर्मशील हो एवं धर्म पालन के लिए कष्ट सहे, दूसरे प्राणियों के अपराधों को सदैव क्षमा करे, शरीर और मन में सहजता हो, वेद, शास्त्र, यज्ञविधि का ज्ञान हो, ईश्वर में श्रद्धा हो, यह ब्राह्मण के स्वाभाविक कर्म हैं जो प्रभु के दर्शन देते हैं (अर्थात परमात्म-तत्व की प्राप्ति कराते हैं)|*

जो शूरवीर युक्त तेज धैर्य दक्ष्य शासक   दानी जन |
हो आस्तिक न करे पलायन रण हैं कर्म क्षत्रिय लक्षन ||१८-४३||

भावार्थ: *जो प्राणी शूरवीर हो, तेज, धैर्य से युक्त हो एवं दक्ष्य शासक हो, दानी हो, युद्ध से पलायन न करे, आस्तिक हो, यह क्षत्रियों के स्वाभाविक कर्म हैं|*

है वैश्य कर्म करे कृषि सत क्रय विक्रय गौ पालन |
है स्वाभाविक कर्म शूद्र करे वह सेवा सभी भूजन ||१८-४४||

भावार्थ: *खेती, गौ-पालन और सत्य स्वरुप से क्रय-विक्रय, यह वैश्य कर्म हैं तथा सब प्राणियों की सेवा करना शूद्र का स्वाभाविक कर्म है|*

हो तत्पर स्वाभाविक कर्म पा सकें जन परम भगवन |
सुनो विधि पाएं कैसे परम सिद्धि चारों वर्ण जन ||१८-४५||

भावार्थ: *अपने स्वाभाविक कर्मों में तत्पर होने से परम प्रभु (परमात्म-तत्व) की प्राप्ति होती है| परम सिद्धि को चारों वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, विषय और शूद्र) के प्राणी कैसे प्राप्त करें, यह विधि सुनो|*

है व्याप्त सब विश्व हरि में की जिन्होंने उत्पत्ति जन |
करें प्राप्त परम पद कर स्व-कर्म और इनका पूजन ||१८-४६||

भावार्थ: *जिन परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति हुई है और जिनमें यह समस्त जगत व्याप्त है, अपने स्व-कर्म करते हुए उनका पूजन करने से परम सिद्धि की प्राप्ति होती है|*

है स्व-धर्म श्रेष्ठ यद्यपि हो गुण रहित हे अर्जुन |
निषेध करना परधर्म चाहे युक्त अति शुद्ध आचरन ||
नहीं पाता नर अघ कभी करे कर्म स्व-धर्म पालन ||१८-४७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, गुण रहित होते हुए भी अपना धर्म श्रेष्ठ है| चाहे अधिक शुद्ध आचरण वाला दूसरा धर्म हो, वह निषेध है| स्व-धर्म कर्म का पालन करने से मनुष्य कभी पाप को नहीं प्राप्त होता|*

न त्यागो कदापि सहज कर्म यदि दोष युक्त अर्जुन |
होते दोष युक्त सभी कर्म जैसे धूम अनल सलंग्न ||१८-४८||

भावार्थ: *हे अर्जुन, दोष युक्त होने पर भी सहज कर्म को नहीं त्यागना चाहिए| जैसे अग्नि से धुंआ युक्त है वैसे ही सभी कर्म दोष से युक्त होते हैं|*

अनासक्ति और निरीह बुद्धि से करे वश जो तन |
करे प्राप्त नैष्कर्म्यसिद्धि सांख्ययोग से वह जन ||१८-४९||

भावार्थ: *आसक्ति एवं स्पृहा से रहित बुद्धि से जिसने शरीर को वश में कर लिया है वह पुरुष सांख्ययोग से नैष्कर्म्यसिद्धि को प्राप्त करता है|*

पाई सिद्धि जिस जन है वह ज्ञान परा निष्ठा अर्जुन |
समझो कैसे कर सके प्राप्त ब्रह्म ज्ञान वह भूजन ||१८-५०||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जिस प्राणी ने सिद्धि प्राप्त कर ली वह ज्ञान की परा निष्ठा है| वह ब्रह्म ज्ञान को कैसे प्राप्त कर सकता है, यह समझो|*

तजे विषय शुद्ध बुद्धि से करे धैर्य पूर्ण जो नियमन |
कर त्याग शब्दादि विषय हो रहित राग द्वेष जन ||१८-५१||
एकांतिक नियमित भोजक जिसके वश तन मन वचन |
वैरागी आश्रित हरि हो निरंतर ध्यानयोग परायन ||१८-५२||
रहित अहंकार बल दर्प काम क्रोध परिग्रह जो जन |
रहित राग हो स्वभाव शांत पा सके वह ब्रह्म अर्जुन ||१८-५३||

भावार्थ: *हे अर्जुन, शुद्ध बुद्धि से युक्त, धैर्य पूर्वक विषय को त्याग कर नियमन करने वाला, शब्दादि विषयों का त्याग कर राग, द्वेष से रहित, एकांत वासी, नियमित भोजन करने वाला, शरीर, मन और वाणी को वश में रखने वाला, वैरागी, प्रभु के आश्रय में रहने वाला, निरंतर ध्यानयोग से परायण, अहंकार, बल, घमण्ड, काम, क्रोध और परिग्रह का त्याग करने वाला, ममता रहित और शान्ति युक्त पुरुष ब्रह्म की प्राप्ति कर सकता है|*

रहे प्रसन्न स्थित ब्रह्म रूप रहित शोक इच्छा अर्जुन |
रखे सदैव सम भाव पा सके वह पराभक्ति भगवन ||१८-५४||

भावार्थ: *हे अर्जुन, ब्रह्म रूप में स्थित और प्रसन्न रहे| न शोक करे, न इच्छा| समस्त प्राणियों में सम भाव रखे| वह भगवान् की पराभक्ति को प्राप्त कर सकता है|*

करें प्राप्त मेरा ज्ञान तत्व पराभक्ति से योगिगन |
जो सुभग जान सकें मेरा परम तत्व हे पृथानंदन ||
हों तत्काल प्रविष्ट मुझ में वह मेरे भक्त पावन ||१८-५५||

भावार्थः *हे अर्जुन, पराभक्ति से योगीगण मेरा तत्व ज्ञान प्राप्त करें| जो सौभाग्यशाली पवित्र भक्त मेरे परम तत्व को जान सकें, वह मुझ में तत्काल प्रविष्ट हो जाते हैं|*

ले आश्रय मेरा और करता हुआ सहज कर्म भूजन |
करे प्राप्त शाश्वत अव्यय पद मेरी कृपा से अर्जुन ||१८-५६||

भावार्थः *हे अर्जुन, मेरे परायण हुआ प्राणी स्वाभाविक कर्म करता हुआ मेरी कृपा से सनातन अविनाशी पद को प्राप्त हो जाता है|*

ले आश्रय समता का कर सब कर्म मुझ में अर्पन |
कर रमण चित्त मुझ में हो मेरे समर्पण पूर्ण अर्जुन ||१८-५७||

भावार्थः *हे अर्जुन, सब कर्मों का मन से मुझ को अर्पण कर, समता का आश्रय लेकर, अपने चित्त को निरंतर मुझ में रमण कर, मुझ में पूर्ण समर्पित हो जा|*

जब हो चित्त समर्पित मुझ में हेतु मेरे आशीर्वचन |
हो जाते दूर सब विघ्न अन्यथा होता मदवश पतन ||१८-५८||

भावार्थः *जब मुझ में चित्त समर्पित होता है तब मेरी कृपा से समस्त संकट दूर हो जाते हैं| अन्यथा अहंकार के वश होकर पतन होता है|*

ले आश्रय अहंकार तुम जो कर रहे निश्चय न करें रन |
यह निश्चय मिथ्य हो तुम क्षत्रिय तुम्हारा कर्म है प्रधन ||१८-५९||

भावार्थः *अहंकार का आश्रय लेकर जो तुम यह युद्ध न लड़ने का निश्चय कर रहे हो, वह निश्चय अनुचित है| तुम क्षत्रिय हो और युद्ध तुम्हारा धर्म है|*

प्रकृतिवश हो बंधे हुए तुम क्षत्रिय धर्म बंधन |
पर हो मोहवश सोच रहे तुम रण मध्य कुछ भिन्न ||
परवश हो स्वभाव क्षात्र करना पड़ेगा रण अर्जुन ||१८-६०||

भावार्थः *हे अर्जुन, प्रकृतिवश तुम क्षत्रिय धर्म बंधन में बंधे हुए हो| लेकिन मोहवश युद्ध के मध्य में तुम पृथक सोच रहे हो| क्षात्र स्वभाव से परवश हो तुम्हें युद्ध करना पड़ेगा|*

रहता ईश्वर सब के हृदय पर माया से भ्रमित जन |
करता रहता भ्रमण विभिन्न लोक योनि विभिन्न ||
भोगता रहता फल तदनुसार कर्म कुन्तीनन्दन ||१८-६१||

भावार्थः *हे कुन्तीनन्दन, ईश्वर सभी के हृदय में रहता है परन्तु प्राणी माया से भ्रमित होकर विभिन्न योनियों में विभिन्न लोकों में अपने कर्मों के फल के अनुसार भ्रमण करता रहता है|*

आओ शरण ईश्वर सर्व भाव भरतवंशी अर्जुन |
उनकी कृपा से पाओगे शाश्वत शांति पद पावन ||१८-६२||

भावार्थः *हे भारतवंशी अर्जुन, सब भाव से परमेश्वर की शरण में आओ| उनकी कृपा से पवित्र सनातन परम धाम को प्राप्त कर लोगे|*

है यह गुह्यतम ज्ञान जो मैंने दिया तुम्हें अर्जुन |
कर विचार यह भली भांति फिर करो तुम जो मन्मन् ||१८-६३||

भावार्थः *हे अर्जुन, यह अत्यंत गोपनीय ज्ञान मैंने तुम्हें दिया है| इस को भली भाँति विचारकर फिर जैसा तुम चाहते हो वैसा करो|*

सुनो मेरे अति गुह्यतम परम वचन हे कुन्तीनन्दन |
हो तुम मेरे परम मित्र कहूँ यह विशेष सुहित वचन ||१८-६४||

भावार्थ: *हे कुन्तीनन्दन, मेरे अत्यंत परम रहस्य युक्त वचन को सुनो| तुम मेरे परम मित्र हो इसलिए यह विशेष हितकारक वचन कह रहा हूँ|*

बन भक्त मेरा कर चित्त अर्पण कर मेरा ही भजन |
कहूँ सत्य हे अति प्रिय पाए मुझे कर मेरा नमन ||१८-६५||

भावार्थ: *मेरा भक्त होकर अपने मन को मुझे समर्पण कर मेरा ही पूजन करो| तुम मुझे अति प्रिय हो अतः सत्य कहता हूँ कि मुझे नमन (प्रणिपात) कर तुम मुझे पाओ|*

कर त्याग आश्रय सभी धर्म आओ तुम मेरी शरन |
मत करो चिंता करूं मैं मुक्त तुम्हें सब पाप अर्जुन ||१८-६६||

भावार्थ: *हे अर्जुन, सम्पूर्ण धर्मों के आश्रय का त्याग कर तुम केवल मेरी शरण में आ जाओ| चिंता नहीं करो, मैं तुम्हें सब पापों से मुक्त कर दूंगा|*

नहीं कहो कभी यह सर्वगुह्यतम वचन ऐसे भूजन |
जो हो तपहीन नास्तिक अशुद्ध और न चाहे श्रवन ||
अभक्त जो रखे दोष-दृष्टि मुझ में हे पृथानंदन ||१८-६७||

भावार्थ: *हे अर्जुन, इस अति गोपनीय वचन को तप से हीन, नास्तिक, अशुद्ध, अभक्त प्राणी जो सुनना न चाहे तथा मुझ में दोष-दृष्टि रखता हो, उससे कभी नहीं कहो|*

कर पराभक्ति कहे भक्त जो यह सर्वगुह्यतम वचन |
पाएगा वह मुझे करो नहीं संदेह इसमें युद्धिवन ||१८-६८||

भावार्थ: *हे योद्धा, जो भक्त परम भक्ति से इस परम गोपनीय वचनों को कहेगा वह मुझ को ही प्राप्त होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है|*

नहीं कोई प्रिय नर सम करे जो यह कार्य अर्जुन |
न होगा भविष्य भी प्रियतर कोई भू सम इस जन ||१८-६९||

भावार्थ: *हे अर्जुन, जो मेरा यह कार्य करेगा उसके समान प्रिय मुझे कोई नहीं है| पृथ्वी में उससे बढ़कर मेरा प्रिय दूसरा कोई भविष्य में भी नहीं होगा|*

हुआ मध्य हमारे धर्म संवाद करे जो इसका अध्ययन |
है मेरा मत करेगा वह भक्त ज्ञानयज्ञ से मेरा पूजन ||१८-७०||

भावार्थ: *जो हमारे मध्य इस धर्ममय संवाद का अध्ययन (पठन-पाठन) करेगा वह भक्त ज्ञानयज्ञ से मेरी पूजा करेगा, ऐसा मेरा मत है।*

युक्त श्रद्धा रहित दोष-दृष्टि सुने जो नर यह वचन |
हो मुक्त अघ पाए शुभ लोक मरण सम पुण्यकर्मी जन ||१८-७१||

भावार्थ: *जो मनुष्य श्रद्धा युक्त और दोष दृष्टि से रहित होकर इस वचन को श्रवण करेगा वह पापों से मुक्त होकर उत्तम कर्म करने वालों के श्रेष्ठ शुभ लोकों को प्राप्त होगा|*

सुने क्या तुम यह मेरे वचन हो एकाग्र मन अर्जुन |
हो गया क्या नष्ट मोह था हेतु जो अज्ञान उत्पन्न ||१८-७२||

भावार्थ: *हे पार्थ, क्या मेरे इन वचनों को तुमने एकाग्र चित्त से श्रवण किया? क्या अज्ञान जनित मोह नष्ट हो गया?*

अर्जुन उवाच

हो गया नष्ट मोह कृपा आपकी हरि बोले अर्जुन |
प्राप्त स्मृति हो रहित संदेह करूँ आज्ञा पालन ||१८-७३||

भावार्थ: *अर्जुन बोले, 'हे भगवन आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया| स्मृति प्राप्त कर संशय रहित हो मैं आज्ञा का पालन करने को तत्पर हूँ|*

संजय उवाच

बोले संजय सुना यह धर्म संवाद मैंने हे राजन |
है अद्भुत रोम हर्षण वाद मध्य कृष्ण और अर्जुन ||१८-७४||

भावार्थ: *संजय बोले, 'हे राजन, इस प्रकार मैंने भगवान् कृष्ण और अर्जुन के मध्य हुआ यह अद्भुत और रोमांचकारी धर्म संवाद सुना|'*

कृपा महर्षि व्यास सुना यह परम गुह्य आबोधन |
सुना रहे थे स्वयं जिसे साक्षात योगेश्वर हरि कृष्न ||१८-७५||

भावार्थ: *महर्षि व्यास की कृपा से यह परम गोपनीय ज्ञान सुना जिसे साक्षात योगेश्वर भगवान कृष्ण स्वयं सुना रहे थे|*

कर स्मरण पुनः पुनः संवाद हो रहा हर्षित मेरा मन |
मध्य कृष्ण और अर्जुन हुआ जो संवाद दिव्य पावन ||१८-७६||

भावार्थ: *कृष्ण और अर्जुन के मध्य इस अद्भुत और पवित्र संवाद को बार बार याद कर मेरा मन हर्षित होता है|*

हूँ मैं आश्चर्य चकित और अति प्रसन्न कर स्मरन |
पुनः पुनः अति अद्भुत विराट रूप कृष्ण भगवन ||१८-७७||

भावार्थ: *भगवान् कृष्ण के अत्यन्त विलक्षण विराट रूप को पुनः पुनः स्मरण कर मेरे चित्त में महान आश्चर्य और हर्ष हो रहा है|*

जहां योगेश्वर कृष्ण और गांडीवधारी अर्जुन |
वहीं श्री जय विभूति और अचल नीति कहे मेरा मन ||१८-७८||

ब्रह्मविद्या योगशास्त्रमय महाग्रंथ गीतबंधन ||
श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप ग्रन्थ अति पावन |
श्री कृष्णार्जुन संवाद मोक्षसंन्यासयोग नामन ||
हुआ अत्र सम्पूर्ण अष्टादश अध्याय करे कल्याण जन ||
हरिः ओं तत् सत् ॥

भावार्थः *जहां योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण और गाण्डीवधारी अर्जुन हैं, वहीं पर श्री, विजय, विभूति और अचल नीति है, ऐसा मेरा हृदय कहता है (अर्थात मेरा मत है)|*

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्र रूप श्रीमद्भगवद्गीता के श्री कृष्ण-अर्जुन संवाद में मोक्षसंन्यासयोग नामक अठारहवाँ अध्याय संपूर्ण हुआ| हरिः ओं तत् सत्|

आरती श्रीमद्भगवद्गीता

जय भगवद्गीते। जय माँ भगवद्गीते।
हरि-हिय-कमल-विहारिणि सुन्दर सुपुनीते॥
जय भगवद्गीते। जय माँ भगवद्गीते।
कर्म-सुमर्म-प्रकाशिनि कामासक्तिहरा।
तत्वज्ञान-विकाशिनि विद्या ब्रह्म परा॥
जय भगवद्गीते। जय माँ भगवद्गीते।
निश्चल-भक्ति-विधायिनि निर्मल मलहारी।
शरण-सहस्य-प्रदायिनि सब विधि सुखकारी॥
जय भगवद्गीते। जय माँ भगवद्गीते।
राग-द्वेष-विदारिणि कारिणि मोद सदा।
भव-भय-हारिणि तारिणि परमानन्दप्रदा॥
जय भगवद्गीते। जय माँ भगवद्गीते।
आसुर-भाव-विनाशिनि नाशिनि तम-रजनी।
दैवीय सद् गुणदायिनि हरि-रसिका सजनी॥
जय भगवद्गीते। जय माँ भगवद्गीते।
समता त्याग सिखावनि हरि-मुख की बानी।
सकल शास्त्र की स्वामिनी श्रुतियों की रानी॥
जय भगवद्गीते। जय माँ भगवद्गीते।
दया सुधा बरसावनि मातु कृपा कीजै।
हरि-पद- प्रेम दान कर अपनो कर लीजै॥
जय भगवद्गीते। जय माँ भगवद्गीते।
जय भगवद्गीते। जय माँ भगवद्गीते।
हरि हिय कमल विहारिणि सुन्दर सुपुनीते॥
जय भगवद्गीते। जय माँ भगवद्गीते।

कवि: डॉ यतेंद्र शर्मा

एक हिन्दू सनातन परिवार में जन्मे डॉ यतेंद्र शर्मा की रूचि बचपन से ही सनातन धर्म ग्रंथों का पठन पाठन एवं श्रवण में रही है। संस्कृत की प्रारम्भिक शिक्षा उन्होंने अपने पितामह श्री भगवान् दास जी एवं नरवर संस्कृत महाविद्यालय के प्राचार्य श्री सालिग्राम अग्निहोत्री जी से प्राप्त की और पांच वर्ष की आयु में महर्षि पाणिनि रचित संस्कृत व्याकरण कौमुदी को कंठस्थ किया। उन्होंने तकनीकी विश्वविद्यालय ग्राज़ ऑस्ट्रिया से रसायन तकनीकी में पी.अच्.डी की उपाधी विशिष्टता के साथ प्राप्त की। सन १९८९ से डॉ यतेंद्र शर्मा अपने परिवार सहित पर्थ ऑस्ट्रेलिया में निवास कर रहें हैं, तथा पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के खनन उद्योग में कार्य रत हैं।

सन २०१६ में उन्होंने अपने कुछ धार्मिक मित्रों के साथ एक धार्मिक संस्था 'श्री राम कथा संस्थान पर्थ' की स्थापना की। यह संस्था श्री भगवान् स्वामी रामानंद जी महाराज (१४वीं- १५वीं शताब्दी) की शिक्षाओं से प्रभावित है तथा समय समय पर गोस्वामी तुलसी दास जी रचित श्री राम चरित मानस एवं अन्य धार्मिक कथाओं का प्रवचन, सनातन धर्म के महान संतों, ऋषियों, माताओं का चरित्र वर्णन एवं धार्मिक कथाओं के संकलन में अपना योगदान करने का प्रयास करती है।

श्री राम कथा संस्थान पर्थ
३५ मायना रिट्रीट, हिलरीज़, ऑस्ट्रेलिया – ६०२५
Web https://shriramkatha.org
Email: srkperth@outlook.com